श्री वृहद् रत्नत्रय विधान

रचियता

आर्ष मार्ग संरक्षक, कविहृदय, प्रज्ञायोगी

दिगम्बर जैनाचार्य श्री गुप्तिनंदीजी गुरुदेव

सम्पादन

गणिनी आर्यिका राजश्री माताजी

प्रकाशक :

श्री धर्मतीर्थ प्रकाशन

श्री अतिशय क्षेत्र धर्मतीर्थ

धर्मतीर्थ क्षेत्र कचनेर के पास, औरंगाबाद (महाराष्ट्र)

Email : dharamrajshree@gmail.com

पुस्तक का नाम	:	श्री वृहद् रत्नत्रय विधान
आशीर्वाद	:	गणाधिपति गणधराचार्य श्री कुन्थुसागरजी गुरुदेव वैज्ञानिक धर्माचार्य श्री कनकनंदीजी गुरुदेव
रचनाकार	:	आर्षमार्ग संरक्षक प्रज्ञायोगी दिगम्बर जैनाचार्यश्री गुप्तिनंदीजी गुरुदेव
सहयोगी	:	आचार्यकल्प श्री कवीन्द्रनंदीजी मुनि श्री कुलपुत्रनंदीजी, मुनि श्री महिमासागरजी मुनि श्री सुयशगुप्तजी, मुनि श्री चन्द्रगुप्तजी
सम्पादन	:	गणिनी आर्यिका राजश्री माताजी
सहयोगी	:	गणिनी आर्यिका क्षमाश्री माताजी मुनि श्री विमलगुप्तजी, मुनि श्री विनयगुप्तजी ग. आर्यिका क्षमाश्री माताजी, ग. आर्यिका आस्थाश्री माताजी क्षुल्लक श्री धर्मगुप्तजी, क्षुल्लक श्री शांतिगुप्तजी क्षुल्लिका धन्यश्री माताजी, क्षुल्लिका तीर्थश्री माताजी ब्र. केशरबाई
सर्वाधिकार सुरक्षित	:	रचनाकाराधीन
प्रतियाँ	:	1100 संस्करण : तृतीय, वर्ष-2021
प्रकाशन	:	श्री धर्मतीर्थ प्रकाशन, धर्मतीर्थ क्षेत्र कचनेर के पास, औरंगाबाद (महाराष्ट्र) Email : dharamrajshree@gmail.com
प्राप्ति स्थानः		1. प्रज्ञायोगी दिगम्बर जैनाचार्य श्री गुप्तिनंदीजी गुरुदेव ससंघ 2. श्री धर्मतीर्थ, औरंगाबाद (महाराष्ट्र) 9421503332 3. श्री नितिन नखाते, नागपुर, 9422147288 4. श्री राजेश जैन (केबल वाले), नागपुर 9422816770 5. श्री रमणलाल साहू जी, औरंगाबाद मो. 9823182922 6. श्री सुबोध जैन, राधेपुरी, दिल्ली 9910582687
मुद्रक	:	राजू ग्राफिक आर्ट, जयपुर मो.नं. : 9829050791 E-mail : rajugraphicart@gmail.com

अनुक्रमणिका

क्र.	विषय	पृ.नं.
1.	तपस्वी सम्राट आचार्य सन्मतिसागरजी का आशीर्वाद	4
2.	ग.गणधराचार्य कुन्थुसागरजी व आचार्य कनकनन्दीजी का आशीर्वाद	5
3.	प्राक्कथन – आचार्य गुप्तिनंदीजी	6
4.	सम्पादकीय – गणिनी आर्यिका राजश्री माताजी	9
5.	विधान के लेखक – आर्यिका क्षमाश्री माताजी	15
6.	रत्नत्रय व्रत कथा (संस्कृत+भाषानुवाद)	17
7.	विनय पाठ	22
8.	पूजा प्रारम्भ	23
9.	श्री नित्यमह पूजा – गणिनी आर्यिका राजश्री माताजी	27
10.	श्री नवदेवता पूजा – गणिनी आर्यिका राजश्री माताजी	31
11.	श्री रत्नत्रय विधान समुच्चय पूजा	34
12.	श्री सम्यग्दर्शन पूजा	37
13.	श्री सम्यग्ज्ञान पूजा	52
14.	श्री सम्यग्चारित्र पूजा	68
15.	श्री त्रिकालवर्ती अरहंत परमेष्ठी पूजा	73
16.	श्री ढाई द्वीप संबंधी 170 कर्म भूमिस्थ तीर्थंकरों की पूजा	90
17.	श्री चौबीस तीर्थंकर के पंचकल्याणक की पूजा	123
18.	श्री सिद्ध परमेष्ठी पूजा	154
19.	श्री आचार्य परमेष्ठी पूजा	162
20.	श्री चौबीस तीर्थंकर के गणधरों की पूजा	172
21.	श्री उपाध्याय परमेष्ठी पूजा	179
22.	श्री सर्वसाधु परमेष्ठी पूजा	188
23.	श्री तीन कम नव कोटि मुनियों की पूजा	219
24.	श्री चौबीस तीर्थंकर की गणिनी प्रमुख सर्व आर्यिका पूजा –गणिनी आर्यिका राजश्री माताजी	225
25.	वृहद् जयमाला	235
26.	श्री दिव्यध्वनि पूजा	238
27.	विधान प्रशस्ति	242
28.	अर्घावली	244
29.	आचार्य श्री गुप्तिनंदीजी गुरुदेव की पूजा– गणिनी आर्यिका क्षमाश्री माताजी	245
30.	समुच्चय अर्घ	249
31.	शांति पाठ (हिन्दी), विसर्जन पाठ	250–251
32.	आरती	252
33.	साहित्य सूची	255–256

परम पूज्य प्रातः स्मरणीय विश्ववंद्य कलिकाल तीर्थंकर आचार्य श्री आदिसागरजी महामुनिराज 'अंकलीकर' के तृतीय पट्टाधीश परम पूज्य वात्सल्य रत्नाकर सिद्धान्त चक्रवर्ती तपस्वी सम्राट

आचार्य श्री सन्मतिसागरजी का

आशीर्वाद

20वीं शताब्दी में मूर्धन्य आचार्य आदिसागरजी अंकलीकर हुए जिन्होंने मगशिर शुक्ला 2 सन् 1913 को निर्वाण दीक्षा लेकर अनादि से चली आ रही तीर्थंकरों की वाणी का प्रचार-प्रसार श्रद्धात्मक ज्ञानात्मक एवं चारित्रात्मक रूप से किया है तथा श्रुतपंचमी सन् 1915 से चतुर्विध संघ का आचार्यत्व किया है एवं फागुन कृष्णा तेरस सन् 1944 को समाधि करके आदर्श हुए। आपके पट्टाधीश आचार्य महावीरकीर्तिजी ने अपने नामानुसार कार्य करके अपने गुरु की कीर्ति में चार चाँद लगाये। आपके शिष्य आचार्य विमलसागरजी ने ''आचार्य आदिसागरजी अंकलीकर' की परम्परा और 'आचार्य शान्तिसागर' दक्षिण की परम्परा निर्बाध चलती आ रही है'' इस संदेश से भव्य प्राणियों की मनोमालिन्यता को हटाकर श्रद्धा गुण को दृढ़ किया।

आचार्य गुप्तिनंदी इसी परम्परा के आचार्य कुंथुसागर के शिष्य हैं। आपका श्रद्धा ज्ञान चारित्र गुण अगाध है। आपके लिए आगम प्राण हैं। आचार्य गुप्तिनंदी प्रभावात्मक एवं मनोज्ञ आचार्य हैं। आपके ज्ञान से समाज ही नहीं बल्कि जैनेतर समाज भी लाभ लेती है तथा आपने धर्मोपदेश के साथ-साथ उसको लिपिबद्ध भी किया है। **काव्य पर आपका अच्छा अधिकार है।** आपकी कृतियाँ समाज में मौजूद हैं जिनसे वर्तमान पीढ़ी लाभान्वित हो रही है। प्रस्तुत कृति ''**श्री वृहद् रत्नत्रय विधान**'' है जो गृहस्थ को अपनी योग्यता के अनुसार करते रहना चाहिये। प्रत्येक प्राणी में रत्नत्रय प्रगट करने की योग्यता है। परन्तु उसे भव्य जीव ही प्राप्त कर पाता है, अभव्य जीव भी पुण्योपार्जन करके सांसारिक सुख अवश्य ही प्राप्त कर सकता है। इस विधान के माध्यम से भव्य और अभव्य दोनों को ही मनोवांछित लाभ पाने में सुगमता होगी। यह उनकी उनके ऊपर की गई अनुकंपा है जिसका कोई जवाब नहीं है। इस कृति का प्रकाशन होने से अधिकतर प्राणी लाभ लेंगे। अतः इसके प्रकाशन के लिए मेरा शुभाशीर्वाद है।

-आचार्य सन्मतिसागर

शुभ आशीर्वाद

मुझे अत्यन्त प्रसन्नता है कि मेरे शिष्य मुनि श्री गुप्तिनंदी को मैंने जिस वर्ष आचार्य पद प्रदान किया। उसी वर्ष उन्होंने इस पद की शान बढ़ाते हुए ''**श्री रत्नत्रय विधान**'' लेखन का कार्य पूर्ण कर आत्मोत्थान का मार्ग प्रशस्त कर सातिशय पुण्य प्राप्त किया है। यही पुण्य सोपान इन्हें मोक्ष महल पर ले जायेगा। आगमोक्त पद्धति से बना यह ग्रन्थ **आचार्य गुप्तिनंदीजी** की अनुपम कृति सिद्ध होगी और उनकी यशो पताका फहराती हुई युग युगान्तर तक भव्यों को रत्नत्रय प्रदान करती रहेगी यही शुभ कामना शुभ भावनामय आशीष व प्रतिनमोऽस्तु। इस ग्रंथ के द्रव्य दाताओं को आशीर्वाद। सहयोगियों को भी आशीर्वाद।

–गणाधिपति गणधराचार्य कुन्थुसागर

मंगल आशीष

जिसके माध्यम से पूजक, पूज्यता/श्रेष्ठता/महानता आध्यात्मिक उपलब्धि को प्राप्त करें अर्थात् पूज्य के गुणों को आत्मसात् करते–करते पूज्य बन जावे उसे पूजा कहते हैं। अतएव आचार्य उमास्वामी ने कहा है– ''वन्देतद्गुणलब्धये''। श्रावक अवलम्बन के लिए मन को पूज्य के गुणों के स्मरण में लगाने के लिये योग्य प्रतीकात्मक–स्वरूप बाह्य द्रव्यों का अवलम्बन लेने पर भी लक्ष्य पूज्यों के गुणों या निश्चय रूप से स्वशुद्ध आध्यात्मिक होता है। क्योंकि यह ही पूजक का ध्येय/प्रेय/श्रेय होता है।

उपर्युक्त उद्देश्य को चरितार्थ करने के लिए मेरे शिष्य व साधर्मी, युवा उदीयमान कवि **आचार्य गुप्तिनंदीजी** ने ''**श्री रत्नत्रय विधान**'' की रचना की है। इनकी अनुपम कृति रत्नत्रय पथगामियों के हेतु पथ प्रदर्शन व पुण्यार्जन कराने में कार्यकारी सिद्ध होगी। इनका यह ग्रंथ आध्यात्म अमृत स्रोत को काव्यमय सरिता से प्रवाहित करके भव्य जनों को अजर–अमर पद प्रदाता बनेगा। आप सदैव रत्नत्रय के मार्ग पर स्वयं बढ़े औरों को बढ़ायें अपनी कीर्ति का ध्वज फहराते हुए आप विश्व विजयी बनें। आपकी प्रज्ञा लेखनी उत्तरोत्तर श्रेष्ठ से श्रेष्ठतम बने ऐसी मेरी मंगल कामना है। इसकी संपादिका मेरी शिष्या **गणिनी आर्यिका राजश्री** को मेरा शुभाशीर्वाद। लेखन सहयोगियों को आशीर्वाद तथा द्रव्य बिना ग्रंथ का प्रचार व लाभ मिलना असंभव है अतएव द्रव्य दाताओं को विशेष आशीर्वाद।

इस विधान का सदुपयोग करके सर्वजीव सत्य, साम्य, सुख प्राप्त करें ऐसी महती भावना के साथ।

– वैज्ञानिक धर्माचार्य कनकनंदी

प्राक्कथन

सद्दृष्टि ज्ञानवृत्तानि, धर्मं धर्मेश्वर विदुः।
यदीय प्रत्यनीकानि, भवंति भवपद्धतिः॥3॥
(रत्नकरण्ड श्रावकाचार)

धर्म के ज्ञाता जिनेन्द्र भगवान ने सम्यग्दर्शन–सम्यग्ज्ञान और सम्यग्चारित्र को ही धर्म कहा है। इसके विपरीत मिथ्यादर्शन, मिथ्याज्ञान, मिथ्याचारित्र को संसार का कारण बताया है।

रत्नत्रय मार्ग जिनशासन में एक मात्र मोक्ष मार्ग है। इसे धारण किये बिना कोई भी प्राणी कर्म बंधनों से मुक्त नहीं हो सकता। चाहे श्रावक हो या श्रमण अथवा तीर्थंकर भी क्यों ना हो। उन्हें भी अखण्ड, आत्मज्ञान की प्राप्ति हेतु रत्नत्रय ग्रहण करना, उसकी साधना करना अनिवार्य है। अतः सभी जिन धर्मानुरागी ही श्रद्धाभाव से रत्नत्रय व्रत करते हैं। विशेषकर सम्पूर्ण भारत में किशोर तथा युवावय में पर्युषण पर्व के अंत में तेला किया जाता है। इस प्रकार व्रत तो सभी करते हैं। परन्तु व्रत के समय क्या करना? उसका उद्यापन कैसे करना? इस व्रत का क्या महत्त्व है? इत्यादि विषयों को नहीं जानते। साथ ही इस व्रत का विधान भी बहुत ही लघुकाय में हैं। रत्नत्रय की विशालता के समक्ष इस लघु विधान को देखकर मुझे सदा से ही आत्म संतुष्टि नहीं हुई। मन में सदा यह विकल्प रहा कि हमारे पूर्ववर्ती आचार्यों, कवियों ने, कल्पद्रुम, इन्द्रध्वज, सिद्धचक्र, सर्वतोभद्र, चौंसठ ऋद्धि, गणधर वलय आदि विधान तो बड़े भव्य रूप में लिखे किन्तु ''**श्री रत्नत्रय विधान**'' पर अपनी लेखनी क्यों नहीं चलायी? जबकि रत्नत्रय व्रत के करने से वर्तमान चौबीसी के उन्नीसवें तीर्थंकर मल्लिनाथ भगवान ने तीर्थंकर पद पाया। यह विचार भी उठा कि आचार्यों ने तो अवश्य इस व्रत पर विशालकाय विधान लिखा होगा परन्तु सम्भवतः कालदोष के प्रभाव से या हमारे मंद भाग्य से यह विधान वर्तमान में अप्राप्य हो गया हो। इस विचार मंथन के बीच सन् 1997 में सागवाड़ा (राजस्थान) में परम पूज्य सिद्धांत चक्रवर्ती, अभीक्ष्ण ज्ञानोपयोगी वैज्ञानिक धर्माचार्य श्री कनकनंदीजी गुरुदेव के चरण सान्निध्य में सातवाँ वर्षायोग हुआ।

इस वर्षायोग की कार्तिक अष्टाह्निका में कल्पद्रुम विधान का भव्यतम आयोजन हुआ, जिसने पूरे वागड़ प्रान्त को भक्ति रस में सराबोर कर दिया उस भक्ति भाव की

धारा में मेरे भी विधान सृजन के भाव हुए। तभी गणिनी आर्यिका राजश्री माताजी ने मुझे ''**श्री रत्नत्रय विधान**'' की लघु प्रति स्वाध्यायार्थ दी एवं शिक्षा गुरु आचार्य भगवंत श्री कनकनंदीजी गुरुदेव ने मेरी योग्यता को जानकर मुझे वृहत् रत्नत्रय विधान लिखने की प्रेरणा दी। उनके आशीर्वाद से उनके ही सान्निध्य मार्गदर्शन में मैंने 1 फरवरी, 1998, बसंत पंचमी को ''**श्री रत्नत्रय विधान**'' का मंगलाचरण किया। इसी वर्ष गणिनी आर्यिका राजश्री माताजी ने वृहद् गणधर वलय महामंडल विधान का लेखन प्रारम्भ कर दिया।

जो वर्तमान युग की प्राथमिक आवश्यकता सिद्ध हुआ। मेरे अत्यन्त पुण्ययोग से मुझे उस विधान के सम्पादन करने का सौभाग्य मिला। जिसका विशालतम आयोजन बड़नगर (उज्जैन) व इन्दौरादिक में हुआ। गणधर वलय विधान के अतिशायी लाभ से अनेक लोग लाभान्वित हुए। इस कारण एक वर्ष से कम समय की अवधि में ही उसका द्वितीय संस्करण दूनी संख्या में दूने उत्साह से दातारों ने प्रकाशित कराया। तब तक ''**श्री रत्नत्रय विधान**'' का लेखन भी पूर्णता तक आ गया। सन्-2000 के इन्दौर वर्षायोग में तिलक नगर में आयोजित विशाल गणधर वलय मंडल विधान में अपार जनसमुदाय के बीच गणिनी आर्यिका राजश्री माताजी ने ''**श्री रत्नत्रय विधान**'' का महत्त्व बताया तब सरस्वती सुता, माताजी के प्रवचन पूर्ण होते ही अनेक दातार स्वयं प्रकाशन हेतु आगे आ गये। यह गणधर वलय विधान का ही अतिशय माना जायेगा। **गणिनी आर्यिका राजश्री माताजी** की रस, छन्द, आगम सिद्धान्त व काव्य संबंधी प्रवीणता को देखकर गुर्वाज्ञा से मैंने सम्पादन का दायित्व उन्हें सौंप दिया तथा उन्होंने अपने कर्त्तव्य का पूर्णतः पालन किया उनकी मेहनत प्रतिभा अतिशीघ्र उनके रत्नत्रय की पूर्णता में उपयोगी भूमिका निभावें ऐसा उन्हें शुभाशीर्वाद है। **आचार्यकल्प श्री कविन्द्रनंदीजी** ने इसका प्रूफ संशोधन करके अपने रत्नत्रय कोष की वृद्धि की है। उन्हें मेरा प्रति नमोऽस्तु ! गणिनी माताजी की आज्ञानुवर्तिनी शिष्या, आर्यिका क्षमाश्री माताजी ने अपना श्लाघनीय सहयोग दिया व आर्यिका आस्थाश्री माताजी ने भी प्रतिलिपि लेखन में सहयोग देकर दोनों ने रत्नत्रय निधि का संचय किया है। वे भी इसके फलस्वरूप, रत्नत्रय की पूर्णता का फल पावे यही शुभाशीर्वाद है। इस विधान के प्रकाशन में अपनी चंचला लक्ष्मी का सदुपयोग करने वाले दातारों को भी रत्नत्रय लाभ का आशीर्वाद है।

पूज्य आचार्य भगवंत श्री महावीरकीर्तिजी गुरुदेव के मनोज्ञ शिष्य मेरे दीक्षा प्रदाता **गणाधिपति गणधराचार्य श्री कुन्थुसागरजी गुरुदेव** एवं शिक्षा गुरु सिद्धांत चक्रवर्ती **आचार्यरत्न श्री कनकनंदीजी गुरुदेव** इन युगल महापुरुष के आशीर्वाद से ही सृजन पुरुषार्थ की सामर्थ्य मुझे प्राप्त हुई साथ ही आदिगुरु आचार्य श्री आदिसागरजी महाराज के तृतीय पट्टाधीश **तपस्वी सम्राट आचार्य श्री सन्मतिसागरजी गुरुदेव** ने भी मुझे शुभाशीष देखकर मेरा उत्साहवर्द्धन किया। अतः उन सभी महापुरुषों के चरण युगल में त्रय भक्तिपूर्वक कोटिशः नमोस्तु चौदह सौ बावन गणधर गुरुओं की भी मुझ पर असीम कृपा है कि जिनकी विशाल भव्यतम अर्चना करने से मेरे लेखन कार्य को गति मिली। उनके साक्षात् दर्शन पाने को भावना से मैं उन्हें बारम्बार दश भक्ति पूर्वक नमन करता हूँ। जिनागम के मूल ग्रंथकर्त्ता श्री तीर्थंकर देव, संघ के **मूलनायक श्री शांतिनाथ भगवान**, उत्तर ग्रंथ कर्त्ता गणधर देव, प्रतिगणधर देव, परम्पराचार्य भगवंतों की भी वन्दना करता हूँ।

इस ग्रंथ के द्वितीय संस्करण में आचार्य श्री वरदत्तसागरजी के शिष्य मुनि श्री महिमासागरजी, हमारे शिष्य मुनि श्री सुयशगुप्तजी, मुनि श्री चन्द्रगुप्तजी व आर्यिका आस्थाश्री माताजी ने संशोधन में विशेष सहयोग देकर ग्रन्थ को सुन्दर बनाया है एतदर्थ उन्हें यथायोग्य प्रतिनमोऽस्तु व समाधिरस्तु आशीर्वाद।

इस पंच परमेष्ठी, महापुरुष की अनुकंपा से ही इस भक्ति काव्य की रचना हो पायी है। अतः ग्रंथ की सभी अच्छाईयाँ उनकी मानें तथा मैं छन्द, शास्त्र, अलंकार, व्याकरण आदि आगम के ज्ञान से अनभिज्ञ, अल्पज्ञ, छद्मस्थ, निर्ग्रंथ साधक हूँ। निज यथाख्यात रत्नत्रय की प्राप्ति हेतु तथा सम्पूर्ण क्लेश, प्रमाद के विसर्जन हेतु ही इस सृजन कार्य में मैंने अपने चित्त को स्थिर किया है। अतः साधक वर्ग दोष को सुधार कर पढ़े तथा हमें अवगत करायें, जिससे आगमोक्त विचार मंथन पूर्वक संशोधन किया जा सके। माता जिनवाणी की सेवा के फलस्वरूप अतिशीघ्र यथाख्यात चारित्र के लाभ की कामना सहित यही विराम।

इति अलम् !

-आचार्य गुप्तिनंदी

सम्पादकीय

रत्नत्रय स्वरूप गुणमंडित वीतरागी सर्वज्ञ, हितोपदेशी अर्हत् भगवान् एवं ज्ञाता दृष्टा सिद्ध भगवान, रत्नत्रय अमृत का रसास्वादन करने वाले साक्षात् भगवन्त रूप श्रमण नायक आचार्य परमेष्ठी, ज्ञानमूर्ति उपाध्याय परमेष्ठी तथा भेद विज्ञानी साधु परमेष्ठी को रत्नत्रय की प्राप्ति हेतु नमन्/नमोऽस्तु/प्रणाम चरण स्पर्श/वंदना/नमस्कार, महाव्रती/उपचार महाव्रत की धारी आर्यिकाश्री के चरणों में इसकार्य सिद्धि हेतु वंदामि करती हूँ।

प्रकाण्ड सिद्धांत ज्ञाता आचार्य श्री उमास्वामी गुरुदेव ने मोक्षमार्ग प्रशस्त करने के लिए तत्त्वार्थ सूत्र ग्रंथ में सूत्र दिया–

''सम्यक्दर्शन ज्ञान चारित्राणि मोक्षमार्गः'' (प्र.अ.सू.1)

सम्यक्दर्शन, सम्यक्ज्ञान और सम्यक्चारित्र मोक्षमार्ग है।

मोक्षमार्ग की प्राप्ति इन तीनों के संयोग से होती है। मात्र सम्यक्दर्शन या मात्र सम्यक्ज्ञान या मात्र सम्यक्चारित्र से मोक्षमार्ग प्रशस्त नहीं हो सकता है। जिस प्रकार अजवाइन का फूल पिपरमेंट और कपूर इन तीनों के संयोग से अमृतधारा स्वयमेव ही बन जाती है। उसी तरह सम्यग्दर्शन ज्ञान चारित्र के मिलन से स्वयमेव ही मोक्षमार्ग बन जाता है। एक के बिना दूसरा अधूरा है।

अर्थात् इन तीनों में से एक का भी अभाव होने पर मोक्षमार्ग नहीं बन सकता है। आचार्य भगवंत कुंदकुंद स्वामी ने षट् प्राभृत ग्रंथ में कहा है–

दंसण भट्ठा भट्ठा दंसण भट्ठस्स णत्थि णिव्वाणं।
सिज्झंति चरिय भट्ठा दंसण भट्ठा ण सिज्झंति॥

जो दर्शन से भ्रष्ट होता है; वही महाभ्रष्ट है। दर्शन से भ्रष्ट निर्वाण को प्राप्त नहीं कर सकता है। चारित्र से भ्रष्ट–सिद्धत्व को प्राप्त कर सकता है परन्तु दर्शन से भ्रष्ट निर्वाण को प्राप्त नहीं कर सकता है।

इस गाथा के माध्यम से आचार्यश्री ने यह स्पष्टीकरण कर दिया है कि मात्र चारित्र से भ्रष्ट होने पर यदि उसके पास सम्यक् दर्शन है तो वह पुनः

उत्कृष्ट चारित्र को धारण कर सिद्धत्व को प्राप्त कर लेगा। परन्तु यदि वह बाह्य चारित्र को धारण करके सम्यग्दर्शन से भ्रष्ट है तो वह सिद्धि को प्राप्त नहीं कर सकता है। अतः पहले सम्यग्दर्शन को संभाल कर रखो उसकी वृद्धि हेतु प्रयत्नपूर्वक प्रयास करते रहो क्योंकि इसके साथ होने वाला ज्ञान सम्यक्ज्ञान होगा और उस रूप आचारण सम्यक्चारित्र होगा। इसलिये–

तत्त्वार्थ श्रद्धानं सम्यग्दर्शनं।
तत्त्वार्थज्ञानं सम्यग्ज्ञानं।
तत्त्वार्थाचरणं सम्यक्चारित्रं।

अर्थात् तत्त्वार्थश्रद्धान ज्ञानाचरणं मोक्षमार्गं।

आरातीय आचार्यों से लेकर अर्वाचीन सभी आचार्यों ने अपने–अपने ग्रंथों में रत्नत्रय की प्राप्ति हेतु रत्नत्रय की महिमा का गुणगान किया है। इसी श्रृंखला में प्रज्ञायोगी कवि हृदय बालयोगी **''आचार्य श्री गुप्तिनंदी गुरुदेव''** ने रत्नत्रय की पूर्णता की भावना लेकर भक्तियोग में तल्लीन होकर **''श्री रत्नत्रय विधान''** की रचना की। इस कृति के पूर्व इस विधान को मोहनलालजी शास्त्री 'काव्य तीर्थ' के लेखनानुसार कविवर टेकचन्दजी द्वारा लिखा गया है।

इस व्रत की विधि इस प्रकार है–

यह व्रत भाद्रपद–माघ और चैत्र मास में तेरस, चौदस और पूनम के तीन दिनों में किया जाता है। बारस को धारणा और प्रतिपदा को पारणा की जाती है। यथाशक्ति तीन उपवास, 2 उपवास या 1 उपवास करें। अथवा 1 उपवास, 2 एकाशन या 3 एकाशन करें। यह व्रत उत्कृष्ट से 13 वर्ष, मध्यम रीति से 9 वर्ष और जघन्य रीति से 5 या 3 वर्ष किया जाता है। व्रत पूर्ण होने पर चार प्रकार का दान देवें तथा प्रभावना पूर्वक विधान कर उद्यापन करें। यदि शक्ति न हो तो व्रत दुगुना करना चाहिए।

गणाधिपति गणधराचार्य श्री कुन्थुसागरजी गुरुदेव के अनुवर्ती शिष्य तथा शिक्षागुरु सिद्धान्त चक्रवर्ती वैज्ञानिक धर्माचार्य श्री कनकनंदीजी गुरुदेव के योग्य शिष्य **आचार्य श्री गुप्तिनंदीजी गुरुदेव में काव्य रचना करने की प्रबुद्ध कला** अन्तस प्रेरणा से बाल्यकाल से है। समयानुसार गुरु प्रेरणा, गुरु आशीष तथा

साधर्मियों के उत्साह ने इस कला में और भी प्रौढ़ता का संचार कर दिया। इनके द्वारा बनाई अनेक पूजायें देव-शास्त्र-गुरु पूजा, श्री पद्मप्रभु पूजा, श्री चन्द्रप्रभु पूजा, श्री मुनिसुव्रत पूजा, श्री पार्श्वनाथ पूजा, श्री महावीर पूजा, श्री रविव्रत पूजा, श्री सरस्वती पूजा, श्री श्रुतपंचमी पूजा, श्री वीरशासन जयंती पूजा, श्री सोलहकारण पूजा, श्री कनकनंदी गुरुदेव की पूजा आदि अनेक पूजायें **''श्री रत्नत्रय आराधना''** नामक कृति में प्रकाशित हो चुकी है।

इसके साथ ही अनेक विधान, भजन, आरती तथा **''सावधान''** नामक क्रांतिकारी काव्य संग्रह इनकी प्रौढ़ता विद्वत्ता तथा मानव के हृदय पटल को झकझोरने का परिचय देता है।

प्रस्तुत कृति में कुल 917 अर्घ हैं। सरल रीति से जनोपयोगी बनाने हेतु इसमें लोक प्रचलित 20 छन्दों में इसे निबद्ध किया गया है। आर्ष परम्परानुसार इस विधान के भी 3 खण्ड हैं। प्रथम खण्ड में सम्यग्दर्शन के भेद-प्रभेद इसके अंग गुण व सम्यक्त्व के महत्त्व को प्रतिपादित करते हुए लगभग 69 अर्घ हैं व कुछ पूर्णार्घ हैं। द्वितीय खण्ड में सम्यग्ज्ञानाधिकार के अन्तर्गत ज्ञान के भेद-प्रभेद सहित पंचविध ज्ञान को परिभाषित करते हुए द्वादशांग, दिव्यध्वनि केवलज्ञान आदि के 75 अर्घ हैं। सम्यग्चारित्राधिकार नामक तृतीय खंड कुछ अधिक विस्तृत है। इसमें सम्यग्चारित्र एवं उसके धारक अरिहंत, सिद्ध, आचार्य, गणधर, उपाध्याय, साधु व प्रमुख गणिनी आर्यिका माताओं के अर्घ सहित लगभग 747 अर्घ व कुछ पूर्णार्घ हैं। अंत में बड़ी जयमाला के बाद विधान प्रशस्ति में अपनी गुर्वावली सहित विधान के प्रारम्भ व समापन काल संबंधी विस्तार से वर्णन है।

कृतिकार ने अपनी सृजन साधना में अनेक रस व अलंकारों का प्रयोग करते हुए विधान को सुरम्य काव्य का रूप दिया है। अनेक स्थानों में अनेक छन्दों में रस अलंकार से परिपूर्ण काव्य की बड़ी सुन्दर अभिव्यक्ति हुई है यथा-

षट् ऋतुओं के फलफूल खिले इक साथ प्रभु के अतिशय से।
मानों प्रभु भक्ति में तत्पर षट् ऋतुएँ झूमें अनुनय से॥3॥

(देवकृत अतिशय)

भगवान् के छयालीस मूलगुणों का वर्णन करते हुए भगवान् के गंधोदक को बहुत सुन्दर ढंग से महिमा मंडित किया है-

जिन शासन के चहुँदिश में जब होती है गंधोदक वर्षा।
तब नभ तल में सुर नर नाचें जय घोष करें हर्षा-हर्षा॥

वही देवकृत 13वें अतिशय में धर्म चक्र का स्वरूप तथा उसका महत्त्वपूर्ण प्रभाव का वर्णन अवलोकनीय है :-

यक्षेन्द्र शीश पर धर्म चक्र चलता है जिनवर के आगे।
उसकी शुभ किरणों को लखकर भव्यों का पाप तिमिर भागे॥

चौंसठ चमरों के बीच प्रभु का निराला रूप भी मनोरम है-

चमरोज्ज्वल ढोरें सुरगण जब तीनों लोकों का मन मोहे।
जैसे निर्मल झरना झरता, उसमें प्रभु का आनन सोहे॥

170 कर्मभूमिस्थ तीर्थंकरों के अर्घ में पशुओं में भी जिनभक्ति का मनोहर वर्णन है-

नगर 'कच्छकावती' निराला जहाँ अप्सरा नाचें।
जिन शासन की भक्ति करने भरते हरिण कुलाचें॥6॥

विदेह क्षेत्र की कर्मभूमियों की सभ्यता संस्कृति का सजीव चित्रण यहाँ झलकता है।

''रम्या'' रम्य कुलाचल वन से श्रमणी गण से सुन्दर।
जहाँ गगन चुम्बी अघहारी अतिशायी जिन मन्दिर॥

आर्यिका माताजी के लिए भी-

''नलिना वती'' की आर्यिका निर्मल महाव्रत पालती।
निज नैन शिवपथ से लगा श्रुतज्ञान को विस्तारती॥

इस तरह आचार्यश्री ने अपनी अनुपम लेखनी के द्वारा अनेक स्थानों पर ऐसा सजीव चित्रण खींचा है जो मूक भाषा में ही वहाँ की सभ्यता-संस्कृति, भूगोल, प्रकृति तथा अतिशय आदि का सांगोपांग वर्णन करती है। जिस तरह साधु की मौन मुद्रा ही उनके स्वरूप का वर्णन करती है। वैसे ही आपश्री की

लेखनी में शब्द संयोजना, शब्द चयन, परिस्थिति को जीवित या बोलती हुई सिद्ध करती है। यहाँ पर मैंने विस्तार के भय से कुछ ही उदाहरण प्रस्तुत किये हैं पर ऐसे अनेक उदाहरण इसमें हैं जो आनंद का अनुभव कराते हैं इसका अनुभव का सुअवसर जब आप प्राप्त करोगे तब स्वयं ही होगा।

मुझे अत्यन्त प्रसन्नता है कि मेरे अनुरोध पर गुरुदेव ने 'गणधर वलय विधान' परिमार्जित करके सम्पादन का महान् कार्यभार अपने कंधे पर लिया। **''श्री रत्नत्रय विधान''** की रचना प्रारम्भ करने के बाद भी पुण्यार्जन करने के लिए अपना समय निकाल कर गणधर वलय विधान का कार्य करना अपने आप में भक्ति रस का परिचायक है। भक्ति में स्व-पर का भेद भाव नहीं होता। मात्र जिनेन्द्र देव के गुणानुवाद के अलावा अन्य सब पर लगता है। स्व-लेखनी छोड़कर मात्र भक्ति भावना से सम्पादन करना अपने आप में आदर्श/कर्त्तव्य की शिक्षा देता है।

'गणधर वलय विधान' के प्रकाशन के पश्चात् मेरे मन में हमेशा यही उत्कण्ठा बनी रहती थी कि आचार्यश्री का सृजन कार्य भी शीघ्र पूरा हो जाये। परन्तु कर्म वशात् इस कार्य में व्यवधान पड़ गया जिससे इसके प्रकाशन में विलम्बता आई।

हर विधान व्रत पूर्वक होता है तथा व्रत करने के बाद विधान किया जाता है। इसी बात को आगमोक्त जानकर आचार्यश्री ने रत्नत्रय का चयन किया। यह व्रत व्रतों का राजा है क्योंकि रत्नत्रय बिना मुक्ति संभव नहीं। इस उद्देश्य से इस व्रत के विधान की विस्तार से रचना की। भक्तगण इस विधान को कम से कम 5 से 8 दिन का करके धर्म की महती प्रभावना करें।

इस विधान के गुणगान करने की इतनी शक्ति मेरी लेखनी में नहीं है फिर भी शक्ति-भक्ति के अनुसार कुछ अल्प परिश्रम करके मैंने इसका सम्पादन कार्य गुरु आशीष से पूर्ण किया है। सम्पादन कार्य के अन्तर्गत मैं स्वयं कभी-कभी इतनी भाव-विभोर हो जाती थी और ऐसा प्रतीत होता था कि मैं विदेह क्षेत्र में साक्षात् भगवान के समोशरण में बैठी हूँ और प्रभु दर्शन पा रही हूँ। पंचकल्याण की जयमाला पढ़ते समय भगवान के पंचकल्याणक का सम्पूर्ण दृश्य चलचित्र की तरह हृदय पर

अंकित होता जाता है। यह कार्य मैंने स्वयं के पुण्यवर्धन तथा रत्नत्रय भाव वर्धन के लिए किया है। इसके प्रतिफल में मुझे जब तक मुक्ति की प्राप्ति न हो तब तक रत्नत्रय भाव से मैं ओतप्रोत रहूँ। अपनी छद्मस्थ बुद्धि अनुसार हम सभी ने यथाशक्ति पुरुषार्थ किया है। फिर भी त्रुटियाँ होना संभावित है। ज्ञानीजनों के समक्ष यह मेरा तुच्छ व प्रथम प्रयास है इसमें जो भी अच्छाइयाँ व शब्दों की गहराई है वो सब हमारे वर्तमान व पूर्वाचार्यों की है एवं इसमें जो भी त्रुटियाँ हैं वे सब हमारी ही समझे उस हेतु हम क्षमा प्रार्थी हैं।

इस कृति में गुरुदेव के हृदय से प्रवाहित भक्ति सरिता में जो प्राणी अवगाहन कर लेगा वह अवश्य ही परम्परा से मुक्तिगामी बनेगा। इस ग्रंथ के सृजन में गुरुदेव ने अपनी विद्वत्ता का पूर्ण परिचय देते हुए छन्द, अलंकार आदि व्याकरण शुद्धि को ध्यान में रखकर 28 वर्ष की लघु वय में इतनी सुन्दर काव्य रचना की जिसमें, विषय प्रतिपादन की शैली, श्रोताओं और पाठकों को मोहित किये बिना नहीं रहेगी। आप अनेक प्रतिभाओं के धनी तो हैं ही साथ ही सरलता समता, शांति और सौम्यता उनकी छवि को अलंकृत करती है लघुवय में रचित यह ग्रंथ आपकी कीर्ति को युग, युगान्तर तक पहुँचा कर भव्यजनों को दिशाबोध देता रहेगा।

आचार्यश्री ने इस विधान का सृजन कर अपार पुण्य का संचय किया है। जब-जब, जहाँ-जहाँ यह विधान होगा उन सब भक्तों का छटमांश पुण्य आचार्यश्री के मुक्ति जाने में कारण बनें। एतदर्थ इस शुभ कार्य हेतु कोटिशः त्रिकाल त्रिभक्ति पूर्वक नमोस्तु-नमोस्तु-नमोस्तु। सहयोगी आचार्यकल्प श्री कविन्द्रनंदीजी को नमोस्तु। पुण्य निधि संचित करने के उद्देश्य से सहयोग देने वाली आर्यिका क्षमाश्री एवं आर्यिका आस्थाश्री माताजी को प्रति वंदामि। चंचला लक्ष्मी का सदुपयोग करने वाले सभी द्रव्यदाताओं को आशीर्वाद। प्रकाशक को भी आशीर्वाद।

सरल, सुबोध, आगमोक्त, रूचिकर इस विधान का अगला संस्करण शीघ्र प्रकाशित हो इस भावना के साथ..

-ग. आर्यिका राजश्री

विधान के लेखक (कृतित्व परिचय)

श्री रत्नत्रय विधान की अमोघ अमूल्य कृति के रचनाकार परम पूज्य प्रज्ञायोगी कवि हृदय आचार्य श्री गुप्तिनंदीजी गुरुदेव इस युग के महानतम जैन संतों में अपना विशिष्ट स्थान रखते हैं। आपके गुणानुवाद में जीवंत साक्षी यह अमूल्य कृति युग युगान्तर तक दिव्य ज्योत्सना सम भव्यों का पथ प्रदर्शन करती हुई भक्ति से मुक्ति का मार्ग प्रशस्त करेगी। आप में पूजा, विधान लिखने की अनूठी कला शब्द लालित्य पूर्ण विद्वत प्रतिभा की झलक अठारह वर्ष की लघु वय में दिगम्बर दीक्षा के पश्चात् ही झलकने लगी थी। उस झलक ने आज अपना स्वरूप विशाल बना लिया है। आपने अपनी प्रतिभा व पुण्य के योग से और गुरु की विशेष कृपा से 18 वर्ष की युवा अवस्था में जैनेश्वरी दीक्षा ग्रहण की और 28 वर्ष की लघुवय में आचार्य पद को भी प्राप्त कर लिया।

आपकी लेखनी समाज सुधार, अन्याय, असत्य, पाखंड, भ्रष्टाचार के उन्मूलन के लिये सदा तत्पर रहती है क्योंकि सैनिक तलवार से देश की रक्षा करता है लेकिन साधु-संत लेखन व प्रवचन के माध्यम से देश व समाज के चरित्र की रखवाली करते हैं, आप प्रखर वक्ता हैं। आप अपने प्रवचनों में हमेशा एक आकर्षक, रोमांचकारी घटना की मुख्यता से मानव हृदय को संवेदित कर उसे सत्य की तह तक ले जाकर उसे दिशा का बोध कराकर उस अथाह भवसागर की लहरों से बाहर निकालने का मार्ग प्रशस्त करते हैं। आप हर समाज, क्षेत्र, धर्म में बिगुल बजाकर एकमात्र प्राणीमात्र के उद्धार की उदार भावना का प्रचार करने में रत रहते हैं। आपकी विचार शैली में संत सबके व सब संतन की सूक्ति सदैव झलकती है। आपके लिये गरीब हो या अमीर, पतित हो या पावन सबके लिये समान स्थान है। आप अत्याधिक उदार प्रवृत्ति के हैं व आपके हृदय में दया व करुणा का सागर हिलौरें भरता है। कवि हृदय होने के कारण आपकी सरलता, सहिष्णुता, गंभीरता, अनुशासन

कठिन तपस्या व अलौकिक चरित्र निष्ठ व्यक्तित्व जहाँ मन को आकर्षित करता है वही आपके द्वारा लिखित, धार्मिक, राष्ट्रीय, सामाजिक, शैक्षिक, भ्रष्टाचार उन्मूलक कवितायें, भजन, पूजायें, विधान और सुमधुर कण्ठ सोने पे सुहागा का काम करके जन समूह को आपकी ओर बरबस खींच लेता है। आपकी 'सावधान' नाम काव्य कृति आपकी सशक्त लेखनी की परिचायक है। श्री रत्नत्रय भक्ति सरिता, श्री रत्नत्रय आराधना में आपकी व्याकरण दोष से रहित छन्दोबद्ध काव्य पूजायें विशेष अवलोकनीय एवं पठनीय है। आपको राष्ट्र के प्रति विशेष लगाव व निष्ठा है, आप विद्यार्थी जीवन में राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के सदस्य रहे, एन.सी.सी. में भी इसी उद्देश्य को लेकर भाग लिया कि मैं सैनिक बनकर देश की सेवा करूँगा या ऋषि बनकर देश व अपना कल्याण करूँगा। उन्हें एक दिगम्बर गुरु ने सम्बोधित कर बताया कि ऋषि बनकर देश व स्वयं दोनों का कल्याण हो सकता है। आचार्यों ने कहा भी है कि आत्म साधना भी करो पर अपनी साधना से देश, समाज और राष्ट्र का उत्थान भी करो। बस इस उपदेश ने जीवन को परिवर्तित कर आज इस मुक्ति पथ के सोपान पर आरोहण कर आपने आध्यात्मिक क्रांति कर यह जो आध्यात्मिक भक्तिमय ग्रंथ विधान के रूप में लिखा है वह भव्य जीवों को मोक्ष तो पहुँचायेगा साथ ही उसके पूर्व आपके रत्नत्रय पथ में भी सातिशय पुण्य का अक्षुण्ण भण्डार बढ़ाता हुआ मोक्ष महल पर ले जायेगा।

ग्रंथ के रचनाकार गुरुदेव को मेरा त्रय भक्तिपूर्वक बारम्बार नमोऽस्तु।

-आर्यिका क्षमाश्री

श्री रत्नत्रय व्रत कथा

श्रीमन् सन्मतिं नत्वा गौतमं च गणाधिपं।
प्रच्छकः श्रेणिको राजा विनयान्नतमस्तकः॥1॥

केनेदं विहितं नाथं रत्नत्रयमिदं व्रतं।
कीदृकंफलं च तेनाप्तं तद्व्रतं कथयं प्रभो॥2॥

अथाह गौतमस्वामि दिव्यगंभीरया गिरा।
भव्यं पृष्टं त्वया राजन् श्रुणुत्वं कथयामि ते॥3॥

जंबूवृक्षांकिते जंबूद्वीपे द्वीपेषु मध्यगे।
लक्षयोजनविस्तीर्णे क्षेत्रं भारतसंज्ञकं॥4॥

तस्यास्ति पूर्वदिग्भागे द्वितीयं क्षेत्रमुत्तमम्।
नाम्नां पूर्व विदेहं च धर्मिजनैः समाकुलं॥5॥

पुष्कलावतिप्रमुखानेकदेशसमन्वितं।
पवित्रं क्षेत्रमत्यन्तं पुरपत्तनशोभितं॥6॥

राजा वैश्रवणस्तत्र सम्यक्त्वालंकृतः सुधीः।
तेनेदं च कृतं पूर्वं व्रतं रत्नत्रयाभिधं॥7॥

तत्फलेनैव सम्बद्धं तीर्थकृतकुलमुत्तमम्।
ततः समाधिना मृत्वाहमिंद्रोऽभूतो भूपतिः॥8॥

तस्माच्युत्वायुषांते सः वंगदेशे मनोहरे।
मिथुलाक्षापूरिरम्या तस्यां कुम्भाभिधो नृपः॥9॥

राज्ञी प्रभावती दक्षा तद्गर्भे सोऽवतीर्णवान्।
रत्नत्रय प्रभावेन मल्लिनाथो जिनेश्वरः॥10॥

स जातः कर्मनियोगः पंचकल्याण नायकः।
इति मत्वा बुधैः कार्यं रत्नत्रय मिदं व्रतं॥11॥

तस्य पूजा विधिंदक्ष्येऽर्हन्नामाष्टसहस्रकं।
पठित्वा देहशुद्धयर्थं सकलीकरणं पठेत्॥12॥

पूजयेत् प्रथमं देवं सिद्धादिपंचनायकान्।
वेदिमण्डपयो शोभां कृत्वा पूजां तयोर्मुदा॥13॥

गुर्वाज्ञां च समादाय स्वस्तिकेनास्य भक्तितः।
रत्नत्रयस्य यद्बिंबं चतुर्विंशतिसंयुतं॥14॥

तदग्रे विधिना स्थाप्यं सम्यक् यंत्रत्रयं शुभं।
संस्नाप्य विधिना तत्र वृत्तानामर्चयेत्पुनः॥15॥

स्वस्तिकं सुन्दरं कृत्वा त्रिनवतिसुकोष्टकैः।
तद्व्रतोद्यापनं कुर्यात् भक्तया शक्त्या शिवं पदं॥16॥

नित्वाज्ञां प्रथमं गुरोरपि ततः पूजां समारभ्यते।
तत्रादौ च सहस्रनामसकलीकरणं त्रिशुद्ध्या पठेत्॥
पश्चात् श्रीजिनदेवसिद्धकलिकुण्डादिश्रुतार्चागुरोः।
कृत्वानुक्रमतोऽर्चनं च विधिना दृग्बोधवृत्तं यजेत्॥17॥

अस्योद्यापन सद्विधौ च मण्डपादि स्वस्तिकस्यार्चनं।
कर्त्तव्यं स्नपनं पठेत्सुविधिना पंचामृतैर्भक्तितः॥
कार्यौ च ध्वजसंघ पूजकरणं तांबूलदानादिकं।
कुर्यात्रांऽकुरोपणादिविविधैर्वाद्यैश्च सन्तोरणैः॥18॥

आहाराभयभैषजं च मुनये सच्छास्त्रदानं तथा।
पात्रेभ्यो विनयाच्चतुर्विधमिदं दानं प्रदेयं बुधैः॥
स्तुत्याशीर्वरगीतमंगलरवैः कार्यैं व्रतोद्यापनं।
इत्युद्यापनसद्विधिश्चगणिनोक्तश्रेणिकाग्रेपुरा॥19॥

***

श्री रत्नत्रय व्रत कथा

भाषानुवाद : गणिनी आ.राजश्री माताजी

दोहा- रत्नत्रय परमार्थ है, करे सिद्ध सर्वार्थ।
इसका सम्यक् व्रत करो, बनो भव्य शुद्धार्थ।।

एक बार राजा श्रेणिक ने विनय पूर्वक मस्तक झुकाकर श्रीमान् सन्मति जिनेन्द्र को नमस्कार किया तथा गौतम गणधर की वन्दना की। विनय से नतमस्तक होकर प्रश्न किये। (1) हे नाथ ! यह रत्नत्रय व्रत क्या है ? इसे किस प्रकार किया जाता है ? तथा इसका क्या फल है ? हे प्रभो ! इस व्रत की सम्यक् विधि से हम अनभिज्ञ हैं आप हम पर अनुकम्पा कर इसकी विधि बतायें। (2) अथानन्तर दिव्य गंभीर वाणी में गौतम स्वामी कहते हैं कि हे राजन् ! तुमने उत्तम प्रश्न किया, उसे मैं भगवान् की दिव्य ध्वनि अनुसार कहता हूँ तुम ध्यान पूर्वक सुनो। (3) सब द्वीपों के मध्य जम्बू वृक्ष से लक्षित एक लाख योजन विस्तार वाले जम्बूद्वीप में भरत वर्ष नाम का क्षेत्र है। (4) उसके पूर्व दिग्भाग में धार्मिक जनों से व्याप्त पूर्व विदेह नाम का दूसरा क्षेत्र है। (5) इस क्षेत्र में अनेक देशों से समन्वित पुर पत्तन से सुशोभित, पुष्कलावती नाम का अत्यन्त पवित्र देश है। (6) वहाँ सम्यक्त्व गुण से अलंकृत परम बुद्धिमान राजा वैश्रवण राज्य करता था। उसने पूर्व में यह रत्नत्रय नाम का व्रत किया। (7) उस व्रत विधान के फलस्वरूप उन्होंने तीर्थंकर कुल नामा सातिशय प्रशस्त पुण्य प्रकृति का बंध किया तथा आयु के अंत में वह राजा समाधिपूर्वक मरण करके स्वर्ग में अहमिन्द्र हुआ। (8) अथानन्तर भरत क्षेत्र के मनोहर बंग देश में मिथुलाक्षापुरी (मिथिलापुरी) नामा सुन्दर नगरी है। वहाँ कुम्भ नाम का राजा राज्य करता था उसकी सभी कलाओं में दक्ष प्रभावती नाम की रानी थी। सो वे अहमिन्द्र आयु के अंत में च्युत होकर प्रभावती माता के गर्भ में अवतरित हुए तथा रत्नत्रय व्रत के प्रभाव से मल्लिनाथ जिनेश्वर के नाम से ख्यात हुये। (9) (10) पूर्व पुण्य के योग से वे पंचकल्याणक के नायक हुए ऐसा जानकर सभी बुद्धिमानों को यह रत्नत्रय व्रत विधान अवश्य करना चाहिए। (11) **अब इस व्रत विधान की**

पूजा विधि को कहते हैं-सर्वप्रथम देह शुद्धिपूर्वक अर्हंत् के एक हजार आठ नाम वाले जिनसहस्रनाम का पाठ करके सकलीकरण क्रिया करना चाहिए। (12) फिर वेदी और मण्डप की भव्यतम शोभा करके प्रथमतया अरहंत, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय, साधु इन पंच धर्म नायकों (पंच परमेष्ठी) की पूजा करना चाहिए। (13) तदनन्तर आगमोक्त विधि से गुरु आज्ञा लेकर प्रसन्नचित्त हो भक्तिपूर्वक स्वस्तिक पर रत्नत्रय के बिम्ब स्वरूप चौबीस तीर्थंकर के जिनबिम्ब की स्थापना करना चाहिए। (14) उसके आगे विधिपूर्वक सम्यक् तीन यंत्र (रत्नत्रय यंत्र) की स्थापना कर यंत्र-मंत्र की पूजा करें। (15) स्वस्तिकों से सुन्दर कोष्ठों की रचना कर, अपनी शक्ति और भक्ति अनुसार शिवपद को देने वाले व्रत का उद्यापन करना चाहिए। (16) विधान में नित्य प्रथम गुरु आज्ञा लेवें तत्पश्चात् पूजा प्रारम्भ करें आदि में त्रिशुद्धि पूर्वक जिनसहस्रनाम का पाठ करें फिर सकलीकरण करें। पश्चात् अनुक्रम से श्री अरिहंत जिनदेव, सिद्ध, कलिकुण्डादि श्रुत (जिनवाणी, सरस्वती) की अर्चा पूर्वक गुरु पूजा करके सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र की अर्चना करना चाहिए। (17) इस व्रत विधान की उद्यापन विधि में सम्यक् विधि से मण्डप वेदी स्वस्तिक (मंडलजी) को सुसज्जित करना आद्य कर्त्तव्य है। अभिषेक पाठ को पढ़ते हुए विधिपूर्वक पंचामृत (जल, इक्षु, आम आदि रस, घी, दूध, दही व सर्वौषधि) अभिषेक भक्ति पूर्वक करना चाहिए। झंडारोहण के बाद विधानाचार्य को पान, वस्त्र आदि दान देकर प्रसन्न करना चाहिए। तत्पश्चात् विविध सुन्दर तोरण द्वार बनाकर, अनेक वाद्यों की मंगल ध्वनि पूर्वक अंकुरारोपण विधि करना चाहिए। (18) विधान में उद्यापन के इस अवसर पर मुनि, आर्यिका, श्रावक-श्राविका रूप चतुर्विध संघ को आहार, अभय, औषध व शास्त्र दान चार प्रकार का दान देकर स्तुति पूर्वक निर्ग्रन्थ गुरु का आशीर्वाद प्राप्त करें तथा मंगलमय गीत, नृत्य, स्तुति, हवन जयघोष, शोभायात्रा आदि प्रभावनापूर्वक उद्यापन का समापन करें। इस व्रत विधान की विधि वर्तमान जिनशासन नायक भगवान् महावीर स्वामी के प्रमुख श्रोता राजा श्रेणिक के प्रश्न किये जाने पर गणधर भगवान् ने बताई थी।

***

श्री रत्नत्रय व्रत विधि

साभार – व्रत विधी संग्रह

रत्नत्रयं तु भाद्रपदचैत्रमाघशुक्लपक्षे च द्वादश्यां धारणं चैकभक्तं च त्रयोदश्यादिपूर्णिमान्तमष्टमं कार्यम्, तदभावे यथाशक्ति काञ्जिकादिकं, दिनवृद्धौ, तदधिकतया कार्यम्, दिनहानौ तु पूर्वदिनमारभ्य तदन्तं कार्यमिति पूर्वक्रमो ज्ञेयः।

अर्थ–रत्नत्रय व्रत भाद्रपद, चैत्र और माघ मास में किया जाता है। इन महीनों के शुक्लपक्ष में द्वादशी तिथि को व्रत धारण करना चाहिए तथा एकाशन करना चाहिए। त्रयोदशी, चतुर्दशी और पूर्णिमा का उपवास करना चाहिए। यदि तीन दिन का उपवास करने की शक्ति न हो तो कांजी आदि लेना चाहिए। रत्नत्रय व्रत के दिनों में किसी तिथि की वृद्धि हो तो एक दिन अधिक व्रत करना एवं एक तिथि की हानि होने पर एक दिन पहले से लेकर व्रत समाप्ति पर्यंत उपवास करना चाहिए। यहाँ पर भी तिथि हानि और तिथि वृद्धि में पूर्व क्रम ही समझना चाहिए।

***

पूजन की थाली में निम्नलिखित श्लोक बोलते हुए स्वस्तिक बनायें व अंक लिखें–

श्लोक– रयणत्तयं च वंदे चउवीस जिणे च सव्वदा वंदे।
पञ्च गुरूणां वंदे चारण–चरणं च सव्वदा वंदे॥

3
2 卐 24
5

विनय पाठ

(दोहा)

प्रथम जिनेश्वर देव हो, वीतराग सर्वज्ञ।
हित उपदेशी नाथ तुम, ज्ञानरवि मर्मज्ञ॥1॥
केवलज्ञानी बन प्रभो, हरा जगत् अंधियार।
तीन लोक के बंधु बन, किया जगत् उपकार॥2॥
धर्म देशना से मिला, जग को दिव्य प्रकाश।
तव चरणों में नित रहे, यही करें अरदास॥3॥
कर्म बेड़ियाँ तोड़ने, भक्ति करें त्रयकाल।
तीन योग से हे प्रभो !, चरणों में नत भाल॥4॥
चतुर्गति भव भ्रमण से, तारों हमें जिनेश।
दयानिधि जिन ! कर दया, हरलो पाप विशेष॥5॥
प्रभुवर पूजा आपकी, सर्व रोग विनशाय।
विष भी अमृत हो प्रभो !, शत्रु मित्र बन जाय॥6॥
हलधर बलधर चक्रधर, अर्चा के उपहार।
परम्परा जिनभक्ति से, दे प्रभु पद उपहार॥7॥
बड़े पुण्य से जिन मिले, मिला प्रभु का द्वार।
मुक्त करो त्रय रोग से, विनती बारम्बार॥8॥
हम सेवक प्रभु आपके, हे अबोध ! अनजान।
राग–द्वेष अज्ञान हर, दे दो सच्चा ज्ञान॥9॥

मंगल उत्तम शरण है, मंगलमय जिनधर्म।
मंगलकारी सब गुरु, हरो हमारे कर्म॥10॥
चौबीसों जिनवर नमूँ, नमन पंच परमेश।
जिनवाणी गणधर गुरु, 'आस्था' नमें हमेश॥11॥

दिव्य पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

पूजा आरंभ (हिन्दी)

ॐ जय-जय-जय - नमोस्तु-नमोस्तु-नमोस्तु।
णमो अरिहन्ताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं
णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्व साहूणं॥

(ॐ ह्रीं अनादिमूलमंत्रेभ्यो नमः परिपुष्पाञ्जलि क्षिपामि)

चत्तारि मंगलं, अरिहन्ता मंगलं, सिद्धा मंगलं, साहू मंगलं, केवलिपण्णत्तो धम्मो मंगलं। चत्तारि लोगुत्तमा, अरिहंता लोगुत्तमा, सिद्धा लोगुत्तमा, साहू लोगुत्तमा, केवलिपण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमा। चत्तारि सरणं पवज्जामि, अरिहंते सरणं पवज्जामि, सिद्धे सरणं पवज्जामि, साहू सरणं पवज्जामि, केवलिपण्णत्तो धम्मो सरणं पवज्जामि।

ॐ नमोऽर्हते स्वाहा, पुरिपुष्पाञ्जलि क्षिपामि।

णमोकार मंत्र महिमा

(चौपाई)

अपवित्र या जन पवित्र हो, सुस्थित हो या दुस्थित भी हो।
नमस्कार मंत्रों को ध्यायें, पापों से छुटकारा पायें॥1॥
सर्व अवस्था में भी ध्यायें, पापी भी पावन बन जाये।
जो सुमिरे नित परमातम को, अन्दर बाहर शुचि बने वो॥2॥
अपराजित ये मंत्र कहाता, सब विघ्नों को दूर भगाता।
सब मंगल में मंगलकारी, प्रथम सुमंगल जग उपकारी॥3॥
महामंत्र णवकार हमारा, सब पापों से दे छुटकारा।
सब मंगल में प्रथम कहाता, महामंत्र मंगल कहलाता॥4॥

परम ब्रह्म परमेष्ठी वाचक, सिद्धचक्र सुन्दर बीजाक्षर।
मैं मन-वच-काया से नमता, नमस्कार मंत्रों को करता॥5॥
अष्टकर्म से मुक्त जिनेश्वर, श्रीपति जिन मंदिर परमेश्वर।
सम्यक्त्वादि गुणों के स्वामी, नमस्कार मैं करता स्वामी॥6॥
जिनवर की संस्तुति करने से, मुक्ति मिले सारे विघ्नों से।
भूतादि का भय मिट जाता, विष निर्विष निश्चित हो जाता॥7॥

पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

उदकचंदनतंदुलपुष्पकैश्चरूसुदीपसुधूपफलार्घकैः।
धवलमंगलगानरवाकुले जिनगृहे कल्याणमहंयजे॥1॥

ॐ ह्रीं श्री भगवतो गर्भजन्मतपज्ञाननिर्वाण पंचकल्याणकेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उदकचंदनतंदुलपुष्पकैश्चरूसुदीपसुधूपफलार्घकैः।
धवलमंगलगानरवाकुले जिनगृहे जिनइष्टमहंयजे॥2॥

ॐ ह्रीं श्री अर्हंत्सिद्ध आचार्य उपाध्याय सर्वसाधुभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उदकचंदनतंदुलपुष्पकैश्चरूसुदीपसुधूपफलार्घकैः।
धवलमंगलगानरवाकुले जिनगृहे जिननाममहंयजे॥3॥

ॐ ह्रीं श्री भगवज्जिनसहस्रनामेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

स्वस्ति मंगल विधान

(शंभु छंद)

श्री मज्जिनेन्द्र हो विश्ववंद्य, तुम तीन जगत के ईश्वर हो।
तुम चऊ अनंत गुण के धारी, स्याद्वाद धर्म परमेश्वर हो॥
श्री मूल संघ की विधि से मैं, अपना बहु पुण्य बढ़ाने को।
मैं मंगल पुष्प चढ़ाता हूँ, जिन पूजा यज्ञ रचाने को॥1॥
त्रैलोक्य गुरु हे जिनपुंगव !, मैं तुमको पुष्प चढ़ाता हूँ।
अपने स्वभाव में सुस्थित जिन, मैं तुमको पुष्प चढ़ाता हूँ॥
सम्पूर्ण रत्नत्रय के धारी, मैं तुमको पुष्प चढ़ाता हूँ।
हे समवशरण वैभव धारी, मैं तुमको पुष्प चढ़ाता हूँ॥2॥
अविराम प्रवाहित ज्ञानामृत, सागर को पुष्प समर्पित है।
निज परभावों के भेद विज्ञ, जिनवर को पुष्प समर्पित है॥

त्रिभुवन को सारे द्रव्यों के, नायक को पुष्प समर्पित है।
त्रैकालिक सर्व पदार्थों के, ज्ञायक को पुष्प समर्पित है॥3॥
पूजा के सारे द्रव्यों को, श्रुत सम्मत शुद्ध बनाया है।
यह भाव शुद्धि के अवलम्बन, द्रव्यों को शुद्ध सजाया है॥
शुचि परमातम का अवलम्बन, आतम को शुद्ध बनाता है।
उसको पाने हे जिन ! तेरी, यह पूजा भव्य रचाता है॥4॥
अर्हत् पुराण पुरुषोत्तम जिन, उनमें न सचमुच गुरुता है।
मैं भी स्वभाव से उन सम हूँ, मुझमें न निश्चय लघुता है॥
प्रभु से हो एकाकार मेरा, मैं ऐसी भक्ति रचाता हूँ।
केवल ज्ञानाग्नि में अपना, मैं पुण्य समग्र चढ़ाता हूँ॥5॥

ॐ ह्रीं जिनप्रतिमोऽपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

स्वस्ति मंगल पाठ

(चौपाई)

वृषभ सुमंगल करे हमारा, अजित सुमंगल करे हमारा।
संभव स्वामी मंगलकारी, अभिनंदन हैं मंगलकारी॥1॥
सुमतिनाथ हैं मंगलकारी, पद्मप्रभु हैं मंगलकारी।
श्री सुपार्श्व जिन मंगलकारी, चंद्रप्रभु हैं मंगलकारी॥2॥
पुष्पदंत हैं मंगलकारी, शीतल स्वामी मंगलकारी।
श्री श्रेयांस जिन मंगलकारी, वासुपूज्य हैं मंगलकारी॥3॥
विमलनाथ हैं मंगलकारी, श्री अनंत जिन मंगलकारी।
धर्मनाथ हैं मंगलकारी, शांतिनाथ हैं मंगलकारी॥4॥
कुंथुनाथ हैं मंगलकारी, अरहनाथ हैं मंगलकारी।
मल्लिनाथ हैं मंगलकारी, मुनिसुव्रत हैं मंगलकारी॥5॥
नमि जिनवर हैं मंगलकारी, नेमीनाथ हैं मंगलकारी।
पार्श्वनाथ हैं मंगलकारी, वीर जिनेश्वर मंगलकारी॥6॥

पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

स्वस्ति मंगल विधान

(यहाँ प्रत्येक श्लोक के अंत में पुष्पाञ्जलि क्षेपण करना चाहिए।)

नित्य अचल क्षायिक ज्ञानधारी, विशुद्ध मनःपर्यय ज्ञानधारी।
देशावधि आदि युत ऋषि मुनिगण, स्वस्ति सदा हो उन चरणों में॥1॥
महाकोष्ठ बीजबुद्धि पदानुसारि, संभिन्न संश्रोतृ स्वयं बुद्धिधारी।
प्रत्येकबुद्ध-बोधिबुद्ध ऋषिवर, स्वस्ति सदा हो उन चरणों में॥2॥
अभिन्नदशपूर्व-चतुर्दश पूर्वी, दिव्य मतिज्ञान महाबलधारी।
अष्टांगनिमित्त ज्ञाता ऋषिगण, स्वस्ति सदा हो उन चरणों में॥3॥
स्पर्श-चक्षु-कर्ण-घ्राण-रसना, आदि प्रबल इन्द्रिय के धारी।
महाशक्तिवन्त जिनमुनि-यति-ऋषिगण, स्वस्ति सदा हो उन चरणों में॥4॥
फल-तन्तु-नीर-जंघा-श्रेणी, पुष्प-बीज-अंकुर-रवि-अग्नि-गामी।
नभ-जल-वायुचारण ऋषिगण, स्वस्ति सदा हो उन चरणों में॥5॥
अणु-महालघु-गुरुऋद्धिधारी, सकामरूपित्व-वशित्वधारी।
वर्द्धमान बल के धारी गुरुवर, स्वस्ति सदा हो उन चरणों में॥6॥
मन औ वचनबल-कायबल ऋद्धि, प्राकाम्य-अप्रतिघात गुणधारी।
विक्रिया-क्रियाऋद्धि धारी गुरुवर, स्वस्ति सदा हो उन चरणों में॥7॥
उग्रोग्रतप-दीप्त-तप-तप्ततपसी, अवस्थित-उग्रतप-महातपऋद्धि।
तपो-लब्धि आदि से युक्त ऋषिगण, स्वस्ति सदा हो उन चरणों में॥8॥
आमर्ष-सर्वौषध ऋद्धिधारी, आषीर्विष-दृष्टिविष बल धारी।
सखिल्ल-विडजल्ल-मल्लौषधियुक्त, स्वस्ति सदा हो उन चरणों में॥9॥
क्षीरास्रवी-घृतस्रावी मुनीश्वर, अमृत-मधु-महारस के धारी।
अक्षीणआलय-महानस आदि, स्वस्ति सदा हो उन चरणों में॥10॥

इति परमर्षि स्वस्ति मंगल विधानं

(9 बार णमोकार मंत्र का जाप करें)

श्री नित्यमह पूजा

रचियित्री : ग. आर्यिका राजश्री माताजी

शंभु छन्द *(तर्ज- हे वीर तुम्हारे...)*

अरिहंत, सिद्ध, सूरी, पाठक, साधु और जिनवर चौबीसों।
गणधर जिन पंच बालयतिवर, जिन आगम गुरु प्रभुवर बीसों॥
माँ जिनवाणी, निर्वाणभूमि, रत्नत्रय, दशलक्षण प्यारा।
नंदीश्वर पंचमेरू जिनवर, जिनचैत्य चैत्यालय मनहारा॥
जिनधर्म जिनागम बाहुबली, सोलहकारण पूजन करता।
इनका आह्वानन करके मैं, श्री मोक्ष महल का सुख वरता॥1॥

ॐ ह्रीं श्री समुच्चय जिनेन्द्र ! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वानम्।
ॐ ह्रीं श्री समुच्चय जिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।
ॐ ह्रीं श्री समुच्चय जिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्।

नरेन्द्र छन्द *(तर्ज : माइन-माइन...)*

धीर वीर गंभीर प्रभु की अर्चा मैं नित करता हूँ।
निर्मल जल की त्रय धारा दे जन्म-जरा-मृत हरता हूँ॥
देव-शास्त्र-गुरु बीस तीर्थंकर जिनवाणी गणधर पूजा।
त्रय चौबीसी रत्नत्रय नंदीश्वर दशलक्षण पूजा॥
सोलहकारण बाहुबली निर्वाणभूमि वा नवदेवा।
पंच परम परमेष्ठी पद की करते उत्तम सेवा॥1॥

ॐ ह्रीं श्री समुच्चय जिनेन्द्रेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

शीतल चंदन चरण चढ़ाता शीतलता मुझको देना।
भव का बन्धन हरने वाले भव की ज्वाला हर लेना॥ देव शास्त्र..॥2॥

ॐ ह्रीं श्री समुच्चय जिनेन्द्रेभ्यो संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

धवल मनोहर अक्षत लाया अक्षयपद पाने हेतू।
अक्षयपद को देने वाली पूजन है सबका सेतू॥ देव शास्त्र..॥3॥

ॐ ह्रीं श्री समुच्चय जिनेन्द्रेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

जल भूमिज बहु पुष्प चढ़ाऊँ श्रद्धा से जिन गुण गाऊँ।
कामबाण को वश में करके मन ही मन मैं हर्षाऊँ॥
देव-शास्त्र-गुरु बीस तीर्थंकर जिनवाणी गणधर पूजा।
त्रय चौबीसी रत्नत्रय नंदीश्वर दशलक्षण पूजा॥
सोलहकारण बाहुबली निर्वाणभूमि वा नवदेवा।
पंच परम परमेष्ठी पद की करते उत्तम सेवा॥4॥

ॐ ह्रीं श्री समुच्चय जिनेन्द्रेभ्यो कामबाणविनाशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

पुआ पकौडी रबड़ी घेवर आदिक व्यंजन मैं लाया।
क्षुधावेदनी के भेदन को प्रभु सन्मुख दौड़ा आया॥ देव शास्त्र..॥5॥

ॐ ह्रीं श्री समुच्चय जिनेन्द्रेभ्यो क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जगमग दीपों की थाली ले आरती प्रभु की गाऊँगा।
मोहकर्म का नाश मेरा हो सम्यक्भाव बनाऊँगा॥ देव शास्त्र..॥6॥

ॐ ह्रीं श्री समुच्चय जिनेन्द्रेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

धूप धूपायन में खेकर मैं अष्टकर्म का हनन करूँ।
प्रभु प्रतिमा के दर्शन करके निज स्वभाव का वरण करूँ॥ देव शास्त्र..॥7॥

ॐ ह्रीं श्री समुच्चय जिनेन्द्रेभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

ताजे मीठे फल से अर्चा मनवांछित फल देती है।
प्रभु की अर्चा मेरे जीवन के संकट हर लेती है॥ देव शास्त्र..॥8॥

ॐ ह्रीं श्री समुच्चय जिनेन्द्रेभ्यो महामोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

नीरादिक आठों द्रव्यों का सुन्दर थाल सजाया है।
पद अनर्घ्य की अभिलाषा से भक्तिभाव जगाया है॥ देव शास्त्र..॥9॥

ॐ ह्रीं श्री समुच्चय जिनेन्द्रेभ्यो अनर्घपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा : वीतराग भगवान की, पूजा सब सुख खान।
त्रयधारा जल की करूँ, छोडूँ सब अभिमान॥

शांतये शांतिधारा।

दोहा– काम सृष्टि का नाश हो, पुष्पवृष्टि के साथ।
पुष्पांजलि क्षेपण करूँ, पूर्ण विनय के साथ॥

दिव्य पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

जाप्य मंत्र : ॐ ह्रीं श्री समुच्चय जिनेन्द्रेभ्यो नमः स्वाहा। (9, 27 या 108 बार जाप करें)

जयमाला

दोहा : जयमाला की माल से, गूंजे जय-जयकार।
जयमाला हम पढ़ रहे, मिलकर सब नर-नार॥

शंभु छन्द *(तर्ज : ये देश है वीर...)*

श्री वीतराग सर्वज्ञ हितैषी अरिहंतों को नमन करूँ।
श्री सिद्ध सूरी पाठक साधु जिनचैत्य जिनालय नमन करूँ॥
सब द्वीपों के प्रभुवर न्यारे सीमंधर आदिक को ध्याऊँ।
श्री पंचमेरू अरू नंदीश्वर के चैत्यालय के गुण गाऊँ॥1॥

दशलक्षणधर्म हृदय धारूँ सोलहकारण भावन भाऊँ।
रत्नत्रय धारण करने के सम्यक् साधन को अपनाऊँ॥
चौदह सौ बावन गणधर जी सब ऋद्धि-सिद्धि देने वाले।
प्रभु के पाँचों कल्याणक भी सबका संकट हरने वाले॥2॥

जिनवर के सब जन्मस्थल को करता हूँ मैं शत-शत वंदन।
श्रावस्ती कौशाम्बी काशी अयोध्या चंद्रपुरी वंदन॥
काकंदी राजगृही मिथिला चंपापुर कुंडलपुर वंदन।
वैशाली सिंहपुरी कम्पिल हस्तिनापुर आदि वंदन॥3॥

अतिशय औ सिद्धक्षेत्र जी का सुमरण सब पाप तिमिर हरता।
मैं चंपा पावा ऊर्जयंत सम्मेदशिखर वंदन करता॥

पावा द्रोणा सोना तुंगी कैलाश चूलगिरी ध्याऊँगा।
रेसंदी मुक्ता उदयरत्न कुंथलगिरी को मैं जाऊँगा॥4॥

विपुलाचल पोदनपुर मथुरा तारंगा गजपंथा वंदन।
श्री सिद्धवरकूट कमलदहजी गुणावा शत्रुंजय वंदन॥
अहिक्षेत्र अणिंदा णमोकार जटवाडा पैठण चंवलेश्वर।
कचनेर चाँदखेड़ी पाटन जिन्तूर तिजारा गोमटेश्वर॥5॥

कुन्थुगिरी नवग्रह धर्मतीर्थ मांडल केशरिया को वंदन।
श्री महावीरजी पदमपुरा ऋषितीर्थ आदि को भी वंदन॥
जय ऊर्ध्व मध्य और अधोलोक के सब चैत्यालय मनहारी।
निर्वाण सिधारे पूज्य पुरुष की पूजा सब संकटहारी॥6॥

श्री राम हनु सुग्रीव नील महानील कुम्भ शम्बु ज्ञानी।
लवमदनांकुश सागर वरदत्त श्री बाहुबली स्वामी ध्यानी।
गौतम जम्बू सुधर्मा श्री त्रय पांडवसुत अनिरूद्ध नमन।
इस ढाईद्वीप से मोक्ष पधारे उन गुरुओं को है वंदन॥7॥

श्री पँचबालयति को ध्यायें नवदेवों की शरणा पायें।
सातिशय पुण्य कमाने को मंगलमय पूजा हम गायें॥
जिनगुण के अनुरागी बनकर संसार भ्रमण का नाश करें।
शिवपुर के राजतिलक हेतु यह 'राज' प्रभुगुण आश करे॥8॥

ॐ ह्रीं श्री समुच्चय जिनेन्द्रेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा : श्री जिन के आशीष से, प्रगटाऊँ निज ज्ञान।
पूजन-कीर्तन-भजन से 'राज' वरे शिव थान॥

इत्याशीर्वादः दिव्य पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

श्री नवदेवता पूजन

रचियित्री : ग. आर्यिका राजश्री माताजी

(शंभु छन्द)

अरिहंत सिद्ध सूरी पाठक साधू परमेष्ठी गुणधारी।
जिनधर्म जिनागम चैत्य जिनालय सबके मन को सुखकारी॥
इन नवदेवों का आह्वानन कर ग्रह अरिष्ट का नाश करें।
तव गुण मन में धारण करके हम मोक्षपुरी में वास करें॥1॥

ॐ ह्रीं श्री अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय सर्वसाधु जिनधर्म जिनागम जिनचैत्य चैत्यालय समूह ! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं, अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः-ठः स्थापनम्, अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्।

पावन चरणों में हे प्रभुवर ! पावन जल भर कर लाया हूँ।
तव वीतराग मुद्रा लखकर मैं मन में अति हर्षाया हूँ॥
अरिहंत सिद्ध सूरी पाठक साधू को नमन हमारा है।
जिनधर्म जिनागम चैत्य जिनालय लगता सबको प्यारा है॥

ॐ ह्रीं श्री अरिहंत सिद्धाचार्योपाध्याय सर्वसाधु जिनधर्म जिनागम जिनचैत्य चैत्यालयेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥1॥

भव-भाव अभाव हमारा हो यह भाव संजोकर आया हूँ।
चंदन सम शीतलता पाने मैं चंदन घिसकर लाया हूँ॥ अरिहंत...॥

ॐ ह्रीं श्री अरिहंत... भवआतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा ॥2॥

अक्षयपद की अभिलाषा से अक्षत का पुंज चढ़ाता हूँ।
भौतिकपद शिवपद मिलता है यह जान शरण में आता हूँ॥ अरिहंत...॥

ॐ ह्रीं श्री अरिहंत... अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा॥3॥

अध्यात्म सुमन की सुरभि से जीवन उपवन बन जाता है।
जल-भूमिज सुमन लिए पूजक आगम युत भक्ति रचाता है॥ अरिहंत...॥

ॐ ह्रीं श्री अरिहंत... कामबाण विनाशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ॥4॥

इस क्षुधा-तृषा की बाधा से जीवन में मैं अति अकुलाया।
अतएव सरस प्रासुक व्यंजन भक्तिरस से भरकर लाया॥ अरिहंत...॥

ॐ ह्रीं श्री अरिहंत... क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा॥5॥

अज्ञानभाव ही प्राणी को गति चार भ्रमण करवाता है।
सुज्ञान दीप की आरति से मिथ्यात्व मोह भग जाता है॥
अरिहंत सिद्ध सूरी पाठक साधू को नमन हमारा है।
जिनधर्म जिनागम चैत्य जिनालय लगता सबको प्यारा है॥

ॐ ह्रीं श्री अरिहंत... मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा॥6॥

तन-मन के रोग नशाने को कृष्णागुरु धूप चढ़ाता हूँ।
मैं कर्म बेड़ियाँ तोड़ सकूँ आशीष आपसे पाता हूँ॥ अरिहंत...॥

ॐ ह्रीं श्री अरिहंत... अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ॥7॥

ताजे मीठे रसयुक्त सुफल जिनपूजन से अतिफल देते।
वटवृक्ष बीज सम पुण्य सहित शिवलक्ष्मी सा प्रतिफल देते॥ अरिहंत...॥

ॐ ह्रीं श्री अरिहंत... महामोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ॥8॥

जल-चंदन आदिक अर्घ मिला पूजन की थाली लाया हूँ।
मैं पद अनर्घ को प्राप्त करूँ यह भाव हृदय भर लाया हूँ॥ अरिहंत...॥

ॐ ह्रीं श्री अरिहंत... अनर्घपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥9॥

दोहा : त्रय धारा जल की करूँ, आत्म शांति के हेत।
श्री जिनवर का दास बन, पुष्पांजलि क्षिपेत्॥

शांतये शांतिधारा.... दिव्य पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

जाप्य मंत्र-ॐ ह्रीं श्री अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय सर्वसाधु जिनधर्म जिनागमजिनचैत्य चैत्यालयेभ्यो नमः। (9, 27 या 108 बार जाप करें)

जयमाला

दोहा : नवदेवों की अर्चना, करो भक्त त्रयकाल।
गुण निधि पाने के लिए, गाओ प्रभु जयमाल॥

चौपाई

चार घातिया नाश किया है, गुणअनंत में वास किया है।
वीतराग सर्वज्ञ हितैषी, परमौदारिक तन के वेषी॥1॥

समोशरण की महिमा न्यारी, आये देव-पशु नर-नारी।
अरिहंतों के गुण हम गायें, भक्तिभाव से शीश झुकायें॥2॥
अष्टकर्म बंधन को तोड़ा, निज स्वरूप से नाता जोड़ा।
तीन लोक के हो परमेश्वर, राजे लोक शिखर के ऊपर॥3॥
सिद्धप्रभु की पूजन कर लो, आधि-व्याधि विपदायें हर लो।
पंचाचारी आत्म विहारी, शिष्यगणों के संकटहारी॥4॥
दीक्षा देते पार लगाते, आत्मगुणों को जो विकसाते।
गुप्तित्रय का पालन करते, क्षमाभाव जो मन में धरते॥5॥
पठन और पाठन करवाते, उपाध्याय गुरुवर कहलाते।
रत्नत्रय को धारण करते, ज्ञान-ध्यान में रत जो रहते॥6॥
आठ बीस गुण पालन करते, विष समान विषयों को तजते।
प्राणी मात्र की रक्षा करता, जैनधर्म सबका दुःख हरता॥7॥
श्री जिनवर ने इसे बताया, जैनधर्म जिससे कहलाया।
श्री जिनमुख से वाणी खिरती, द्वादशांग का रूप जो धरती॥8॥
अनेकांतमय रूप निराला, स्याद्वाद है जग में आला।
वीतराग प्रतिमा सुखकारी, नासादृष्टि लगती प्यारी॥9॥
पद्मासन खड्गासन धारी, जिनप्रतिमायें मंगलकारी।
कोटा-कोटी अशन समाना, जिनदर्शन का सुफल बखाना॥10॥
समोशरण की याद दिलाता, वो चैत्यालय है कहलाता।
कृत्रिमाकृत्रिम चैत्यालय हैं, भक्त भक्ति में होते लय हैं॥11॥
नवदेवों का पूजन-दर्शन, हर लेता नवग्रह का बंधन।
'राजश्री' नित इनको ध्याये, ध्याते-ध्याते शिवपुर जाये॥12॥

ॐ ह्रीं श्री अरिहंतसिद्धाचार्योपाध्याय सर्वसाधु जिनधर्म जिनागम जिनचैत्य चैत्यालयेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सोरठा : तारण-तरण जिहाज, इनकी भक्ति मैं करूँ।
पाऊँ शिवपुर 'राज', अक्षयसुख निश्चय वरूँ॥

इत्याशीर्वादः दिव्य पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

श्री रत्नत्रय समुच्चय पूजा

(शंभु छन्द)

हे भव्य ! सभी आओ-आओ, रत्नत्रय का शुभ ध्यान धरो।
शुभ सम्यग्दर्शन ज्ञान-चरित, इनको धारो कल्याण करो॥
तीनों मिल मोक्ष सुपथ बनते, इनका आह्वानन करते हैं।
इन आत्मगुणों का श्रद्धा से, शत-शत अभिनंदन करते हैं॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्र ! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननम्।
ॐ ह्रीं अर्हं श्री सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्र ! अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः-ठः स्थापनम्।
ॐ ह्रीं अर्हं श्री सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्र ! अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणं।

(शंभु छंद)

क्षीरोदधि सम निर्मल जल भर, यह रत्नकलश ले आये हैं।
मम जन्म-जरा-मृत नाश हेतु, भावों से जल भर लाये हैं॥
सम्यग्दर्शन और ज्ञान-चरित, ये आतम गुण कहलाते हैं।
रत्नत्रय धारण करने हित, हम इनकी भक्ति रचाते हैं॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा॥1॥

माया के बंधन में फँसकर, निज आतम को भरमाया है।
संसार तपन से बचने को, प्रभु चंदन चरण चढ़ाया है॥ सम्यग्दर्शन...

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रेभ्यो भवातापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा॥2॥

यह मधुर सुगंधित अक्षत के, मनहारे पुंज समर्पित हो।
हम अक्षय पद को पा जायें, क्षत-विक्षत भाव विसर्जित हो॥ सम्यग्दर्शन...

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा॥3॥

हम कमल-केतकी-बकुल-कुसुम, सुन्दर मनहारे पुष्प लिए।
श्रद्धा से आज चढ़ाते हैं, संग मन पंकज के पुष्प लिए॥ सम्यग्दर्शन...

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रेभ्यो कामबाणविनाशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा॥4॥

षट्रस भूषित बरफी आदिक, शुचि नेवज मिष्ट चढ़ाते हैं।
हम अपनी क्षुधा नशाने को, हे नाथ ! शरण में आते हैं ॥
सम्यग्दर्शन और ज्ञान-चरित, ये आतम गुण कहलाते हैं।
रत्नत्रय धारण करने हित, हम इनकी भक्ति रचाते हैं॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रेभ्यो क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा॥5॥

जग तमहारी घृत रत्नों के, हम सुंदर दीपक लाते हैं।
रत्नत्रय दीपक से जिनवर, निज आतम दीप जलाते हैं॥ सम्यग्दर्शन...

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा॥6॥

वह धूप दशांगी लाये हैं, जो मन को प्रमुदित करती है।
निज ज्ञानप्रभा प्रगटायेंगे, जो आतम कल्मष हरती है॥ सम्यग्दर्शन...

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रेभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा॥7॥

अंगूर-आम-अमरूद-पनस, वसु फल के थाल समर्पित हो।
हम मोक्ष महाफल को पायें, मम भौतिक चाह विसर्जित हो॥ सम्यग्दर्शन...

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रेभ्यो महामोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा॥8॥

जल-चंदन आदिक अष्ट द्रव्य, उनका इक थाल बनाया है।
अविचल अनर्घ पद पायेंगे, यह उत्तम भाव बनाया है॥ सम्यग्दर्शन...

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रेभ्यो अनर्घपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥9॥

सोरठा : भव दुःख शांति हेत, शांतिधारा नित करें।
समता सुख में लीन, पुष्पांजलि चढ़ाय के॥

शांतये शांतिधारा.... दिव्य पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

जाप्य मंत्र : ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सम्यक्दर्शनज्ञानचारित्रेभ्यो नमः।

जयमाला

दोहा : रत्नत्रय की भाव से, करें भक्ति त्रयकाल।
रत्नत्रय का लाभ ले, पढ़ें सदा जयमाल॥

(शंभु छंद)

श्री मोक्षमार्ग का आद्य चरण, सम्यग्दर्शन कहलाता है।
सम्यग्दर्शन के होने पर, भव का बंधन कट जाता है॥
मिथ्यात्व तिमिर के हटने पर, श्रद्धा का सूर्य निकलता है।
इस सूर्य किरण से भव्यों का, सम्यक्त्व बीज तब फलता है॥1॥

सम्यग्दर्शन के साथ ज्ञान, सम्यक्त्व ज्ञान कहलाता है।
जो केवलज्ञान दिवाकर का, इक मूलस्रोत कहलाता है॥
जब ज्ञान सुसम्यक् होता है, तब सत् आचरण सुहाता है।
निज मोहकर्म विगलित होते, शिवसुख पथ हमें लुभाता है॥2॥

मुनिपद बिन मुक्ति नहीं मिलती, चाहे तीर्थंकर क्यों ना हो।
व्रत बिन वसुकर्म नहीं नशते, चाहे प्रलयंकर क्यों ना हो॥
सम्यग्दर्शन और ज्ञान-चरित, मिल मुक्ति सौख्य दिलवाते हैं।
रत्नत्रय धारण करके ही, अरिहंत सिद्ध बन जाते हैं॥3॥

रत्नत्रय पालन करने हम, जिन-आगम-गुरु को ध्याते हैं।
इनकी शरणा पाने वाले, भवसागर से तिर जाते हैं॥
इस कारण मोक्ष महापथ की, शिवरूचि से चर्चा करते हैं।
हम 'गुप्ति' व्रतों के पालन हित रत्नत्रय अर्चा करते हैं॥4॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(गीता छंद)

जिन भक्त निर्मल भाव से यह 'रत्नत्रय पूजन' करें।
त्रैलोक्य सुख पावें सदा सुर-नर उसे वंदन करें॥
फिर धर क्षमादिक धर्म को शिवराज वे पा जायेंगे।
त्रय 'गुप्ति' व्रत को धारकर भवदुःख कभी ना पायेंगे॥

इत्याशीर्वादः दिव्य पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

श्री सम्यग्दर्शन पूजा

(शंभु छन्द)

भविजन आओ जिन गुण गाओ, सम्यग्दर्शन का ध्यान धरो।
रत्नत्रय को पाने हेतू, सत्श्रद्धा का आह्वान करो॥
सम्यग्दर्शन जो पाते हैं, वो भवसागर तिर जाते हैं।
भवसागर का शोषण करके, गुण गागर भर ले जाते हैं॥
इस कारण सम्यग्दर्शन का, भावों से वंदन करते हैं।
मन पंकज सहित सुमन लेकर, नित शत अभिनंदन करते हैं॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सम्यग्दर्शन ! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननम्।
ॐ ह्रीं अर्हं श्री सम्यग्दर्शन ! अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः-ठः स्थापनम्।
ॐ ह्रीं अर्हं श्री सम्यग्दर्शन ! अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्।

(हरिगीता छंद)

निर्मल हृदय निर्मल करण[1] से जल यहाँ अर्पण करें।
मम जन्म-मृत्यु विनाश हेतू विनय से अर्चन करें॥
जो मोक्षपथ के प्रथम पद की भाव से अर्चन करें।
वे भवभ्रमण से छूटकर निज आत्म में रंजन करें॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सम्यग्दर्शनाय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा॥1॥

केसर सुगन्धित मलय चंदन आज हम अर्पण करें।
संसार ताप विनाशकर निज आत्म का तर्पण करें॥ जो मोक्ष.....॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सम्यग्दर्शनाय संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा॥2॥

उज्ज्वल अखंडित अक्षतों को आज हम अर्पित करें।
अक्षय अखंडित सहज मंडित आत्मगुण अर्जित करें॥ जो मोक्ष.....॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सम्यग्दर्शनाय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा॥3॥

चम्पा-चमेली-मालती मचकुन्द सुन्दर सुमन ले।
निज काम रिपु[2] का नाश करने गुण सुमन अर्पण करें॥ जो मोक्ष.....॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सम्यग्दर्शनाय कामबाणविनाशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।।4॥

1. परिणाम, 2. शत्रु।

बरफी इमरती थाल भर-भर लाय निर्मल भाव से।
पापिन क्षुधा के नाश हित हम भक्ति करते चाव से॥
जो मोक्षपथ के प्रथम पद की भाव से अर्चन करें।
वे भवभ्रमण से छूटकर निज आत्म में रंजन करें॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सम्यग्दर्शनाय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा॥5॥

छाया तिमिर घन मोह का नहिं आत्म अवलोकन किया।
स्वर्णाभ घृत दीपक जला अब मोह तम खण्डन किया॥ जो मोक्ष.....॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सम्यग्दर्शनाय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा॥6॥

आठों करम की श्रृंखलायें रोकती जग जाल में।
हम धूप पावक में चढ़ायें ना फसें जंजाल में॥ जो मोक्ष.....॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सम्यग्दर्शनाय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा॥7॥

है मोक्षफल सुन्दर महाफल और सब निस्सार है।
जो नित्य नूतन फल चढ़ावे वो जगत से पार है॥ जो मोक्ष.....॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सम्यग्दर्शनाय महामोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा॥8॥

प्रभु दर्श से सब पाप नशते पार ना हो हर्ष का।
ऐसे अमल परिणाम ही हैं नाम सम्यग्दर्श का॥ जो मोक्ष.....॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सम्यग्दर्शनाय अनर्घपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥9॥

भेद प्रभेद गुण सहित सम्यग्दर्शन के अर्घ

(अडिल्ल छन्द)

निसर्गज सम्यक्त्वादि के अर्घ

नैसर्गज अधिगमज सुदर्शन हो रहा।
निश्चय अरु व्यवहार सुदर्शन मिल रहा॥
दोष रहित गुण सहित आत्मगुण को भजूँ।
अविचल पथ को धार सकल जग को तजूँ॥

अथ मंडलस्योपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

पर उपदेश बिना जो श्रद्धा गुण लहें।
ताहि निसर्गज सम्यग्दर्शन गुण कहें।।
ऐसे सम्यग्दर्शन को ध्याऊँ यहाँ।
तोड़ अखिल जग फंद वरूँ जिन सुख महा।।1।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री निसर्गज सम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पाँच लब्धि वा गुरु संबोधन जो लहे।
अधिगम श्रद्धा से उस आतम में रहें।। ऐसे...।।2।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अधिगमज सम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

निज आतम का अनुभव संवेदन जहाँ।
जानो निश्चय सम्यग्दर्शन गुण वहाँ।। ऐसे...।।3।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री निश्चय सम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देव शास्त्र गुरु पर सच्चा श्रद्धान जो।
मुक्ति कंत व्यवहार सुदर्शन मान वो।। ऐसे...।।4।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री व्यवहार सम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मोह सप्त के उपशम होने पर जहाँ।
प्रकटे उपशम सम्यग्दर्शन गुण वहाँ।। ऐसे...।।5।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री औपशमिक सम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मोह सप्त के क्षय अरु उपशम से प्रकट।
सम्यग्दर्शन पाकर पहुँचे जिन निकट।। ऐसे...।।6।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री क्षायोपशमिक सम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मोह सप्त के क्षय से जो प्रगटित हुआ।
सम्यग्दर्शन क्षायिक पा प्रमुदित हुआ।। ऐसे...।।7।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री क्षायिक सम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ (अडिल्ल छंद)

सम्यग्दर्शन गुण के नाना भेद हैं।
यह भी रत्नत्रय का पहला भेद है।। ऐसे...।।8।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री बहुविध सम्यग्दर्शनाय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

निःशंकितादि आठ अंग *(अडिल्ल छंद)*

अथ मंडलस्योपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

देव शास्त्र गुरु पर श्रद्धा शंका रहित।
फल देती है स्वर्ग मोक्ष वो सुख सहित।।
ऐसे सम्यग्दर्शन को ध्याऊँ यहाँ।
तोड़ अखिल जग फन्द वरूँ जिन सुख महा।।1।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री निःशंकितांगयुक्त सम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कांक्षा रहित जिनागम गुरु को ध्याइये।
बिन माँगे मनवांछित फल पा जाइये।। ऐसे...।।2।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री निःकांक्षितांगयुक्त सम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मुनि मुद्रा को देख घृणा मत कीजिये।
निर्विचिकित्सा धार सुधारस पीजिये।। ऐसे...।।3।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री निर्विचिकित्सांगयुक्त सम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मूढ़भाव को त्याग धरम पहिचान लो।
ज्ञान स्वयं में धार निजातम जान लो।। ऐसे...।।4।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अमूढ़दृष्ट्यंगयुक्त सम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोष छिपा धर्मी के गुण औषध भरे।
उपगूहन गुणधारी अवगुण को हरे।। ऐसे...।।5।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री उपगूहनांगयुक्त सम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

धर्म ध्यान से विचलित कोई हो रहा।
उसे धर्म में थिर करना सम्यक् कहा।। ऐसे...।।6।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री स्थितिकरणांगयुक्त सम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

धर्मी धर्म प्रति निश्छल मैत्री करे।
वत्सल अंग धरे वो सब कल्मष हरे।। ऐसे...।।7।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री वात्सल्यांगयुक्त सम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जप तप तीरथ से कर आत्म प्रभावना।
गुरु सेवा पूजा से धर्म प्रभावना।।
ऐसे सम्यग्दर्शन को ध्याऊँ यहाँ।
तोड़ अखिल जग फन्द वरूँ जिन सुख महा।।8।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री प्रभावनांगयुक्त सम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य (अडिल्ल छंद)

आठ दोष तज आठ अंग भवि पालना।
मन वच तन से अंग हीनता टालना।।
विकृत मंत्र निरर्थक हो यह मानिये।
मिथ्या रुचि भव सेतु न हो दृढ़ जानिये।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री निःशंकितादि अष्टांग संयुक्त सम्यग्दर्शनाय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सम्यक्त्व के संवेग आदि अष्ट गुणों का अर्घ

अथ मंडलस्योपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

(शेर छंद)

माया तजूँ संसार की संवेग है जगा।
जिनराज श्रमण धर्म से अनुराग है लगा।।
सम्यक्त्व गुण को धार मैं प्रभु को ध्याऊँगा।
जिनदेव की भक्ति से मुक्ति धाम पाऊँगा।।1।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री संवेगगुणयुक्त सम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

संसार से हुआ जिसे वैराग्य ज्ञान है।
निर्वेद गुण से बन गया वो ही महान् है।। सम्यक्त्व...।।2।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री निर्वेदगुणयुक्त सम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मुझसे अनादि काल से बहु पाप जो हुए।
निंदा करूँ मैं उनकी आत्म ज्ञान के लिए।। सम्यक्त्व...।।3।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री निंदागुणयुक्त सम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गुरुवर की शरण मिल गई गर्हा मैं करूँगा।
निर्ग्रन्थ पद को धार मुक्ति नार वरूँगा।।
सम्यक्त्व गुण को धार मैं प्रभु को ध्याऊँगा।
जिनदेव की भक्ति से मुक्ति धाम पाऊँगा।।4।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री गर्हागुणयुक्त सम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रभु दर्श पाये आत्म के विकार हट गये।
उपशांत भाव हो गया सब पाप छट गये।। सम्यक्त्व...।।5।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री उपशमगुणयुक्त सम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तन मन का समर्पण करूँ जिनराज चरण में।
भक्ति की माल मैं वरूँ स्वामी की शरण में।। सम्यक्त्व...।।6।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री भक्तिगुणयुक्त सम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वात्सल्य गुण की धार हृदय से बहाऊँगा।
करुणा दया धरम से आज मैं नहाऊँगा।। सम्यक्त्व...।।7।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री वात्सल्यगुणयुक्त सम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

त्रैलोक्य के सब जीव से हो मैत्री भावना।
करुणा सदा बढ़े यही है एक कामना।। सम्यक्त्व...।।8।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अनुकम्पागुणयुक्त सम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

(शेर छंद)

संवेग आदि आठ श्रद्धा गुण को बढ़ायें।
निर्मल करे विश्वास ये संयम को दिलाये।।
इनकी महार्चना करायें आत्म में मगन।
अर्घावली चढ़ाओ करो भाव से नमन।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री संवेगादि अष्टगुणयुक्त सम्यग्दर्शनाय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आज्ञा, मार्ग आदि दश प्रकार सम्यक्त्व के अर्घ

अथ मंडलस्योपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

(शेर छंद)

जिन शास्त्र गुरु का सदा निर्देश मानना।
आज्ञा सुदृष्टि से मिलेगी मुक्तिअंगना॥
सम्यक्त्व के दशभेद आप्तदेव[1] ने कहे।
इनको वरे जो भाव से वो आत्म सुख लहे॥1॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री आज्ञा सम्यक्त्वाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मुक्ति के मार्ग पे सदा श्रद्धान करूँगा।
चारित्र का पालन करूँ दृढ़ता मैं रखूँगा॥ सम्यक्त्व...॥2॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री मार्ग सम्यक्त्वाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अरिहंत गणधरादि ने उपदेश जो दिया।
सत्ज्ञान का दीपक जला प्रकाश कर दिया॥ सम्यक्त्व...॥3॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री उपदेश सम्यक्त्वाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आचार सूत्र से सही श्रद्धान जो लहा।
सम्यक्त्व सूत्र है उसे जिनराज ने कहा॥ सम्यक्त्व...॥4॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सूत्र सम्यक्त्वाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

करणानुयोग से हुआ जो मोह का शमन।
वो बीज सूत्र भी कराये पाप का वमन॥ सम्यक्त्व...॥5॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री बीज सम्यक्त्वाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

संक्षेप धर्म सूत्र से सम्यक्त्व पा लिया।
पाये जिनेन्द्रपाद[2] दृष्टि मोक्ष पा लिया॥ सम्यक्त्व...॥6॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री संक्षेप सम्यक्त्वाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री द्वादशांग से करे जो सत्य प्रतीति[3]।
विस्तार दृष्टि वो कराये धर्म से प्रीति॥ सम्यक्त्व...॥7॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री विस्तार सम्यक्त्वाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. जिनेन्द्र, 2. जिनेन्द्र चरण, 3. श्रद्धान्।

श्रुत को सुने बिना ही तत्वज्ञान हो गया।
सम्यक्त्व अर्थ पाया भव महान् हो गया॥
सम्यक्त्व के दशभेद आप्तदेव ने कहे।
इनको वरे जो भाव से वो आत्म सुख लहे॥8॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अर्थ सम्यक्त्वाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सम्पूर्ण द्वादशांग का हुआ जिसे है ज्ञान।
अवगाढ़ दृष्टि पायें वो श्रुत केवली महान॥ सम्यक्त्व...॥9॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अवगाढ़ सम्यक्त्वाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सम्पूर्ण ज्ञेय जिनके ज्ञान में झलक गये।
परमावगाढ़ पाया वे जिनेश हो गये॥ सम्यक्त्व...॥10॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री परमावगाढ़ सम्यक्त्वाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्यं (शेर छन्द)

भक्ति से अर्घ थाल लिये अर्चना करें।
सम्यक्त्व बोध लाभ हेतु वंदना करें॥
सम्यक्त्व दश प्रकार के अरिहंत ने कहें।
इनका जो पाये भाव से वो आत्म सुख लहे॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री आज्ञादि दशविध सम्यक्त्वाय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

25 दोष रहित सम्यक्त्व के अर्घ

अथ मंडलस्योपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

(दोहा)

देव शास्त्र गुरु धर्म में, शंका करना पाप।
इनकी सम्यक् अर्चना, नाशे सब अभिशाप॥1॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री शंका दोष रहित सम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वांछा से श्रद्धा करे, वो नर दुष्ट अजान।
विषय लालसा त्याग दो, करलो प्रभु गुणगान॥2॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री कांक्षा दोष रहित सम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

घृणा करे जो धर्म से, बने घृणा का पात्र।
घृणा त्याग कर पूजते, देव गुरु जिन शास्त्र॥3॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री जुगुप्सा दोष रहित सम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भवदधि में डूबे वही, जिसका जड़ विश्वास।
सत्य जिनागम श्रमण में, रखो अटल विश्वास॥4॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री मूढ़ दृष्टि दोष रहित सम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

परनिन्दक चाण्डाल है, महापाप की खान।
दोष वाद में मूक बन, करो अटल श्रद्धान॥5॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अनुपगूहन दोष रहित सम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मोक्ष मार्ग रत जीव को, विचलित करना पाप।
इस दुर्गुण को त्याग दो, मिटे सकल संताप॥6॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अस्थितिकरण दोष रहित सम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भव बंधन का मूल है, धर्मी से दुर्भाव।
वैर कलह को त्याग दो, सबसे हो सद्भाव॥7॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अवात्सल्य दोष रहित सम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

खोटे भावों से बढ़े, मिथ्या धर्म प्रभाव।
सब दुर्गुण के त्याग से, बढ़ता धर्म प्रभाव॥8॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अप्रभावना दोष रहित सम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मिथ्या मद निजज्ञान का, करे सर्व का नाश।
सम्यक्श्रद्धा से करो, सम्यग्ज्ञान प्रकाश॥9॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री ज्ञानमद रहित सम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ख्याति लाभ सम्मान की, रखता है जो आस।
प्रभु पूजा से दूर हो, बने पाप का दास॥10॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पूजामद दोष रहित सम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उत्तम कुल पाकर करे, उस पर जो अभिमान।
वंचित हो सन्मार्ग से, छूटे आतम ध्यान॥11॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री कुलमद रहित सम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जाति मान तुम ना करो, कहते हैं भगवान्।
अविचल श्रद्धा भाव से, कर लो प्रभु का ध्यान॥12॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री जातिमद रहित सम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

बल के मद से बल घटे, हो निज गुण की हान।
बल से सम्यक् तप करो, बन जाओ भगवान्॥13॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री बलमद रहित सम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

धन का मद करना नहीं, लक्ष्मी चंचल जान।
दान विनय आराधना, देती वैभव खान॥14॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री ऋद्धि (धन) मद रहित सम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तप मद कर तुम ना करो, मिथ्या तप का क्लेश।
सम्यक् तप आराधना, हरे सर्व संक्लेश॥15॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री तप मद रहित सम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तन मद से ना कर सका, कोई निज कल्याण।
इस काया से हम करें, प्रभुवर का नित ध्यान॥16॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री देह मद रहित सम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

खोटे जिनके भाव हैं, परिग्रह जिनके साथ।
ऐसे कुगुरु को कभी, नहीं झुकाओ माथ॥17॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री कुगुरु अनायतन दोष रहित सम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अस्त्र शस्त्र नारी रखे, राग द्वेष आधीन।
वह कुदेव नौका उपल, करे किसे स्वाधीन॥18॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री कुदेव अनायतन दोष रहित सम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शास्त्र नहीं वह शस्त्र है, जो दे हिंसा ज्ञान।
भटकाये भवसिंधु में, कहते हैं भगवान॥19॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री कुशास्त्र अनायतन दोष रहित सम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

खोटे गुरु के भक्त जन, पाते कष्ट सदैव।
उनकी संगति को तजो, नशे पाप स्वयमेव॥20॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री कुगुरु पूजा दोष रहित सम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भक्त कुदेवों का सदा, पाये दुःख निधान।
भव दुःख से बचना यदि, करो सत्य श्रद्धान॥21॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री कुदेव पूजा दोष रहित सम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मिथ्या आगम से मिले, नरकादिक दुःख द्वेष।
दुर्नय तज पाओ सुनय, रहे न अघ लवलेश॥22॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री कुशास्त्र पूजा दोष रहित सम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मरकर जल विष अग्नि से, माने मुक्ति निधान।
लोकमूढ़ता है वही, शीघ्र तजो मतिमान॥23॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री लोकमूढ़ता दोष रहित सम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तजकर खोटे देव को, पूजो अर्हत देव।
देव मूढ़ता तज वरों, सम्यक् ज्ञान सदैव॥24॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री देवमूढ़ता दोष रहित सम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मिथ्या गुरु की अर्चना, कष्टों का भण्डार।
सुख वैभव को नाशती, भटकाती मझधार॥25॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री गुरुमूढ़ता दोष रहित सम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

शंका आदिक् दोष के, कुल पच्चीस प्रभेद।
इनको तज नवकोटि से, मिले न दुःख व क्लेद॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री शंकादिक पंचविंशति दोष रहित सम्यग्दर्शनाय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नरकादिक दोष निवारक श्रेष्ठ पद प्रदायक सम्यक्त्व के अर्घ

अथ मंडलस्योपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

(शंभु छंद)

नरकादिक गति दुःखदायी है, छेदन-भेदन-मारण-कारी।
अघ द्वेष कलह अरु क्षुधा तृषा, आदिक से युत त्रासन कारी॥
श्रद्धा गुण से जो युक्त रहे, वो नरक कभी ना जाता है।
नरकायु से जो बद्ध हुआ, वह पहले तक ही जाता है॥1॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री नरकायु निवारक सम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

एकेन्द्रिय से पंचेन्द्री तक, तिर्यंच गति दुःखदायी है।
जिसमें पीड़ा छेदन भेदन, वध बंधन ना सुखदायी है॥
सम्यग्दर्शन का धारी जो, तिर्यंच गति नहीं पाता है।
तिर्यक् आयु गर पाये तो, वह भोगभूमि में जाता है॥2॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री तिर्यंचायु निवारक सम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जो काम भाव से पीड़ित है, विषयादिक वसु दुर्भोगों से।
तन से इन्द्रिय सुख नहिं पायें, आकुलित रहे दुर्योगों से॥
कापुरुष नपुंसक निम्नगोत्र, सम्यक्त्वी से भयभीत रहे।
रत्नत्रयधारी महापुरुष, जग बंधन से अतिभीत रहे॥3॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री नपुंसक पर्याय निवारक सम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जो पराधीन दुभावों से, उत्तम संहनन से हीन रहे।
मिथ्यात्व सहित भव भ्रमण करें, मायाचारी में लीन रहे॥
नारी अबला महिला कन्या, सम्यक्त्वी कभी नहीं बनता।
वो आत्म रमण में लीन रहे, मिथ्यात्वी कभी नहीं बनता॥4॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री स्त्री पर्याय निवारक सम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कुलहीन दरिद्री विकलांगी, अल्पायु पापों से होता।
श्रद्धा विपरीत रहे जिसकी, संक्लेश व्यथाओं से रोता॥
श्रद्धा गुण के धारी भविजन, इन सब पापों का नाश करें।
वे शिव पथ के राही बनकर, निज केवलज्ञान प्रकाश करें॥5॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री दुष्कुल, विकलांग, अल्पायु, दारिद्रयं च निवारक सम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उत्साह, पराक्रम विद्यायें, यशवर्धन विजय महादृढ़ता।
श्रमणों की सेवा दानशील, सद्आशय रूप अनाकुलता॥
उत्तम कुल आयुष त्याग भाव, सज्जन मानव के होते हैं।
सम्यक्त्व दिवाकर मानव के, ये सहज सुलभ गुण होते हैं॥6॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री उत्साह पराक्रम दानशील गुरु भक्त्यादि उत्तम गुण संयुक्त मनुष्य भव प्रदायकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अणिमा महिमा लघिमा गरिमा, आदिक वसु गुण निधियाँ पावे।
तीर्थंकर के कल्याणक में, सुरनायक[1] जिन महिमा पावें।
अविचल श्रद्धा धरने वाले, उत्तम इन्द्रादिक बनते हैं।
सुरगति से च्युत हो मनुज मुनी, बन सिद्ध निरंजन बनते हैं॥7॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अणिमादि अष्टऋद्धिसम्पन्न इन्द्रादिक विभूतिपद प्रदायकाय सम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नव निधियाँ चौदह रत्न मिले, षट्खण्ड विजेता होते हैं।
पूर्वार्जित तप के कारण वे, नर नृप[2] के नेता होते हैं॥
चक्रीपद पाकर भी वो नर, विषयों में नहीं उलझते हैं।
जिन आगम गुरु की अर्चा से, उनके भव भाव सुलझते हैं॥8॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री नवनिधि चतुर्दश रत्न संयुक्त चक्रवर्ती पद प्रदायकाय सम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हर प्राणी जग में सुखी रहे, यह भाव हृदय में भाते हैं।
जिनराज शरण में आकर वे, तीर्थंकर पद को पाते हैं॥
सुर नर किन्नर गणधर पूजित, [3]वृषचक्र उन्हें मिल जाता है।
रत्नत्रय पाने हर प्राणी, उनके चरणों में आता है॥9॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री धर्मचक्र प्रवर्त्तक तीर्थंकर पद प्रदायकाय सम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जहाँ रोग शोक प्रतिरोध नहीं, मन में कोई प्रतिशोध नहीं।
उद्बोध रोग प्रतिबोध नहीं, आतम का सच्चा बोध वहीं॥
ऐसे गुण पाने वाले हैं, श्री सिद्ध जिनेश्वर हितकारी।
सम्यग्दर्शन का फल अतिशय, सब जग जन को मंगलकारी॥10॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सिद्धपद प्रदायक सम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य (गीता छंद)

सब दोष वा दुर्गुण रहित, सद्गुण सहित सम्यक्त्व है।
निज आत्म सिद्धी का, प्रथम सोपान भी सम्यक्त्व है॥

1. इन्द्र, 2. राजा, 3. धर्म चक्र।

उसके समस्त प्रभेद को, पूर्णार्घ अर्पण हम करें॥
हे नाथ ! उसका दो सुफल, हम तीन रत्नों को वरें॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री शंकादि पंचविंशति दोष रहित अष्ट गुण सहित अष्टांग सम्यग्दर्शनाय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा : रत्न कुंभ जल से भरें, करें सुखद जलधार।
समकित रत्न सुलाभ हित, अर्पें सुमन अपार॥

शांतये शांतिधारा.... दिव्य पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

जाप्य मंत्र : ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्रेभ्यो नमः।

जयमाला

दोहा : गुणमाला सम्यक्त्व की, देती ज्ञान अपार।
मोक्ष महल के हेतु हम, आये प्रभु के द्वार॥

शेर छंद (तर्ज- हे दीनबंधु...)

सम्यक्त्व मोक्षमार्ग की पहली इकाई है।
सुरेन्द्र-इन्द्र-खगपति ने कीर्ति गाई है॥
आगम-गुरु-जिनेन्द्र पर श्रद्धान जो करें।
सम्यक्त्व धार आत्म का उत्थान वो करें॥1॥

ये आठ अंग आठ गुण से पूर्ण कहाता।
भव्यात्मा के कर्मशैल चूर्ण कराता॥
जिनदेव-श्रुत मुनीश पे संदेह ना करो।
चारित्र ज्ञान धार मुक्ति अंगना वरो॥2॥

निष्काम भक्ति से मिलेंगी सर्व सिद्धियाँ।
सेवा भी तीन रत्न की दिलाये ऋद्धियाँ॥
त्रय मूढ़ता तजो अमूढ़दृष्टि को वरो।
औरों के दोष देख के तुम उपवृंहण करो॥3॥

पथ भ्रष्ट जीव का करो तुम स्थितिकरण।
गो वत्स के समान होवे नेह का वरण।।
सद्भावना से होवेगी सच्ची प्रभावना।
अष्टांग पूर्ण दृष्टि पाऊँ ये ही कामना।।4।।

सम्यक्त्वी प्रथम नरक छोड़ अन्य ना जावें।
नारी पशु या भुवन त्रय का स्वर्ग ना पावें।।
दारिद्रता के कष्ट को वो पाये ना कभी।
कुलहीन अल्पमृत्यु को वो पाये ना कभी।।5।।

त्रेषठ शलाका पुरुष में वो जन्म पायेगा।
क्रम-क्रम से वो ही भव्य मुक्ति धाम जायेगा।।
अक्षय अनंत आत्मलीन सौख्य है जहाँ।
सिद्धात्मा अनंत नित विराजते यहाँ।।6।।

सम्यक्त्व युक्त आत्मा को शीश नवायें।
संसार भ्रमण नाश हेतू नाथ को ध्यायें।।
ऐसी अखण्ड सौख्यदायी दृष्टि वरेंगे।
त्रय 'गुप्ति' धार करके, कर्मकृष्टि करेंगे।।7।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सम्यग्दर्शनाय जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(गीता छंद)

जिन भक्त निर्मल भाव से यह 'रत्नत्रय पूजन' करें।
त्रैलोक्य सुख पावें सदा सुर-नर उसे वंदन करें।।
फिर धर क्षमादिक धर्म को शिवराज वे पा जायेंगे।
त्रय 'गुप्ति' व्रत को धारकर भवदुःख कभी ना पायेंगे।।

इत्याशीर्वादः दिव्य पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

श्री सम्यग्ज्ञान पूजा

(गीता छन्द)

शिवपुर महापथ के पथिक त्रयरत्न को धारण करें।
पाये परम दृग[1]-ज्ञान-व्रत वसुकर्म निरवारण करें।।
ऐसे सुसम्यक्ज्ञान का हम आज आह्वानन करें।
कैवल्य ज्योति प्रकाश हित निज आत्म में थापन करें।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सम्यग्ज्ञान ! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननम्।
ॐ ह्रीं अर्हं श्री सम्यग्ज्ञान ! अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः-ठः स्थापनम्।
ॐ ह्रीं अर्हं श्री सम्यग्ज्ञान ! अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्।

निज आत्म क्षालन के लिए हम स्वच्छ जलघट ला रहें।
निज कर्म दोष निवारने जिनवर शरण में आ रहें।।
अज्ञान तम से दुःखित हम त्रैलोक्य में भटके फिरें।
सद्ज्ञान की पूजा करें दुर्वार भवसिंधु तिरें।।1।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सम्यग्ज्ञानाय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

मलयागिरी का शुभ्र चंदन देह दाहकता हरे।
चंदन प्रभु चरणन् चढ़ा हम आत्म पातकता हरें।। अज्ञान तम.. ।।2।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सम्यग्ज्ञानाय संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

अक्षय निधी के लाभ हित हम आज अक्षत ला रहे।
हो ज्ञान-अक्षय सौख्य-अक्षय भाव अक्षत भा रहे।। अज्ञान तम.. ।।3।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सम्यग्ज्ञानाय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

नाना तरह के पुष्प ले पुष्पांजलि अर्पण करें।
आत्मोत्थ आनंद लाभ हित हम स्वयं को अर्पण करें।। अज्ञान....।।4।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सम्यग्ज्ञानाय कामबाणविनाशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

षट्रस मनोहर व्यंजनों से ज्ञान की अर्चा करें।
नाशें क्षुधा का रोग हम निज आत्म परिचर्या करें।। अज्ञान....।।5।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सम्यग्ज्ञानाय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1.सम्यग्दर्शन।

कैवल्य ज्योति प्रतीक दीपक तम हरे अज्ञान का।
ज्ञानावरण के नाश हित मम लक्ष्य हो सुज्ञान का॥
अज्ञान तम से दुःखित हम त्रैलोक्य में भटके फिरें।
सद्ज्ञान की पूजा करें दुर्वार भवसिंधु तिरें॥6॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सम्यग्ज्ञानाय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

दशगंध मनहर धूप को पावक जला सुरभित करें।
तव भक्ति काटे कर्म को सर्वात्म को प्रमुदित करे॥ अज्ञान....॥7॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सम्यग्ज्ञानाय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

रसदार ताजे मिष्ठ फल से ज्ञान की अर्चा करें।
हम शिव सदन की भावना से ज्ञान की चर्चा करें॥ अज्ञान....॥8॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सम्यग्ज्ञानाय महामोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल-गंध-अक्षत-पुष्प आदिक अर्घ भरकर ला रहे।
मद मोह विषयादिक तजे हम ज्ञान महिमा गा रहे॥ अज्ञान....॥9॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सम्यग्ज्ञानाय अनर्घपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पंच विध सम्यग्ज्ञान के अर्घ

अथ मंडलस्योपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

(शंभु छन्द)

इन्द्रिय वा मन से बोध जगे, मतिज्ञान वही कहलाता है।
सम्यग्दर्शन की संगति से, वह ज्ञान सुमति हो जाता है॥
इस सुमति ज्ञान की पूजा, हम श्रद्धा से करने आये हैं।
सद्ज्ञानमयी नौका पाकर, भवसागर तिरने आये हैं॥1॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सुमतिज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जो सुमतिज्ञान पूर्वक होता, वह सुश्रुत ज्ञान कहाता है।
इस द्रव्य भाव श्रुत का ज्ञाता, श्रुतज्ञान ज्योति विकसाता है॥

कैवल्य बोधि के बीजभूत, इस श्रुत की अर्चा करते हैं।
श्रुत ज्ञान दिवाकर मुनिगण संग, आगम की चर्चा करते हैं॥2॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सुश्रुतज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

द्रव्यादि चतुष्टय युत होकर, मूर्तिक द्रव्यों को जान रहा।
सम्यग्दर्शन युत अवधिज्ञान, ज्ञानी सम्यक् गुण मान रहा॥
नाना भेदों युत अवधिज्ञान, इसकी पूजा करने आये।
शुचि अवधिज्ञान गुण को पाने, संयम साधन करने आये॥3॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सुअवधिज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जो स्वपर मनोगत को जाने, वह मनःपर्यय कहलाता है।
यह द्रव्यभाव संयमधारी, गुरुवर को ही हो पाता है॥
ऋजु विपुल मनःपर्ययज्ञानी, उनको हम वंदन करते हैं।
निज भाव विशुद्धि को पाने, उनके चरणों को यजते[1] हैं॥4॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री मनःपर्ययज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सब ज्ञेयों का जाननहारा, यह केवलज्ञान निराला है।
जो एक समय में एक साथ, करता अंतस उजियाला है॥
कैवल्य ज्ञान की पूजा हम, त्रय योगों से करने आये।
अध्यात्म शिखर चढ़ने हेतू, उत्तम संयम वरने आये॥5॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री केवलज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य (शंभु छंद)

सद्ज्ञान पंच संकट हारी, भव्यों को जो सुखकारी है।
हम इनका मन से ध्यान करें, जो सर्वज्ञेय ज्ञातारी हैं॥
आठों द्रव्यों का थाल सजा, पूजन वंदन नित करते हैं।
अंतस् वीणा को झंकृत कर, हम अर्घ समर्पण करते हैं॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पंचविध सम्यग्ज्ञानाय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. पूजना।

अष्टांग सम्यग्ज्ञान के अर्घ

अथ मंडलस्योपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

(काव्य छंद)

पठन ''काल'' हो योग्य, मन आनन्दित करता।
बोधि समाधि निधान, पाप तिमिर को हरता॥
अष्ट अंग युत ज्ञान, ज्ञान ज्योति प्रगटावें।
पूजा के शुभ भाव, ज्ञान सुधा बरसावें॥1॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री कालाचार युक्त सम्यग्ज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ज्ञान विनय का भाव, ''विनयाचार'' कहाता।
ज्ञानी का सत्कार, सम्यग्ज्ञान कराता॥ अष्ट अंग...॥2॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री विनयाचार युक्त सम्यग्ज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

त्याग स्रोत ''उपधान'', त्याग वृत्ति प्रगटावें।
करें ग्रंथ आरंभ, गुरु कुछ त्याग करावें॥ अष्ट अंग...॥3॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री उपधानाचार युक्त सम्यग्ज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आगम का ''बहुमान'', निर्मल ज्ञान बढ़ाता।
ज्ञानी गुरु का मान, निज का ज्ञान जगाता॥ अष्ट अंग...॥4॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री बहुमानाचार युक्त सम्यग्ज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गुरु से पाकर ज्ञान, उनको नहीं भुलाओ।
वरो ''अनिन्हव'' भाव, भेद ज्ञान विकसाओ॥ अष्ट अंग...॥5॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अनिन्हवाचार युक्त सम्यग्ज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्रुत के पद औ ''शब्द'', उन पर श्रद्धा करना।
उच्चारण कर शुद्ध, शुद्ध अर्थ को वरना॥ अष्ट अंग...॥6॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री शब्दशुद्धि युक्त सम्यग्ज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ पूर्ण है शब्द, इनका अर्थ समझ लो।
सारभूत का लाभ, नय प्रमाण से कर लो॥ अष्ट अंग...॥7॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अर्थशुद्धि युक्त सम्यग्ज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शब्द अर्थ का ज्ञान, भविजन नित जो करता।
रत्नत्रय व्रत पाल, ''उभय शुद्धि'' को वरता॥
अष्ट अंग युत ज्ञान, ज्ञान ज्योति प्रगटावें।
पूजा के शुभ भाव, ज्ञान सुधा बरसावें॥8॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री उभयशुद्धि युक्त सम्यग्ज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य (काव्य छंद)

सम्यग्दर्शन साथ, सम्यग् श्रुत को धारो।
अष्टम वसुधा हेत, आठ दोष परिहारो॥
वर सत् ज्ञान अपार, निर्मल संयम पाओ।
ले पूजा के थाल, बहुश्रुत भक्ति रचाओ॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अष्टांगसम्यग्ज्ञानाय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पंचविध सम्यग्मतिज्ञान के अर्घ

अथ मंडलस्योपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

(सखी छन्द)

इन्द्रिय औ मन के द्वारा, रूपी द्रव्यों को जाना।
उसको मति कहते ज्ञानी, हम उसके ही श्रद्धानी॥1॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सम्यग्मतिज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जो विषय पूर्व में जाना, उसका स्मृति में आ जाना।
वह स्मृतिज्ञान जगजाना, उसको सब मन से ध्याना॥2॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सम्यग्स्मृतिज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(शंभु छंद)

जो वर्तमान को देख पूर्व, की घटना याद दिलाता है।
गुरु आगम की स्मृति दिलवाये, वह प्रत्यभिज्ञान कहाता है॥
ऐसी निर्मल पावन प्रज्ञा, जिनराज हमें अब मिल जाये।
सत् प्रत्यभिज्ञान जगे ऐसी, श्रद्धा हम सबको मिल जाये॥3॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सम्यग्संज्ञाज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

साधन बिन साध्य नहीं मिलता, कारण बिन कार्य नहीं होता।
अविनाभावी संबंध ज्ञान, अज्ञान तिमिर[1] संशय खोता॥
व्याप्ती को चिंता ज्ञान कहें, जो सम्यग्ज्ञान कराता है।
इस सुमतिज्ञान का अर्चन ही, मति विभ्रम[2] दूर भगाता है॥4॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सम्यग्चिंताज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

साधन से साध्य ज्ञान को ही, अनुमान ज्ञान कहते जिनवर।
जिन आगम गुरु सच्चे साधन, ये बतलाते हैं सब ऋषिवर॥
अनुमान ज्ञान की अर्चा से, सम्यक् सुबोध मिल जाता है।
सम्यक् सुबोध रवि किरणों से, भव्यात्म सुमन खिल जाता है॥5॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सम्यग्अभिनिबोधिकज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्यं (शंभु छंद)

मति स्मृति वा संज्ञा चिंता, सम अभिनिबोध ये पर्यायें।
अवग्रह ईहादिक चार प्रथम, ये भेद मति के कहलायें॥
छत्तीस अधिक वा तीन शतक, कुल भेद मति के होते हैं।
निज मति को सम्यक्मति, करने हम पूरण अर्घ संजोते हैं॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सम्यक्मतिज्ञानाय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्रुतज्ञान के अर्घ

अथ मंडलस्योपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

(दोहा)

प्रथम अंग आचार है, जिसमें श्रमणाचार।
पद संख्या अठ दस सहस, मोक्ष महल का द्वार॥1॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अष्टादशसहस्रपदसंयुक्त आचारांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दूजे सूत्र कृतांग में, पद छत्तीस हजार।
जिसमें मिलता भव्य को, स्वपर समय का सार॥2॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री षट्त्रिंशत्सहस्रपदसंयुक्त सूत्रकृतांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. अंधेरा, 2. संशय।

जीवादिक षट् द्रव्य के, भेद अनेक प्रकार।
वर्णन इसथानांग में, पद ब्यालीस हजार॥3॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री द्विचत्वारिंशद्सहस्रपदसंयुक्त स्थानांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

एक लाख चौंसठ सहस, पदयुत समवायांग।
षट् द्रव्यों की तुल्यता, कहता चौथा अंग॥4॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री एकलक्षचतुषष्टिसहस्रपदसंयुक्त समवायांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गणधरादि के प्रश्न का, उत्तर युत विस्तार।
प्रज्ञप्ति व्याख्या करें, वर्णन विविध प्रकार॥5॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री द्वयलक्ष अष्टाविंशतिसहस्रपदसंयुक्त व्याख्या प्रज्ञप्त्यंगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सहजकथा जिनधर्म की, कहता ज्ञातृ कथांग।
अमृत बोधिक प्रेरणा, देता छठवां अंग॥6॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पंचलक्षषट्पंचाशतसहस्रपदसंयुक्त ज्ञातृधर्मकथांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उपासकाध्ययनांग में, श्रावक के व्रत आदि।
करो अर्चना भाव से, देवे बोधि समाधि॥7॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री एकादशलक्षसप्ततिसहस्रपदसंयुक्त उपासकाध्ययनांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तीर्थंकर के तीर्थ में, दस मुनि बने महान्।
उपसर्गों को जीतकर, पाया मोक्ष निधान॥8॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री त्रयोविंशतिलक्षाअष्टाविंशतिसहस्रपदसंयुक्त अंतकृद्-दशांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दश मुनिवर उपसर्ग सह, बने अनुत्तर देव।
हर तीर्थंकर काल में, देव करें नित सेव॥9॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री द्वानवतिलक्षाःचतुचत्वारिंशद्सहस्रपदसंयुक्त अनुत्तरोपपादिकदशांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रश्न व्याकरण अंग से, होता आत्मप्रकाश।
आक्षेपिणी आदिक कथा, करती ज्ञान विकास॥10॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री त्रिनवतिलक्षाःषोडशसहस्राणिपदसंयुक्त प्रश्नव्याकरणांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्म दशा फल को कहे, यह विपाक सूत्रांग।
श्रुत पद की कर अर्चना, वर एकादश अंग॥11॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री कोटिचतुरशीतिलक्षाःपदसंयुक्त विपाकसूत्रांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इक सौ आठ करोड़ वा, अड़सठ लख पद धार।
दृष्टि प्रवाद जिनेश गत, होता पंच प्रकार॥12॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अष्टोत्तरशतःकोटि, अष्टाषड्लक्षाः षड्पंचाशत्सहस्रपदसंयुक्त दृष्टिप्रवादांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चौदह पूर्व के अर्घ (दोहा)

जीवादिक षट्द्रव्य औ, उनके गुण पर्याय।
प्रथम पूर्व उत्पाद में, जिनवर हमें बताय॥1॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री कोटिपदसंयुक्त उत्पादप्रवादपूर्वांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सप्त तत्त्व नव अर्थ हैं, जिसमें क्रम अनुसार।
आग्रायणीय पूर्व से, होता भ्रम परिहार॥2॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री षण्णवतिलक्षः पदसंयुक्त आग्रायणीप्रवादपूर्वांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्रुत वीर्यानुप्रवाद में, वीरों का पुरुषार्थ।
प्रबल पराक्रम के धनी, पायें निज परमार्थ॥3॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सप्ततिलक्षःपदसंयुक्त वीर्यानुप्रवादपूर्वांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अस्ति नास्ति का ज्ञान दे, अस्ति नास्ति प्रवाद।
मिट जायें इस जगत के, जिससे वाद विवाद॥4॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री षष्टिपदलक्षःपदसंयुक्त अस्तिनास्तिप्रवादपूर्वांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पाँच तरह के ज्ञान को, कहता ज्ञान प्रवाद।
इसकी अर्चा से मिटे, जीवों के अवसाद[1]॥5॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री एकोनपदकोटिपदसंयुक्त ज्ञानप्रवादपूर्वांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

छठवें सत्य प्रवाद में, सत्य धरम का रूप।
जो इसकी पूजा करे, बन जाता शिवभूप॥6॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पंचकोटिकषट्पद संयुक्त सत्यप्रवाद पूर्वांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. दुःख।

सप्तम आत्म प्रवाद में, जीवों के अधिकार।
आतम ध्यानी ही बने, निजानंद अविकार॥7॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री षट्विंशतिकोटिपदसंयुक्त आत्मप्रवादपूर्वांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जो जैसी करनी करें, वैसा हो परिणाम।
अष्टम कर्म प्रवाद पढ़, बनो स्वयं अभिराम॥8॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अशीतिपदलक्षैकपदकोटि पदसंयुक्त कर्मप्रवादपूर्वांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रत्याख्यान प्रवाद पा, कर लो प्रत्याख्यान।
प्रत्याख्यानी को मिले, अंतिम मोक्ष महान॥9॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री चतुरशीतिलक्षःपदसंयुक्त प्रत्याख्यानप्रवादपूर्वांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इस विद्यानुप्रवाद में, सब विद्या का ज्ञान।
श्रद्धा से अर्चा करो, पाओ सम्यक्ज्ञान॥10॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री कोटिदशलक्षःपदसंयुक्त विद्यानुप्रवादपूर्वांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गर्भादिक् कल्याण का, जो देता है ज्ञान।
उस कल्याण प्रवाद का, कर लो भविजन ध्यान॥11॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री षट्विंशतिकोटिपदसंयुक्त कल्याणप्रवादपूर्वांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वैद्यकर्म मंत्रादि का, है जिसमें भण्डार।
इस प्राणानुप्रवाद से, होता जग उपकार॥12॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री त्रयोदशकोटिपदसंयुक्त प्राणानुप्रवादपूर्वांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

क्रिया विशाल प्रवाद में, शिल्प कला का बोध।
छन्द शास्त्र व्याकरण से, कर निज का संबोध॥13॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री नवकोटिपदसंयुक्त क्रियाविशालप्रवादपूर्वांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तीन लोक का सार है, मुक्ति धाम अविराम।
लोकबिन्दु श्रुत सार से, पाओ पद निष्काम॥14॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री द्वादशकोटिपंचाशत्लक्षःपदसंयुक्त लोकबिन्दुसारप्रवादपूर्वांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य (हरिगीता छंद)

श्रुत अंग एकादश चतुर्दश, पूर्व की शुभ वन्दना।
जल चंदनादिक अर्घ से, श्रुतज्ञान की यह अर्चना॥
जिन भक्त निर्मल भाव से, यह रत्नत्रय पूजन करें।
त्रय 'गुप्ति' व्रत को धारकर, सब कर्म का भंजन करें॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री एकादश अंग चतुर्दश पूर्वसंयुक्त सम्यक्श्रुतज्ञानाय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अवधिज्ञान के अर्घ

अथ मंडलस्योपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

(कुसुमलता छंद)

द्रव्य क्षेत्र अरु काल भाव की, मर्यादा युत अवधिज्ञान।
निश्चित भव में साथ रहे वह, कहलाता भव प्रत्यय ज्ञान॥
सम्यक्ज्ञानी इसको पाकर, करते निज कर्मों का नाश।
इसकी अर्चा करूँ भाव से, होवे मुक्तिपुरी में वास॥1॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री भवप्रत्यय सुअवधिज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्म अवधि ज्ञानावरणी के, क्षयोपशम से जागा ज्ञान।
गुण प्रत्यय निज में ही होता, यह है आतम गुण की खान॥
नाना भेदों को धारण कर, ले जाता है मुक्ति धाम।
ऐसे अवधिज्ञान की अर्चा, देती अक्षय सुख अविराम॥2॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री गुणप्रत्यय सुअवधिज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

साथ-साथ जीवों के जावें, यह अनुगामी ज्ञान महान्।
जिसको पाकर सम्यक्ज्ञानी, करते निज-पर का कल्याण॥
त्रय भेदों से सहित ज्ञान ही, भव्यों को दे बोधि विशाल।
करूँ अर्चना विशद विनय से, होवे क्षय मेरा जग जाल॥3॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अनुगामी सुअवधिज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भव्य जीव संग अन्य क्षेत्र में, अवधिज्ञान जाता गुणखान।
अवधिज्ञान वह भू अनुगामी, करता है पापों को म्लान॥
एक देश प्रत्यक्ष ज्ञान भी, करता दुःखियों का कल्याण।
अष्ट द्रव्य से पूजा करके, पा जायें हम भी निर्वाण॥4॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री क्षेत्रानुगामी सुअवधिज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भव अनुगामी अवधिज्ञान, भी परभव में करता उत्थान।
इसका धारक सम्यक्ज्ञानी, पावे स्व-पर भेद विज्ञान॥
स्व-पर भेद विज्ञान जगाकर, करता जीवों का उद्धार।
ऐसे गुण की अर्चा कर लो, होगा निश्चय बेड़ा पार॥5॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री भवानुगामी सुअवधिज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शुक्ल पक्ष के शशि के जैसी, कला बढ़े मनहर अविराम।
वर्धमान वह अवधिज्ञान है, पायें योगीजन निष्काम॥
ऐसे अवधिज्ञान की पूजा, करें ज्ञान अवरोध विनाश।
अष्ट द्रव्य से करूँ अर्चना, श्रद्धा मय बीते हर श्वास॥6॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री वर्धमान सुअवधिज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कृष्ण पक्ष में घटे चन्द्रमा, हीयमान है ऐसा ज्ञान।
रत्नत्रय के धारी सज्जन, करते इससे निज कल्याण॥
अल्पकाल जलकर भी दीपक, करता है जग को आलोक।
ऐसा सम्यक् अवधिज्ञान का, आराधन हरता निज शोक॥7॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री हीयमान सुअवधिज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जैसे दिनकर एक रूप हो, देता सबको दिव्य प्रकाश।
सम्यक् अवधि अवस्थित तैसे, करता निर्मल ज्ञान विकास॥
निर्मल अवधि अवस्थित पाकर, हम भी वर लें केवलज्ञान।
अष्टद्रव्य से पूजा करके, हरें कर्म का क्रूर विधान॥8॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अवस्थित सुअवधिज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जल तरंग वायु से प्रेरित, घटती बढ़ती हो गतिमान।
अनवस्थित यह अवधिज्ञान ही, करता पाप तिमिर की हान॥
नाचें गाये भक्ति रचायें, ले पूजा की सुन्दर थाल।
अष्टकर्म के नशने हेतु, झुका रहे हम अपना भाल॥9॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अनवस्थित सुअवधिज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देशावधि को पाकर भविजन, हरते मोह करम का मान।
देव नरक नर पशु चारों ही, गतियों में होता यह ज्ञान॥
सम्यक्ज्ञानी देशावधि पा, करते मुनियों का सम्मान।
परम गुरु की पूजन करके, करें निरन्तर उनका ध्यान॥10॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सम्यक्देशावधिज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देशावधि से ज्येष्ठ श्रेष्ठ यह, परमावधि है ज्ञान महान्।
संयत मुनि इसको पा करके, करते सब जग का कल्याण॥
इसके धारक पाते निश्चित, क्षायिक केवलज्ञान महान।
करें अर्चना उन मुनियों की, पायें हम भी ज्ञान निधान॥11॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री परमावधिज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सर्वावधि सबसे उत्तम है, ले जाता शिवपुर के द्वार।
महाश्रमण ही पाते इनको, हो जाते भवसागर पार॥
संयम व्रत की इच्छा लेकर, आयें हम गुरुवर के पास।
महातपस्वी गुरु की अर्चा, हरती भव बंधन का त्रास॥12॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सर्वावधिज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ऋजुमति मनःपर्ययज्ञान

इन्द्रिय मन की ईहा पूर्वक, होता है मनपर्यय ज्ञान।
ऋजु मन के ऋजु विषय बताये, कहलाता ऋजुमति विज्ञान॥
ऐसे ज्ञानी गुरुवर अपने, कर्मों का करते हैं नाश।
उनकी अर्चा करें भाव से, पायें मोक्षपुरी में वास॥1॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री ऋजुमति मनःपर्ययज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विपुलमति मनःपर्ययज्ञान

मन में उठती भाव तरंगे, जाने विपुलमति का ज्ञान।
सरल विपुल मनगत विषयों का, ज्ञाता विपुलमति सद्ज्ञान॥
इसके धारी गणधर मुनिवर, पायें निर्मल केवलज्ञान।
महा अर्चना करें भाव से, पाने भावों का उत्थान॥2॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री विपुलमति मनःपर्ययज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

केवलज्ञान

(सोरठा)

अथ मंडलस्योपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

सकल द्रव्य का रूप, गुण पर्यय युत जानते।
कर्म विनाशन हेत, उनकी अर्चा मैं करूँ॥1॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अखिलद्रव्यज्ञायक निर्मलकेवलज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

लोकालोक प्रमाण, अखिल क्षेत्र अवलोकते।
जन्म-मरण क्षय हेत, उनकी अर्चा मैं करूँ॥2॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सकलक्षेत्रज्ञायक विशदकेवलज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भूत भविष्यत् काल, वर्तमान को देखते।
प्रगटें ऐसा ज्ञान, इस हित मैं पूजा करूँ॥3॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सर्वकालज्ञायक विमलकेवलज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सकल द्रव्य के भाव, क्षण में जिनवर जानते।
भाव विशोधन हेत, उनकी अर्चा मैं करूँ॥4॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सकलभावज्ञायक क्षायिककेवलज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अखिल[1] भवों का ज्ञान, प्रभुवर को होता स्वयं।
अविचल शिवसुख हेत, उनकी अर्चा मैं करूँ॥5॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सर्वभवज्ञायक विशुद्धकेवलज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जीवादिक षट् द्रव्य, उनको जाने आत्म से।
करूँ अर्चना आज, अखिल द्रव्य ज्ञायक प्रभू॥6॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सर्वद्रव्यज्ञायक श्रेष्ठकेवलज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गुण गण नायक नाथ, सब पर्यायों को लहे।
गुण गण पाने हेतु, भक्ति से पूजा करूँ॥7॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सर्वगुणज्ञायक उत्कृष्टकेवलज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

द्रव्यों की पर्याय, जाने क्षायिक ज्ञान से।
मिले सिद्ध पर्याय, इस हेतु पूजा करूँ॥8॥

1. सम्पूर्ण।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सकलपर्यायज्ञायक परमकेवलज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सामान्य विशेष गुणप्रतिपादक दिव्यध्वनि के अर्घ

(शंभु छंद)

अथ मंडलस्योपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

षट् द्रव्यों का अस्तित्व रहे, इस गुण विशेष के कारण ही।
शिव सुख का प्रथम चरण यह गुण, प्रतिभासित होवे इक क्षण भी॥
आतम के शाश्वत गुण पाने, हे अम्ब ! आपको ध्याते हैं।
सुन्दर मनमोहक अर्घ लिये, हम शरण तिहारी आते हैं॥1॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अस्तित्वगुणप्रतिबोधक दिव्यध्वन्यै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिस शक्ति क्रिया के कारण ही, षट् द्रव्यों में हो अर्थ क्रिया।
जैसे घट में जलधारण की, होती है अपनी अर्थ क्रिया॥
जिनवाणी माँ ने भव्यों को, वस्तुत्व भाव का ज्ञान दिया।
उस जिनवाणी जगदम्बे ने, सब भक्तों का कल्याण किया॥2॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री वस्तुत्वगुणप्रतिपादक दिव्यध्वन्यै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

षट् द्रव्यों का द्रव्यत्व भाव, नाना पर्यायें उपजाता।
इस गुण के कारण द्रव्य सदा, ना एकरूपता को पाता॥
वैभाविक भावों को तजकर, स्वाभाविक गुण को पायेंगे।
जगदम्बे की पूजन करके, हम निज स्वरूप को पायेंगे॥3॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री द्रव्यत्वगुणप्रतिपादक दिव्यध्वन्यै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हर द्रव्य प्रमाता[1] गोचर है, जिनवाणी यह बतलाती है।
इस गुण प्रमेय[2] के कारण ही, जगती प्रमेय बन जाती है॥
ब्रह्माणी जग कल्याणी है, उत्तम सन्मार्ग प्रदाता है।
उत्तम द्रव्यों की थाली ले, यह भक्त शरण में आता है॥4॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अस्तित्वगुणप्रतिबोधक दिव्यध्वन्यै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इस अगुरुलघु गुण के कारण, सब द्रव्य स्वयं में लीन रहे।
निज में निज परिणमते सब ही, वे स्वयं स्वयं में लीन रहे॥

1. प्रमाण को जानने वाला, 2. जिसको जाना जाय।

यह गुण प्रतिपादक जिन आगम, द्रव्यों का बोध कराता है।
निज चेतन को निर्मल करने, यह भक्त शरण में आता है॥5॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अगुरुलघुगुणप्रतिपादक दिव्यध्वन्यै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

द्रव्यों का निज आकार रहे, इस गुण प्रदेश के कारण ही।
आकार बिना ना द्रव्य रहे, ना पर्यायें औ ना गुण ही॥
द्रव्यों के लक्षण नाना गुण, जिनवर की वाणी बतलाती।
जो दिव्यध्वनि का आराधक, उसको शिवशाला पहुँचाती॥6॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री प्रदेशत्वगुणप्रतिपादक दिव्यध्वन्यै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य (शंभु छंद)

सब अवधिज्ञान द्वय मनःपर्यय, ये देश प्रत्यक्ष कहाते हैं।
केवल्य ज्ञान में सर्वज्ञेय, प्रत्यक्ष झलकते जाते हैं॥
सम्यक्त्व सहित सब ज्ञान होय, हम उनकी आश लगाते हैं।
निज क्षायिक ज्ञान जगाने को, हम पूरण अर्घ चढ़ाते हैं॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अवधि मनःपर्ययकेवलज्ञानाय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा : सम्यक्ज्ञान महान है, श्रद्धा व्रत आधार।
जल की त्रय धारा करूँ, पुष्पांजलि मनहार॥

शांतये शांतिधारा.... दिव्य पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

जाप्य मंत्र : ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्रेभ्यो नमः।

जयमाला

दोहा : रत्नत्रय का दीप है, निर्मल सम्यक्ज्ञान।
उसकी जयमाला पढ़ूँ, पाऊँ केवलज्ञान॥

चौपाई छंद

जय-जय श्री जिन केवलज्ञानी, श्री जिनमुख भाषित जिनवाणी।
गणधर-मुनि मनपर्ययज्ञानी, महाश्रमण शुभ अवधिज्ञानी॥1॥
जय-जय सम्यक्ज्ञान निराला, पंचभेदयुत कहें कृपाला।
प्रथम ज्ञान मतिज्ञान कहाये, त्रय शत छत्तीस भेद बताये॥2॥

दूजा है श्रुतज्ञान महाना, द्वादशांगमय भेद बखाना।
अवधिज्ञान के भेद अनेकों, द्वयविध मनपर्यय को देखो॥3॥
क्षायिक केवलज्ञान कहाये, इसे केवली जिनवर पायें।
जब सम्यक्दर्शन होता है, ज्ञान तुरत सम्यक् होता है॥4॥
यह ही सच्चा दीप कहाये, दर्शन-व्रत में शुचिता लाये।
आठ अंगयुत इसको ध्याओ, श्रुत के पाँच नियम अपनाओ॥5॥
जिनवाणी को जब भी पढ़ना, अक्षर कम ज्यादा ना करना।
जैसा का तैसा ही पढ़ना, नहिं विपरीत व संशय करना॥6॥
इक मृग ने जिनशास्त्र सुना था, दूजे भव नरराज बना था।
वे बालि मुनिराज कहाये, श्रुतकेवलि हो जिनपद पाये॥7॥
वायुभूति ब्राह्मण अभिमानी, पायी महाश्रमण की वाणी।
आगे मुनि सुकुमाल कहाये, मुनि सर्वार्थसिद्धि को पाये॥8॥
शिवभूति मुनिराज हमारे, वे आगम को पढ़-पढ़ हारे।
धार त्रिगुप्ति ध्यान लगाया, बने केवली जिनपद पाया॥9॥
ग्वाले ने पायी जिनवाणी, मुनि को भेंट करे वो दानी।
कुन्दकुन्द मुनिराज बने वो, मुनि बन नाना शास्त्र रचे वो॥10॥
सम्यक्ज्ञान रत्न को ध्यायें, भक्तिभाव से अर्घ चढ़ायें।
'गुप्ति' सूर्य जयमाला गाये, केवलज्ञान सूर्य प्रगटाये॥11॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सम्यग्ज्ञानाय जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(गीता छंद)

जिनभक्त निर्मल भाव से यह 'रत्नत्रय पूजन' करें।
त्रैलोक्य सुख पावें सदा सुर-नर उसे वंदन करें॥
फिर धर क्षमादिक धर्म को शिवराज वे पा जायेंगे।
त्रय 'गुप्ति' का व्रत पूर्ण कर भवदुःख कभी ना पायेंगे॥

इत्याशीर्वादः दिव्य पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

श्री सम्यक्चारित्र पूजा

(पंच चामर छंद)

विशुद्ध त्याग वा चरित्र की करें जिनार्चना।
महान् त्याग के धनी मुनीश की सुवंदना।
अशेष पुष्प हाथ में लिए मुनीश आज मैं।
करूँ पुनीत थापना जिनेश दिव्य भाव से॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सम्यक्चारित्र ! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननम्।
ॐ ह्रीं अर्हं श्री सम्यक्चारित्र ! अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः-ठः स्थापनम्।
ॐ ह्रीं अर्हं श्री सम्यक्चारित्र ! अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्।

पवित्र नीर कुंभ ले जिनेश को चढ़ा रहा।
जिनेश का स्वरूप भी सुभक्ति में बड़ा रहा॥
विशिष्ट त्याग में लगे मुनीश ही महान हैं।
चरित्र ही त्रिलोक में जहाज के समान है॥1॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सम्यक्चारित्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

समस्त ताप जो हरे उसी सुगंध को चढ़ा।
निजात्म ताप नाशने विमुक्ति मार्ग में बढ़ा॥ विशिष्ट....॥2॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सम्यक्चारित्राय संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

अखण्ड शालिपुंज भी अखंडभाव से चढ़े।
प्रचण्ड-चण्ड कर्म भी प्रखंड-खंड हो पड़े॥ विशिष्ट....॥3॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सम्यक्चारित्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

सुपुष्प के समूह जो गुलाब आदि नाम हैं।
चढ़े विशेष भक्ति से चरित्र तीर्थ धाम में॥ विशिष्ट....॥4॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सम्यक्चारित्राय कामबाणविनाशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

पुनीत वा सुनीत[1] जो वही मिठाइयाँ चढ़ीं।
यहाँ क्षुधा पिशाचिनी विमूढ़ लस्त हो पड़ी॥ विशिष्ट....॥5॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सम्यक्चारित्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. सुन्दर ढंग से लायी गयी।

प्रदीप्त दीप थाल से जिनारती उतारता।
जिनेन्द्र सूर्य पास में प्रमोह ध्वान्त हारता॥
विशिष्ट त्याग में लगे मुनीश ही महान हैं।
चरित्र ही त्रिलोक में जहाज के समान है॥6॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सम्यक्चारित्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

निजाष्टकर्म नाशने विशुद्ध धूप लायके।
खिरा सुयोग्य अग्नि में प्रयाग भाव पायके॥ विशिष्ट....॥7॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सम्यक्चारित्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

बदाम आम संतरादि श्रीफलादि थाल ले।
सुधर्म सूर्य को चढ़ा सुभक्त भी निहाल है॥ विशिष्ट....॥8॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सम्यक्चारित्राय महामोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जिनेश दिव्य अर्घ की मनोज्ञ थाल ला रहा।
अनर्घ सौख्य लाभ हो यही विचार ला रहा॥ विशिष्ट....॥9॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सम्यक्चारित्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तेरह प्रकार सम्यक्चारित्र के अर्घ

अथ मंडलस्योपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

(दोहा)

पूर्ण अहिंसा व्रत धरें सब हिंसा परिहार।
प्रथम महाव्रत है यही, पूजूँ मैं उर धार॥1॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अहिंसा महाव्रतयुक्त सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मिथ्या वचनों को तजें, सत्य महाव्रत पाल।
सत्य महाव्रत धारने, पूजूँ मैं त्रयकाल॥2॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सत्य महाव्रतयुक्त सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

धर अचौर्य व्रत पूर्णतम, मुनिवर मोह निवार।
उनके सम्यक् त्याग का, करता हूँ सत्कार॥3॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अचौर्य महाव्रतयुक्त सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शील महाव्रत पालते, करते ब्रह्म विहार।
उन मुनियों को मैं भजूँ, करने व्रत स्वीकार॥4॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री ब्रह्मचर्य महाव्रतयुक्त सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तीन उपकरण के सिवा, रखे न परिग्रह लेश।
पंच महाव्रत धर श्रमण, नाशे कर्म अशेष॥5॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अपरिग्रह महाव्रतयुक्त सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चलते ईर्या समिति से जीव दया उर धार।
करुणावान मुनीश को, पूजूँ बारम्बार॥6॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री ईर्यासमितियुक्त सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हित-मित-प्रिय वच बोलते, भाषा समिति विचार।
मुख से वचनामृत झरें, करते धर्म प्रचार॥7॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री भाषासमितियुक्त सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोष छियालिस टालते, अंतराय बत्तीस।
तन को वेतन रूप में, देते ग्रास मुनीश॥8॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री ऐषणासमितियुक्त सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उपकरणों का जब करें, मुनि आदान प्रदान।
चौथी समिति पालते, सर्व साधु भगवान॥9॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री आदाननिक्षेपणसमितियुक्त सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मल मूत्रादिक त्याग में, रखते श्रमण विवेक।
ये समिति व्युत्सर्ग हैं, करें शास्त्र उल्लेख॥10॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री व्युत्सर्गसमितियुक्त सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

निज मन को वश में करें, भाव शुभाशुभ टाल।
मनोगुप्ति धर श्रमण को, सदा झुकाऊँ भाल॥11॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री मनोगुप्तियुक्त सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वचोगुप्ति पालन करें, तजे शुभाशुभ वैन।
ऐसे श्रेष्ठ मुनीन्द्र को, पूजूँ मैं दिन रैन॥12॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री वचोगुप्तियुक्त सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

काय गुप्ति जो पालते, रहे न तन आधीन।
उनकी पूजा में सदा, रहो भव्य तल्लीन॥13॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री कायगुप्तियुक्त सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य (दोहा)

पाँच महाव्रत समिति पञ्च, गुप्ति त्रिविध प्रकार।
तेरह विध चारित्र ये, भजूँ त्रियोग सम्हार॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री त्रयोदशविध सम्यक्चारित्राय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा : समकित नींव सुज्ञानगृह, कलश श्रेष्ठ चारित्र।
शांतिधार अर्पण करूँ, अर्पित पुष्प पवित्र॥

शांतये शांतिधारा.... दिव्य पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

जाप्य मंत्र : ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्रेभ्यो नमः।

जयमाला

दोहा : सम्यक् चारित के धनी, होते भव से पार।
इनके गुण गण गान से, मिलता सौख्य अपार॥

चौपाई छंद

सम्यक् श्रद्धा जब जग जाये, ज्ञान चारित सम्यक् हो जाये।
मोक्षमहल की मुख्य इकाई, भवि को मुक्तिरमादिक दायी॥1॥

यह जग सारा भूल-भुलैया, इसमें अपना कोई न भैया।
जग सारा स्वारथ का मेला, स्वार्थ निकलते जीव अकेला॥2॥

नाना भव के रिश्ते नाते, पुण्य उदय से साथ निभाते।
कर्म बली जग में भटकाता, कभी हँसाता कभी रुलाता॥3॥

षट् कर्मों की कला सिखायें, युगनेता आदीश कहाये।
अन्तराय उनको जब आया, छह महीने भोजन न पाया॥4॥

कुष्ठी पति मैना ने पाया, समता से उसको अपनाया।
सिद्धचक्र से कुष्ठ मिटाया, फिर भी पति सुख तुरत न पाया॥5॥

जनक सुता रघुवर की नारी, वन-वन भटकी वो बेचारी।
अशुभ कर्म उदयागत आये, प्राणी को दर-दर भटकाये॥6॥

गिरधर जो गोवर्धन धारें, बाण लगा परलोक सिधारे।
कर्म किसी को भी ना छोड़े, योगी इनसे नाता तोड़े॥7॥

प्रशम आदि भावों को धारें, विषय वासना को परिहारें।
यथायोग्य संयम अपनायें, ध्यान लगा निज कर्म नशायें॥8॥

जो सम्यक्चारित अपनाये, मोक्षमहल को वो ही पाये।
कर्मकाष्ठ क्षण में विनशाये, परमानंद परमसुख पाये॥9॥

हम भी उत्तम संयम पायें, 'गुप्ति' धरें शिवपुर में जायें।
जयमाला प्रभुवर की गायें, भक्तिभाव से अर्घ चढ़ायें॥10॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सम्यक्चारित्राय जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(गीता छन्द)

जिनभक्त निर्मल भाव से यह 'रत्नत्रय पूजन' करें।
त्रैलोक्य सुख पावें सदा सुर-नर उसे वंदन करें॥
फिर धर क्षमादिक् धर्म को शिवराज वे पा जायेंगे।
त्रय 'गुप्ति' का व्रत पूर्णकर भवदुःख कभी ना पायेंगे॥

इत्याशीर्वादः दिव्य पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

श्री त्रिकालवर्ती अरिहंत परमेष्ठी पूजा

(हरिगीता छन्द)

अरिहंत प्रभु हैं वीतरागी लोकत्रय को जानते।
सुर-नारकी-तिर्यंच आदिक श्रेष्ठ मंगल मानते॥
सब काम-क्रोधादिक विनाशक दे रहे हित देशना।
हम कर रहें आह्वान् उनका है जहाँ छल लेश ना॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री त्रिकालवर्ती अर्हत्परमेष्ठिन् ! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननम्।
अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः-ठः स्थापनम्। अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्।

निर्मल सुखद शीतल सलिल जो देह को निर्मल करे।
जिन भक्ति गंगा का सलिल ले आत्म को निर्मल करें॥
अरिहंत मंगल-शरण-उत्तम सुखद प्रभु की अर्चना।
निर्मल परम जिनराज अर्चा से मिटे अघ वंचना॥1॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री त्रिकालवर्ती सर्व अर्हत्परमेष्ठिने जलं निर्वपामीति स्वाहा।

शीतल सुगंधित गंध चंदन तव चरण अर्पण करें।
जिनवर प्रभो का ध्यान कर निज आत्म का तर्पण[1] करें॥ अरिहंत..॥2॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री त्रिकालवर्ती सर्व अर्हत्परमेष्ठिने चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

उत्तम धवल अक्षत मनोहर पुँज हम लाये प्रभो।
अक्षय सुखामृत पान करने चरण में आये विभो॥ अरिहंत..॥3॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री त्रिकालवर्ती सर्व अर्हत्परमेष्ठिने अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

गेंदा चमेली मोगरादिक् सुमन सुन्दर ले लिये।
मदनारि जेता नाथ के हम दिव्य वचनामृत पियें॥ अरिहंत..॥4॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री त्रिकालवर्ती सर्व अर्हत्परमेष्ठिने पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रासुक सरस व्यंजन चढ़ायें हम प्रभु के सामने।
जो है महावैरी क्षुधा उसको नशाया आपने॥ अरिहंत..॥5॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री त्रिकालवर्ती सर्व अर्हत्परमेष्ठिने नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. शांति।

हम जगमगाती दीपमाला से करें प्रभु आरती।
जिनभानु की अध्यात्म दीप्ति मोहतम संहारती॥
अरिहंत मंगल-शरण-उत्तम सुखद प्रभु की अर्चना।
निर्मल परम जिनराज अर्चा से मिटे अघ वंचना॥6॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री त्रिकालवर्ती सर्व अर्हत्परमेष्ठिने दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

दशगंध चन्दन तगर मिश्रित धूप से पूजा करें।
ध्यानाग्नि में वसुकर्म नाशे आत्म में झूला करें॥ अरिहंत..॥7॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री त्रिकालवर्ती सर्व अर्हत्परमेष्ठिने धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

हम संतरा श्रीफल छुहारा आदि फल के थाल ले।
शिवफल प्रदाता श्री प्रभो को भेंट कर नतभाल हैं॥ अरिहंत..॥8॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री त्रिकालवर्ती सर्व अर्हत्परमेष्ठिने फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल-गंध-तंदुल[1]-सुमन-व्यंजन दीप आदिक अर्घ से।
जिनराज की पूजा करें हम तब परम शिवसुख मिले॥ अरिहंत..॥9॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री त्रिकालवर्ती सर्व अर्हत्परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अष्टादश दोषरहित अरहंत भगवान के अर्घ

(हरिगीता छंद)

अठदस महादुर्दोष त्यागे देव श्री अरिहंत ने।
काटी करम की बेड़ियाँ वे मोक्ष पायें अंत में॥
स्वामी चिदानन्द सौख्यदाता वे हरें अघ वंचना।
ले विमल पुष्पाञ्जलि करें हम हे प्रभो ! तव वंदना॥

अथ मंडलस्योपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

(काव्य छंद)

क्षुधा[2] कर्म है दुष्ट, सब जग को भटकावे।
उसको जीत जिनेश क्षण में दास बनावें॥

1. चावल, 2. भूख।

वीतराग सर्वज्ञ जिनवर को हम ध्यायें।
कर जिनवर गुणगान रत्नत्रय निधि पायें॥1॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री क्षुधामहादोषरहित अरिहंतपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तृषा[1] महा बलवान आकुल व्याकुल करती।
उस पर विजय जिनेश तव समता ही करती॥ वीतराग... ॥2॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री तृषामहादोषरहित अरिहंतपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जरा[2] सर्पिणी दुष्ट तन को जीर्ण करें हैं।
जरा विजेता नाथ उसका कोप[3] हरे हैं॥ वीतराग... ॥3॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री जरामहादोषरहित अरिहंतपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

परम समाधि सुधार आधि-व्याधि विनशाई।
ध्यान अग्नि के साथ केवल ज्योति जगाई॥ वीतराग... ॥4॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री व्याधिमहादोषरहित अरिहंतपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जनम-जनम के दोष जीव कर्म से पावें।
चारों गति का जन्म जिनवर आप नशावें॥ वीतराग... ॥5॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री जन्ममहादोषरहित अरिहंतपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जन्मे जो भी जीव मरण अवश ही पावें।
मरण विजेता नाथ जग में आप कहावें॥ वीतराग... ॥6॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री मृत्युमहादोषरहित अरिहंतपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भय का भूत सदैव क्षण-क्षण मरण करावें।
भय को जीत जिनेश जितभय आप कहावें॥ वीतराग... ॥7॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री भयमहादोषरहित अरिहंतपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मद[4] से गर्वित जीव तप व्रत धर्म नशावें।
मद हरके जिननाथ उत्तम विनय जगावें॥ वीतराग... ॥8॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री स्मयमहादोषरहित अरिहंतपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. प्यास, 2. बुढ़ापा, 3. क्रोध, 4. अभिमान।

राग आग की ताप तन-मन को झुलसावें।
राग-विजेता नाथ वीतराग कहलावें॥
वीतराग सर्वज्ञ जिनवर को हम ध्यायें।
कर जिनवर गुणगान रत्नत्रय निधि पायें॥9॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री रागमहादोषरहित अरिहंतपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

द्वेष शृंखला क्रूर भव-भव में भटकावें।
द्वेष विजेता नाथ द्वेष क्लेश विनशावें॥ वीतराग... ॥10॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री द्वेषमहादोषरहित अरिहंतपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मोह मल्ल दुर्वार आत्म स्वभाव नशाता।
मोह शत्रु को वेध बने जिनेश विधाता॥ वीतराग... ॥11॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री मोहमहादोषरहित अरिहंतपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अशुचि अपावन स्वेद जिनवर के ना होता।
दैहिक मल से दूर जिनवर सुख के स्रोता॥ वीतराग... ॥12॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री स्वेदमहादोषरहित अरिहंतपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आकुलता ना लेश वे हैं खेद[1] विजेता।
तज वैभाविक भाव बने धर्म के नेता॥ वीतराग... ॥13॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री खेदमहादोषरहित अरिहंतपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हर विषाद[2] अवसाद शम दम लय से त्यागें।
बाँटें ज्ञान प्रसाद ऋषिगण तव अनुरागे॥ वीतराग... ॥14॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री विषादमहादोषरहित अरिहंतपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चिंता चिता समान वपु[3]-गुण दोष नशावें।
इसके हर्ता आप जग की व्याधि नशावें॥ वीतराग... ॥15॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री चिंतामहादोषरहित अरिहंतपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रति[4] मतिहीन बनाय यति को भी भटकाये।
रतिजेता जिन आप जग में नाम कमायें॥ वीतराग... ॥16॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री रतिमहादोषरहित अरिहंतपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. थकान, 2. दुःख, 3. शरीर, 4. काम भावना।

निद्रा विजय जिनेश जग में आप करें हैं।
इसको हरने हेत हम जिन चरण वरें हैं।।
वीतराग सर्वज्ञ जिनवर को हम ध्यायें।
कर जिनवर गुणगान रत्नत्रय निधि पायें।।17।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री निद्रामहादोषरहित अरिहंतपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विस्मयवीत[1] जिनेश विस्मय का लय करते।
जग को दे सद्ज्ञान सबको निर्भय करते।। वीतराग... ।।18।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री विस्मयमहादोषरहित अरिहंतपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्यं (काव्य छंद)

दोष अठारह त्याग जिनवर शिवसुख पावें।
ले अर्घों की थाल हम प्रभु के गुण गावें।।
वीतराग सर्वज्ञ जिनवर को हम ध्यायें।
कर जिनवर गुणगान रत्नत्रय निधि पायें।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अष्टादशदोषरहित त्रिकालवर्ती सर्व अरिहंतपरमेष्ठिभ्यो पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

छ्यालीस मूलगुण सम्पन्न अरिहंतों के अर्घ

अथ मंडलस्योपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

जन्म के दस अतिशय के अर्घ

(सखी छंद)

नहि स्वेद[2] तनिक भी आवे, ना मन में खेद जगावें।
निज पर का भेद बतावें, निर्वेद स्वयं बन जावें।।1।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री निस्वेदत्वसहजातिशय गुणमंडित सर्व अरिहंतपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आहार करें स्वर्गों का, ना हो निहार प्रभुवर का।
प्रभुवर गुण के भण्डारा, तुमने भव्यों को तारा।।2।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री निर्मलतासहजातिशय गुणमंडित सर्व अरिहंतपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. आश्चर्यरहित, 2. पसीना।

वात्सल्य प्रभु का न्यारा, हो श्वेत रुधिर की धारा।
पायेंगे शिवपुर द्वारा, उसका फल है यह न्यारा।।3।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री श्वेतरुधिरत्वसहजातिशय गुणमंडित सर्व अरिहंतपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सम चौरस है संस्थाना, तन सुन्दर भाव महाना।
वे जिनवर दया निधाना, तुम उनके ही गुण गाना।।4।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री समचतुरस्रसंस्थानसहजातिशय गुणमंडित सर्व अरिहंतपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हो उत्तम संहनन धारी, पायें जिससे शिवनारी।
हम अर्चा करें तिहारी, बनने तुम सम संहारी[1] ।।5।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री वज्रवृषभनाराचसंहननसहजातिशय गुणमंडित सर्व अरिहंतपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तव रूप लोक मनहारी, सबसे सुन्दर सुखकारी।
जो अर्चा करें अनूठी, उसने जिन गुण निधि लूटी।।6।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अनुपमरूपसहजातिशय गुणमंडित सर्व अरिहंतपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तन अतिशय सुरभित पाया, भविजन का चित्त[2] लुभाया।
वे अर्चित हैं देवों से, त्रिभुवन के सब भव्यों से।।7।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सौगन्ध्यसहजातिशय गुणमंडित सर्व अरिहंतपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

लक्षण अठ एक सहस है, ये त्रिभुवन जिनके वश है।
हम उनकी भक्ति रचायें, सुन्दर दरबार सजायें।।8।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अष्टोत्तरसहस्रशुभलक्षणसहजातिशय गुणमंडित सर्व अरिहंतपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

है अतुल पराक्रम जिनका, वो हरें मोह दुष्टों का।
हम करें निरूपम पूजा, उनके बिन शरण न दूजा।।9।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अतुल्यबलवीर्यसहजातिशय गुणमंडित सर्व अरिहंतपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1.नाशक, 2. मन।

प्रिय हित मित वाणी बोले, जिससे सबका मन डोले।
जननी संग करें किलोलें[1], वात्सल्य हृदय पट खोलें॥10॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री हितमितप्रियवचनसहजातिशय गुणमंडित सर्व अरिहंतपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

केवलज्ञान के दस अतिशय के अर्घ

अथ मंडलस्योपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

(शंभु छंद)

प्रभु धर्म सभा के बीच रहे, दिव गंधकुटी में शोभ रहे।
चहुँ दिश में सौ योजन सुभिक्ष[2], भविजन जिनको अवलोक रहे॥
प्रभु का पूजन वंदन करके, भक्तों ने पुण्य कमाया है।
तव शरणागत हमने जिनवर, शिवपुर का पथ अपनाया है॥11॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री गव्यूतिशतचतुष्टयसुभिक्षता केवलज्ञानातिशय गुणमंडित सर्व अरिहंतपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नभ प्रांगण में जिन गमन करें, त्रिभुवन का मन हर्षाते हैं।
जिनके दर्शन कर भवि प्राणी, भव-भव का मोह नशाते हैं॥ प्रभु का..॥12॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री गगनगमनत्व केवलज्ञानातिशय गुणमंडित सर्व अरिहंतपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिन परम अहिंसा धारी हैं, वो हिंसा भाव भगाते हैं।
उनके सन्मुख जाकर सब जन, तिलभर ना पाप कमाते हैं॥ प्रभु का..॥13॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री प्राणिवधाभावत्व केवलज्ञानातिशय गुणमंडित सर्व अरिहंतपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रभु क्षुधा कर्म का नाश किया, अतएव न कवलाहारी हैं।
वे अतुल वीर्य के धारी हैं, हम उनके परम पुजारी हैं॥ प्रभु का..॥14॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री कवलाहाराभावत्व केवलज्ञानातिशय गुणमंडित सर्व अरिहंतपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. बाल क्रीड़ा, 2. सुकाल।

केवलज्ञानी का यह अतिशय, उपसर्ग न उन पर होता है।
उनकी अर्चा में जो तन्मय, उन पर भी कष्ट न होता है॥
प्रभु का पूजन वंदन करके, भक्तों ने पुण्य कमाया है।
तव शरणागत हमने जिनवर, शिवपुर का पथ अपनाया है॥15॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री उपसर्गाभावत्व केवलज्ञानातिशय गुणमंडित सर्व अरिहंतपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रभु का परमौदारिक तन है, मुख चार दिखें सब प्राणी को।
सुर नर मुनिगण सुनने तरसे, अरिहंत देव की वाणी को॥ प्रभु का..॥16॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री चतुराननत्व केवलज्ञानातिशय गुणमंडित सर्व अरिहंतपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिनवर सब विद्या के स्वामी, त्रिभुवन पति अंतर्यामी हैं।
शिवपथ गामी जन अभिरामी[1], निर्मल गुण के वे स्वामी हैं॥ प्रभु का..॥17॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सर्वविद्येश्वरत्व केवलज्ञानातिशय गुणमंडित सर्व अरिहंतपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिनवर की अद्भुत महिमा है, जिनकी छाया नहि पड़ती है।
उनकी अतिशयकारी चर्या, शिवपथ पर अविरल बढ़ती है॥ प्रभु का..॥18॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री छायारहितशरीरत्व केवलज्ञानातिशय गुणमंडित सर्व अरिहंतपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

टिमकार रहित पलकें प्रभु की, यह अतिशय केवलज्ञानी का।
निद्रा जेता आक्रोश रहित, जग के नायक गुणखानी का॥ प्रभु का..॥19॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री निर्निमेषदृष्टित्व केवलज्ञानातिशय गुणमंडित सर्व अरिहंतपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नख केश नहीं बढ़ते प्रभु के, ये दिव्य पुरुष अवतारी हैं।
स्वाभाविक सुन्दरता धारी, जो जन-जन के मनहारी हैं॥ प्रभु का..॥20॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री नखकेशवृद्धिरहित केवलज्ञानातिशय गुणमंडित सर्व अरिहंतपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. मोहक।

देवकृत 14 अतिशय के अर्घ

अथ मंडलस्योपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

(शंभु छंद)

सुरगण चौदह अतिशय करके प्रभुवर की सेवा करते हैं।
जिनवर की वाणी फैलाकर शिव सुख का मेवा वरते हैं॥
जिनधर्म दिवाकर महाश्रमण हम उनको अर्घ चढ़ाते हैं।
जो समोशरण में शोभ रहे, उनकी शुभ महिमा गाते हैं॥21॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अर्द्धमागधीभाषा देवोपनीतातिशय गुणविभूषित सर्व अरिहंतपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जगबंधु जिनेश्वर हैं जग के, भव-भव का वैर मिटाते हैं।
वे जन्मजात वैरी का भी, रिपुभाव समूल हटाते हैं॥ जिनधर्म.. ॥22॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सर्वजनमैत्रीभाव देवोपनीतातिशय गुणविभूषित सर्व अरिहंतपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

षट् ऋतुओं के फल फूल खिले, इक साथ नाथ के अतिशय से।
मानो प्रभु भक्ति में तत्पर, षट् ऋतुएँ झूमें अनुनय[1] से॥ जिनधर्म.. ॥23॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सर्वर्तुफलादिशोभित देवोपनीतातिशय गुणविभूषित सर्व अरिहंतपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इक योजन तक पृथ्वी निर्मल, दर्पण समान चम-चम चमके।
प्रभुवर का स्वागत करने को, वह आगे से आगे दमके॥ जिनधर्म.. ॥24॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री आदर्शतलप्रतिमारत्नमयीमही देवोपनीतातिशय गुणविभूषित सर्व अरिहंतपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिनवर के धर्मसभा पथ पर, चलती है सुरभित मन्द हवा।
जग के सारे भवि प्राणी को, होती वह उत्तम सौख्य दवा॥ जिनधर्म.. ॥25॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री विहरणमनुगतवायुत्व देवोपनीतातिशय गुणविभूषित सर्व अरिहंतपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सब जीव सुखी हर्षित होते, प्रभु का विहार अतिशय कारी।
संकट संताप नहीं रहते, औ पुण्य बढ़े विस्मयकारी॥ जिनधर्म.. ॥25॥

1. विनय।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सर्वजनपरमानन्दत्व देवोपनीतातिशय गुणविभूषित सर्व अरिहंतपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पृथ्वी निष्कंटक[1] रहती है, वायु कुमार देवों द्वारा।
प्रभुवर चलते भू से ऊपर, फिर भी होता अतिशय न्यारा॥
जिनधर्म दिवाकर महाश्रमण हम उनको अर्घ चढ़ाते हैं।
जो समोशरण में शोभ रहे, उनकी शुभ महिमा गाते हैं॥27॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री वायुकुमारोपशमितधूलिकंटकादि देवोपनीतातिशय गुणविभूषित सर्व अरिहंतपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिनशासन के चहुँदिश में जब, होती है गंधोदक वर्षा।
तब नभतल में सुरनर नाचें, जयघोष करें हर्षा-हर्षा॥ जिनधर्म.. ॥28॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री मेघकुमारकृतगंधोदकवृष्टि देवोपनीतातिशय गुणविभूषित सर्व अरिहंतपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नभतल पर सुरकृत स्वर्णकमल, उस पर जिनवर के चरण कमल।
विहरण करते प्रभु पाद युगल, हरते भव्यों का अन्तस्मल॥ जिनधर्म.. ॥29॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री विहरमाणप्रभुपादयुगलतलस्वर्णकमल रचना देवोपनीतातिशय गुणविभूषित सर्व अरिहंतपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सब वृक्ष लतायें पुष्प पत्र, फल के भारों से झुकती हैं।
मानो वे श्रेष्ठ सुफल दाता, प्रभु का अभिनंदन करती हैं॥ जिनधर्म.. ॥30॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री फलभारनम्रशालि देवोपनीतातिशय गुणविभूषित सर्व अरिहंतपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिनवर की समवशरण महिमा, सब रोग शोक संताप हरे।
जो प्रभु अर्चा में तन्मय हैं, उनके जन्मों के पाप हरे॥ जिनधर्म.. ॥31॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सर्वजनरोगशोकबाधारहितत्व देवोपनीतातिशय गुणविभूषित सर्व अरिहंतपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आकाश रहे निर्मल सुखमय, ना क्षोभ क्लान्ति[2] उत्पात वहाँ।
ओला वर्षा वा वज्रपात[3], ना होते हैं दिन-रात जहाँ॥ जिनधर्म.. ॥32॥

1. काँटों से रहित, 2. थकान, 3. बिजली।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री शरत्कालवत्निर्मलाकाश देवोपनीतातिशय गुणविभूषित सर्व अरिहंतपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

यक्षेन्द्र शीश पर धर्मचक्र, लेकर चलते प्रभु के आगे।
उसकी शुभ किरणों को लखकर, भव्यों का पाप तिमिर भागे॥
जिनधर्म दिवाकर महाश्रमण हम उनको अर्घ चढ़ाते हैं।
जो समोशरण में शोभ रहे, उनकी शुभ महिमा गाते हैं॥33॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री यक्षेन्द्रशीर्षोपरिस्थितधर्मचक्रचतुष्टय देवोपनीतातिशय गुणविभूषित सर्व अरिहंतपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वसु मंगल द्रव्य समर्पण कर, देवों ने पुण्य कमाया है।
जिनका संयम शुभ दर्पणवत्, उनका शुभ संगम पाया है॥ जिनधर्म.. ॥34॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री देवोपनीत अष्ट मंगलद्रव्य विभूषित सर्व अरिहंतपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अष्ट महाप्रातिहार्य पूजित अरिहंत के अर्घ

अथ मंडलस्योपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

(शंभु छंद)

जिस तरु के नीचे प्रभु बैठे, केवलज्ञानी हो जाते हैं।
उस तरु अशोक की छाया में, सब रोग शोक नश जाते हैं॥
वसु प्रातिहार्य भूषित प्रभु की, यशगाथा हम सब गाते हैं।
तुम सम प्रभुवर बनने को हम, अघहारी[1] अर्घ चढ़ाते हैं॥35॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अशोकतरुमहाप्रातिहार्यमंडित सर्व अरिहंतपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुर नभ से जय जयकार करें, औ पुष्पों की वर्षा करते।
अतिशय प्रभुवर की महिमा का, वे पुष्प सभी सीधे गिरते॥ वसु.. ॥36॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सुरपुष्पवृष्टिमहाप्रातिहार्यमंडित सर्व अरिहंतपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. पापनाशक।

सुर चमर ढुराते प्रभुवर पर, जैसे झरती हो निर्झरणी[1]।
चौंसठ चंवरों से शोभमान, प्रभु को वरती शिवपुर रमणी॥
वसु प्रातिहार्य भूषित प्रभु की, यशगाथा हम सब गाते हैं।
तुम सम प्रभुवर बनने को हम, अघहारी अर्घ चढ़ाते हैं॥37॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री चतुषष्टिचंवरमहाप्रातिहार्यमंडित सर्व अरिहंतपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रभुवर के पीछे भामण्डल, दिनकर[2] वत दम-दम दमक रहा।
भव सात बतायें भव्यों के, प्रभु की महिमा से चमक रहा॥वसु.. ॥38॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री भामण्डलमहाप्रातिहार्यमंडित सर्व अरिहंतपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुर दुन्दुभि बाजे बजा-बजा, प्रभु की महिमा बतलाते हैं।
करके प्रचार तीर्थंकर का, वे अमर[3] परम पद पाते हैं॥ वसु.. ॥39॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री देवदुंदुभिमहाप्रातिहार्यमंडित सर्व अरिहंतपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

त्रय छत्र देवकृत शोभ रहे, मणिमय मुक्ता[4] झालर वाले।
त्रिभुवन पर प्रभुवर का शासन, यह छत्र स्वयं ही कह डालें॥ वसु.. ॥40॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री छत्रत्रयमहाप्रातिहार्यमंडित सर्व अरिहंतपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्हन्तों के सब अंगों से, ओंकार मयी वाणी खिरती।
जिसको पाकर भविजन राशी, निशदिन भवसागर से तिरती॥ वसु.. ॥41॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सर्वभाषात्मकदिव्यध्वनि महाप्रातिहार्यमंडित सर्व अरिहंतपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सिंहासन सुन्दर मन भावन, उसके ऊपर हैं कमलासन।
उसके भी चतुरंगुल ऊपर, प्रभुवर बैठे धर पद्मासन॥ वसु.. ॥42॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सिंहासनमहाप्रातिहार्यमंडित सर्व अरिहंतपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. झरना, 2. सूर्य, 3. देव, 4. मोती।

अर्हंतों के अनंत चतुष्टय के अर्घ

अथ मंडलस्योपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

(गीता छंद)

ज्ञानावरण को घात जिन सर्वज्ञ ज्ञानी हो गये।
युगपत चराचर जानते वो मोक्षगामी हो गये॥
अर्हंत कर्मन् अंत कर काटें करम की अर्गला।
जल चंदनादिक् अर्घ ले प्रभु भक्ति करने मैं चला॥43॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अनंतज्ञान समन्वित सर्व अरिहन्तपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

निज दर्शनावरणी करम प्रभु आपने जय कर लिया।
दर्शन अनंत लहा तुरत प्रभु मोक्ष संगम कर लिया॥ अर्हंत कर्मन्॥44॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अनंतदर्शन समन्वित सर्व अरिहन्तपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

यह मोहनी त्रयलोक को निज सौख्य से करती जुदा।
जिनवर अनंतों सुख वरें निज मोह को करके विदा॥ अर्हंत कर्मन्॥45॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अनंतसुख समन्वित सर्व अरिहन्तपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

निज अंतराय विनाश कर पाया चरम वीरज प्रभो।
अर्हन्त पद में बन गयी वह ही महाशक्ति विभो॥ अर्हंत कर्मन्॥46॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अनंतवीर्य समन्वित सर्व अरिहन्तपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्यं (गीता छंद)

चउ घाति कर्म विनाश जिनवर वीतरागी हो गये।
करके धरम की देशना वे मुक्ति भागी हो गये॥
छ्यालीस गुण से युक्त प्रभु की मैं करूँ आराधना।
उनके परम सानिध्य में हो मोक्षपथ की साधना॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री षट्चत्वारिंशद् गुणमंडित सर्व अरिहन्तपरमेष्ठिभ्यो पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अष्ट मंगल द्रव्यों से पूजित अरिहंतों के अर्घ

अथ मंडलस्योपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

(शंभु छंद)

जिननायक सच्चे छत्रपती, जिनको ध्यावें नर देव यती।
वे हरें हमारी पाप मती, पहुँचावें हमको मोक्ष गती॥
जिनधर्म दिवाकर तीर्थंकर, उनको हम अर्घ चढ़ाते हैं।
वसु मंगल द्रव्यों से शोभित, जिनवर की महिमा गाते हैं॥1॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री देवोपनीत उत्तमछत्रमंगलद्रव्यविभूषित सर्व अरिहन्त परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चमरोज्वल ढोरें सुरगण जब, तीनों लोकों का मन मोहे।
जैसे निर्मल झरना झरता, उसमें प्रभु का आनन[1] सोहे॥ जिनधर्म..॥2॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री देवोपनीत चामरोज्वलमंगलद्रव्यविभूषित सर्व अरिहन्त परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

घण्टा घन-घन बजता चहुँदिश, भव्यों को आव्हानन करता।
जिनवर के निर्मल वृष[2] पथ का, मन भावन अभिनन्दन करता॥ जिनधर्म..॥3॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री देवोपनीत मंगलघंटा विभूषित सर्व अरिहन्त परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

झारी लेकर मतवाला सुर, त्रिपुरारी की सेवा करता।
मनहर झारी को कर अर्पण, उत्तम श्रद्धा मेवा वरता॥ जिनधर्म..॥4॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री देवोपनीत मंगलझारी विभूषित सर्व अरिहन्त परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

फर-फर फहराती धर्म ध्वजा, त्रिभुवन विजयी जगनामी की।
यशगाथा गाती झूम-झूम, तीर्थंकर प्रभु शिवगामी की॥ जिनधर्म..॥5॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री देवोपनीत उत्तमहाध्वजा विभूषित सर्व अरिहन्त परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिनवर को कुछ भी चाह नहीं, फिर भी सुर पंखा लाते हैं।
उत्तम वैभव को कर अर्पण, अध्यात्म सुवैभव पाते हैं॥ जिनधर्म..॥6॥

1. मुख, 2. धर्म।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री देवोपनीत मंगलपंखा विभूषित सर्व अरिहन्त परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दर्पण की मंगल भेंट चढ़ा, देवों ने भाग्य जगाया है।
दर्पणवत् निर्मल गुण पाने, निज मन का दर्प मिटाया है॥
जिनधर्म दिवाकर तीर्थंकर, उनको हम अर्घ चढ़ाते हैं।
वसु मंगल द्रव्यों से शोभित, जिनवर की महिमा गाते हैं॥7॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री देवोपनीत मंगलदर्पणविभूषित सर्व अरिहन्त परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

स्वस्तिक प्रतीक है मंगल के, मंगल द्रव्यों में आते हैं।
चारों गतियों से बचने को, सुरपति शुभ भेंट चढ़ाते हैं॥ जिनधर्म..॥8॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री देवोपनीत मंगलस्वस्तिक विभूषित सर्व अरिहन्त परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य (दोहा)

प्रभु चरणों में आ रहे, स्वर्गों के सब देव।
मंगल द्रव्यों को चढ़ा, अर्चा करें सदैव॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अष्टमंगलद्रव्यविभूषित सर्व अरिहन्त परमेष्ठिभ्यो पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा- हेम पात्र में नीर ले, कर त्रय शांतिधार।
कुसुम पुंज अर्पण करें, पायें सौख्य अपार॥

शांतये शांतिधारा, दिव्य पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

जाप्य मंत्र-ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सम्यक्दर्शनज्ञानचारित्रेभ्यो नमः।

जयमाला

दोहा- वीतराग सर्वज्ञ जिन, श्री अर्हंत महान्।
उनके छ्यालिस मूलगुण, बोधि समाधि निधान॥

(शंभु छन्द)

जय-जय तीर्थंकर गुणआकर[1], अर्हंत केवली जिनस्वामी।
छ्यालीस सुगुण मंडित जिनवर, सबदोष रहित जिन जगनामी॥

1. गुणों की खान।

है बालरूप प्रभु का सुन्दर, वो स्वेद रहित अतिशयकारी।
तन निर्मल सुरभित श्वेत रुधिर, सौरुप्य सुभग विस्मयकारी॥1॥

संस्थान श्रेष्ठ संहनन उत्तम, प्रिय हित मित वचन तिहारे हैं।
लक्षण अठ एक हजार प्रमित[1], बल वीर्य अतुल को धारे हैं॥
दस अतिशय सहज हुये प्रभु के, दस प्रकट हुये केवली पद में।
चउ सौ योजन तक है सुभिक्ष, तीर्थंकर के विहरण[2] थल में॥2॥

नभ गमन करें उपसर्ग हरें, त्रिभुवन का वैर मिटाते हैं।
हिंसा के भाव मिटाकर के, गिरते को आप उठाते हैं॥
केवलि के कवलाहार नहीं, इक मुख भी चार दिखे जग को।
अर्हंत सकल विद्येश्वर हैं, बतलाते वे शिवसुख मग को॥3॥

अनिमेषपलक[3] अच्छाय[4] तनू, नख-केश नहीं बढ़ते जिनके।
ऐसी महिमा दिखलाते हैं, घातीक्षयजातीशय तिनके॥
प्रभु के सर्वात्म प्रदेशों से, सर्वार्थपूर्ण वाणी खिरती।
वह अर्द्ध मागधी कहलाती, भव्यों का मिथ्यातम हरती॥4॥

तीर्थंकर का वात्सल्य वलय, सब प्राणी का रिपु भाव हरे।
वसुधा को षड्ऋतु के फलमय, तीर्थंकर का सद्भाव करे॥
आदर्श प्रणेता के सन्मुख, पृथ्वी निर्मल आदर्श बनी।
मरुतेन्द्र रचित शीतल सुरभित, वायु से धरती स्वर्ग बनी॥5॥

धनु पाँच सहस्र अधर ऊपर, तीर्थंकर समवशरण राजे।
उपसर्ग मूक केवली आदिक, निज-निज की गंधकुटी राजे॥
जिनवर के वचनामृत पाने, अनगिन भविजन दौड़े आये।
तिर्यक् सुर-नर शत इन्द्र सभी, जिनवर के शुभ दर्शन पायें॥6॥

खग[5] मानव पशु पूरब वैरी, जिन सम्मुख रिपुता[6] छोड़ रहे।
भव-भव का वैर मिटाकर वे, निज को शिवपथ पर मोड़ रहे॥

1. प्रमाण, 2. विहार, 3. पलक ना झपकना, 4. छाया रहित शरीर, 5. विद्याधर व पक्षी, 6. शत्रुता।

सुर[1]–युगल सुमन अंजलि भरकर, नभ से तीर्थंकर पर छोड़ें।
अर्हंतों की अर्चा कर वे, निज कर्मों के बंधन तोड़े ॥7॥

अनगार[2] धरम सागार[3] धरम, जिननाथ जगत को बतलाते।
स्याद्वाद रूपमय द्वादशांग, गणधर तीर्थंकर से पाते ॥
जिनवर की वाणी पा भविजन, निज मिथ्यातम परिहार करें।
निज श्रद्धा से मुनिव्रत आदिक, सम्यक् संयम स्वीकार करें॥8॥

वृष क्षमा दया तप आदिक् का, अघहारी पुंज बनाया है।
निर्मल जल से फल तक विधिवत्, मनहारी अर्घ सजाया है॥
त्रय कालिक सब अर्हन्तों को, ऐसा शुभ अर्घ समर्पित हो।
रत्नत्रय भाव जगे मुझमें, वैभाविक भाव विसर्जित हो॥9॥

अर्हन्त नाम गुणगान सदा, त्रयकालिक कर्म विनाश करें।
श्रद्धायुत सम्यक् चिन्तन भी, क्षायिक सद्ज्ञान प्रकाश करें॥
ऐसे गुणपूर्ण जिनाधिप की, गुणमाल मुनीश सुनाते हैं।
कर 'गुप्ति' पूर्ण शिवराज वरें, ऐसे शुभ भाव बनाते हैं॥10॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री षट्चत्वारिंशद् गुणमंडित अष्टादशमहादोषविरहित त्रिकालवर्ती सर्व अर्हत्परमेष्ठिभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(गीता छन्द)

जिनभक्त निर्मल भाव से यह 'रत्नत्रय पूजन' करें।
त्रैलोक्य सुख पावें सदा सुर नर उसे वन्दन करें॥
फिर धर क्षमादिक् धर्म को शिवराज वे पा जायेंगे।
त्रय 'गुप्ति' व्रत को धारकर भवदुःख कभी ना पायेंगे॥

इत्याशीर्वादः दिव्य पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

1. देव–देवी का जोड़ा। 2. मुनि, 3. श्रावक।

ढाई द्वीप संबंधी 170 कर्म भूमिस्थ तीर्थंकरों की पूजा

(हरिगीता छन्द)

तीर्थेश ढाई द्वीप में शिवलोक पथ बतला रहे।
दृग्भ्रान्त शिवपथ के पथिक को श्रेयपथ दिखला रहे॥
परमार्थ वत्सल तीर्थकर की कर रहे हम अर्चना।
प्रभु के सकल गुण लाभ हित हम कर रहे शुभ वंदना॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री ढाई द्वीप संबंधी शत सप्तति तीर्थंकर समूह ! अत्र अवतर–अवतर संवौषट् आह्वाननम्। अत्र तिष्ठ–तिष्ठ ठः–ठः स्थापनम्। अत्र मम सन्निहितो भव–भव वषट् सन्निधिकरणम्।

कंचन कलश में नीर निर्मल पाप क्षालन हित लिया।
निर्मल गुणी अर्हंत जिन को भक्ति से अर्पित किया॥
सत्तर अधिक सौ कर्म भू के तीर्थकर पूजें यहाँ।
अरिहंत के गुण लाभ पाने हो सुखद अर्चन महा॥1॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री ढाई द्वीप संबंधी शत सप्तति तीर्थंकरेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

जिनचरण में चन्दन चढ़ायें यह शरण उत्तम प्रभो।
हे तीर्थकर ! तारण–तरण भव का भ्रमण मेटो विभो॥ सत्तर....॥2॥

ॐ ह्रीं ..... संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

अक्षत धवल तंदुल चढ़ायें आज हमने चाव से।
संसार सागर से तिरेंगे जिन चरण की नाव से॥ सत्तर....॥3॥

ॐ ह्रीं ..... अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

बहु पुष्प अर्पण नित करें हम काम जेतानाथ को।
कामारि भंजन जिन निरंजन हम झुकायें माथ को॥ सत्तर....॥4॥

ॐ ह्रीं ..... कामबाणविनाशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

बर्फी इमरती आदि व्यंजन सरस प्रासुक ला रहे।
अर्पण करें जिनराज सम्मुख आज हम हर्षा रहे॥
सत्तर अधिक सौ कर्म भू के तीर्थकर पूजें यहाँ।
अरिहंत के गुण लाभ पाने हो सुखद अर्चन महा॥5॥

ॐ ह्रीं ..... क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मृण्मय मणिमय रत्नदीपों से करें हम आरती।
अज्ञानतम विनशे हमारा प्रकट हो माँ भारती॥ सत्तर....॥6॥

ॐ ह्रीं ..... मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

चन्दन अगर कर्पूर मिश्रित धूप निर्मल लाइए।
विनशे करम जिनराज जैसा यह सुयोग बनाइये॥ सत्तर....॥7॥

ॐ ह्रीं ..... अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

हम आम सीता रामफल वा जाम अमरख दाख ला।
प्रभु चरण में अर्पण करें नाशें सकल अघ श्रृंखला॥ सत्तर....॥8॥

ॐ ह्रीं ..... महामोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

वसुद्रव्य के शुभ अर्घ लाये हम करें जिन अर्चना।
त्रैलोक्यपति पावन जिनेश्वर नाशते अघ वंचना॥ सत्तर....॥9॥

ॐ ह्रीं ..... अनर्घपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जम्बूद्वीपस्थ चौंतीस कर्मभूमिज तीर्थंकरों के अर्घ

अथ मंडलस्योपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

(चौबोल छंद)

जम्बुद्वीप के दक्षिण दिश में 'भरत' क्षेत्र मनहारी।
उसमें तीर्थंकर मुनि आकर वर लेते शिवनारी॥
ढ़ाई द्वीप के जिनराजों को मन-वच-तन से ध्याऊँ।
भक्ति भाव से अर्घ चढ़ाकर रत्नत्रय गुण पाऊँ॥1॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री जम्बूद्वीपसंबंधी 'भरतक्षेत्र' स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मेरु सुदर्शन के उत्तर में है 'ऐरावत' नगरी।
जिसमें तीर्थंकर शिवनायक वरते हैं शिव मगरी॥
ढ़ाई द्वीप के जिनराजों को मन-वच-तन से ध्याऊँ।
भक्ति भाव से अर्घ चढ़ाकर रत्नत्रय गुण पाऊँ॥2॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री जम्बूद्वीपसंबंधी 'ऐरावत क्षेत्र' स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मेरु सुदर्शन के पूरब में 'कच्छादेश' निराला।
तीर्थंकर मुनि गण से शोभित भव्यों का रखवाला॥ ढ़ाई...॥3॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री जम्बूद्वीपसंबंधी पूर्वविदेहे 'कच्छा' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'सुकच्छा' लगे मनोहर जिसमें सुरगण आयें।
वहाँ जिनालय अतिशयकारी भव का भ्रमण मिटायें॥ ढ़ाई...॥4॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री जम्बूद्वीपसंबंधी पूर्वविदेहे 'सुकच्छा' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दिव्यध्वनि अरिहंत सुनायें 'महाकच्छ' नगरी में।
उनकी पावन दिव्य देशना भव्य वरें जीवन में॥ ढ़ाई...॥5॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री जम्बूद्वीपसंबंधी पूर्वविदेहे 'महाकच्छा' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नगर 'कच्छकावती' निराला जहाँ अप्सरा नाचें।
जिनशासन की भक्ति करने भरते हरिण कुलाचें[1]॥ ढ़ाई...॥6॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री जम्बूद्वीपसंबंधी पूर्वविदेहे 'कच्छकावती' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तीर्थंकर अरिहंतों को मुनि त्रय आवर्तन करते।
'आवर्ता' नगरी में ऋषिगण भव का वर्तन हरते॥ ढ़ाई...॥7॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री जम्बूद्वीपसंबंधी पूर्वविदेहे 'आवर्ता' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. उछलना।

देश 'लांगलावर्ता' मनहर धर्म सभा जिन राजे।
देव-देवियाँ नाचे-गायें बजते दुंदुभि बाजे॥
ढ़ाई द्वीप के जिनराजों को मन-वच-तन से ध्याऊँ।
भक्ति भाव से अर्घ चढ़ाकर रत्नत्रय गुण पाऊँ॥8॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री जम्बूद्वीपसंबंधी पूर्वविदेहे 'लांगलावर्ता' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नगर 'पुष्कला' में नर पुष्कल[1] कर्म कालिमा हरते।
विविध कला से पुष्प लिए वे भक्ति अर्चना करते॥ ढ़ाई...॥9॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री जम्बूद्वीपसंबंधी पूर्वविदेहे 'पुष्कला' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भक्त सभी 'पुष्कलावती' में प्रभु आराधन करते।
प्रभु का वंदन कीर्तन करके पाप विराधन करते॥ ढ़ाई...॥10॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री जम्बूद्वीपसंबंधी पूर्वविदेहे 'पुष्कलावती' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'वत्सा' का वात्सल्य अनोखा जैन शास्त्र बतलाते।
वत्स[2] गाय सम प्रीत निभाकर श्रमण मोक्ष को जाते॥ ढ़ाई...॥11॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री जम्बूद्वीपसंबंधी पूर्वविदेहे 'वत्सा' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'सुवत्सा' छह खण्डों में आर्य खण्ड मनहारा।
तीर्थंकर मुनियों का दर्शन जहाँ शोक भयहारा॥ ढ़ाई...॥12॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री जम्बूद्वीपसंबंधी पूर्वविदेहे 'सुवत्सा' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आरज[3]-खण्ड 'महावत्सा' में अतिरमणीय जिनालय।
जहाँ भव्य जन अर्चा करके पायें शीघ्र शिवालय॥ ढ़ाई...॥13॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री जम्बूद्वीपसंबंधी पूर्वविदेहे 'महावत्सा' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. बहुत सारे, 2. बच्चा, 3. आर्य।

देश 'वत्सकावती' धन्य है बहे धर्म की धारा।
इस विदेह से हो विदेह मुनि भव का भ्रमण निवारा॥
ढ़ाई द्वीप के जिनराजों को मन-वच-तन से ध्याऊँ।
भक्ति भाव से अर्घ चढ़ाकर रत्नत्रय गुण पाऊँ॥14॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री जम्बूद्वीपसंबंधी पूर्वविदेहे 'वत्सकावती' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'रम्या' रम्य कुलाचल[1] वन से श्रमणी गण से सुन्दर।
जहाँ गगनचुम्बी अघहारी अतिशायी जिन मंदिर॥ ढ़ाई...॥15॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री जम्बूद्वीपसंबंधी पूर्वविदेहे 'रम्या' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'सुरम्या' तीर्थंकर वा केवलियों से रम्यक[2]।
जहाँ भविकजन प्रभु दर्शन कर पाते दर्शन सम्यक॥ ढ़ाई...॥16॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री जम्बूद्वीपसंबंधी पूर्वविदेहे 'सुरम्या' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ऋद्धि सिद्धि धारक श्रमणों से धरा बनी 'रमणीया'।
वहाँ त्याग तप ग्रन्थ सृजन में लीन रहे श्रमणीया॥ ढ़ाई...॥17॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री जम्बूद्वीपसंबंधी पूर्वविदेहे 'रमणीया' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'मंगलावती' सुहाना जिसमें गणधर ज्ञानी।
मंगलकारी हरें अमंगल मंगल बोध प्रदानी॥ ढ़ाई...॥18॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री जम्बूद्वीपसंबंधी पूर्वविदेहे 'मंगलावती' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मेरु सुदर्शन के पश्चिम में अपर विदेह कहाता।
केवलज्ञानी मुनिराजों से 'पद्मादेश' सुहाता॥ ढ़ाई...॥19॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री जम्बूद्वीपसंबंधी अपरविदेहे 'पद्मादेश' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. पर्वत, 2. सुन्दर।

देश 'सुपद्मा' तीर्थभूत[1] है तीर्थंकर पद पाये।
वहाँ भव्यजन परमबुद्ध हो, अविरल मुक्ति पाये॥
ढ़ाई द्वीप के जिनराजों को मन-वच-तन से ध्याऊँ।
भक्ति भाव से अर्घ चढ़ाकर रत्नत्रय गुण पाऊँ॥20॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री जम्बूद्वीपसंबंधी अपरविदेहे 'सुपद्मादेश' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नवदेवों को पद्म आदि से पूजे 'महासुपद्मा'।
ज्ञान भानु जिनवर को पाकर भव्य हरें भव सदमा[2]॥ ढ़ाई...॥21॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री जम्बूद्वीपसंबंधी अपरविदेहे 'महापद्मा' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'पद्मकावती' सुशोभित कमल रूप मंदिर से।
जहाँ भव्य भंवरे उमड़े वे भक्ति करें अन्तर से॥ ढ़ाई...॥22॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री जम्बूद्वीपसंबंधी अपरविदेहे 'पद्मकावती' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'शंखा' देश सुपुण्य भूमि है धर्म शंख से साजे।
दिव्य ध्वनि सुन भव्य देव नर धर्म-सभा में राजे॥ ढ़ाई...॥23॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री जम्बूद्वीपसंबंधी अपरविदेहे 'शंखा' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'नलिना' भक्त कमल नलिनी से अतिशायी अभिरामा।
जहाँ श्रमणगण वृषरथ[3] चढ़कर वर लेते शिवश्यामा[4]॥ ढ़ाई...॥24॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री जम्बूद्वीपसंबंधी अपरविदेहे 'नलिना' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'कुमुदा' तीर्थंकर रवि पाकर भव्य कुमुद विकसाती।
जिनकी निर्मल ज्ञान रश्मियाँ पाप तिमिर विनशाती॥ ढ़ाई...॥25॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री जम्बूद्वीपसंबंधी अपरविदेहे 'कुमुदा' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. तीर्थ स्वरूप, 2. दुःख, 3. धर्मरूपी रथ, 4. मोक्ष लक्ष्मी।

अपर विदेह 'सरित' नगरी में अंतस् पट खुल जाता।
श्रुत केवलि की श्रुत सरिता में अन्तर्मन धुल जाता॥
ढ़ाई द्वीप के जिनराजों को मन-वच-तन से ध्याऊँ।
भक्ति भाव से अर्घ चढ़ाकर रत्नत्रय गुण पाऊँ॥26॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री जम्बूद्वीपसंबंधी अपरविदेहे 'सरित' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्रमण विप्र[1] की तपोभूमि यह 'वप्रा' देश कहाता।
धर्म ध्वजा से शोभित होकर ज्ञान समीर बहाता॥ ढ़ाई...॥27॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री जम्बूद्वीपसंबंधी अपरविदेहे 'वप्रा' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आत्म गवेषी[2] श्रमण[3] श्रमणियाँ[4] निज में यहाँ विचरते।
देश 'सुवप्रा' के साधक गण उन सम चर्या वरते॥ ढ़ाई...॥28॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री जम्बूद्वीपसंबंधी अपरविदेहे 'सुवप्रा' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'महावप्रा' सुख सागर जहाँ सुसंयम झरना।
तीर्थंकर की तपोभूमि में मिले सुमंगल शरणा॥ ढ़ाई...॥29॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री जम्बूद्वीपसंबंधी अपरविदेहे 'महावप्रा' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समोशरण से शोभ रही है 'वप्रावती' निराली।
प्रभु विहार करने से जिसकी धरा बनी मतवाली॥ ढ़ाई...॥30॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री जम्बूद्वीपसंबंधी अपरविदेहे 'वप्रिकावती' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चम्पक नंदा पारिजात से 'गंधा' नगरी शोभे।
ऋद्धि सिद्धि धारी मुनिवर लख सुर-नर का मन लोभे॥ ढ़ाई...॥31॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री जम्बूद्वीपसंबंधी अपरविदेहे 'गंधा' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. विद्वान्, 2. खोजने वाले, 3. मुनि, 4. आर्यिकाएँ।

ग्रन्थ सुमन से सुरिभत होता मनहर देश 'सुगंधा'।
श्रावक श्रम कर पुण्य कमावें करें पुण्य का धंधा॥
ढ़ाई द्वीप के जिनराजों को मन-वच-तन से ध्याऊँ।
भक्ति भाव से अर्घ चढ़ाकर रत्नत्रय गुण पाऊँ॥32॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री जम्बूद्वीपसंबंधी अपरविदेहे 'सुगंधा' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

क्षेत्र 'गंधिला' में प्रभुवर ने केवल ज्योति जलाई।
भव्य जनों को राह बताकर मोक्ष गये शिवराई॥ ढ़ाई...॥33॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री जम्बूद्वीपसंबंधी अपरविदेहे 'गंधिला' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गंध मनोहर मालाओं से भक्ति करें नर-नारी।
'गंधमालिनी' अतिशय नगरी प्रभु पद पंकज धारी॥ ढ़ाई...॥34॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री जम्बूद्वीपसंबंधी अपरविदेहे 'गंधमालिनी' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्वधातकीखण्डद्वीप संबंधी चौतीसकर्मभूमिज तीर्थंकरों के अर्घ

अथ मंडलस्योपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

(अडिल्ल छंद)

पूर्व धातकी खण्ड द्वीप मन भावना।
'भरत' क्षेत्र में आर्य खण्ड है पावना॥
चौथे युग में वहाँ कर्म भूमि रहे।
तीर्थंकर की वहाँ ज्ञान गंगा बहे॥1॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पूर्वधातकी खण्ड द्वीप संबंधी 'भरत' क्षेत्र स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्व धातकी लाख युगल योजन महा।
विजय मेरु के उत्तर 'ऐरावत' कहा॥
काल चतुर्थे तीर्थंकर होते जहाँ।
चक्री नर सुर जिनको नित पूजें वहाँ॥2॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पूर्वधातकी खण्ड द्वीप संबंधी 'ऐरावत' क्षेत्र स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विजय मेरु के पूरब में 'कच्छा' नगर।
जहाँ जिनेश्वर बतलायें शिवपुर डगर॥
पूर्व धातकी के जिनवर को ध्या रहे।
रत्नत्रय पाने हम अर्घ चढ़ा रहे॥3॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पूर्वधातकी खण्ड द्वीप संबंधी पूर्वविदेहे 'कच्छा' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'सुकच्छा' सदा मुक्ति का पंथ है।
जहाँ नहीं कभी कोई मिथ्या पंथ है॥ पूर्व...॥4॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पूर्वधातकी खण्ड द्वीप संबंधी पूर्वविदेहे 'सुकच्छा' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नगर 'महाकच्छा' के भी छह खण्ड हैं।
आर्य खण्ड में चले धरम का दण्ड है॥ पूर्व...॥5॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पूर्वधातकी खण्ड द्वीप संबंधी पूर्वविदेहे 'महाकच्छा' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

क्षेत्र 'कच्छकावती' श्रमण का तीर्थ है।
वहाँ धर्म साधन की मंगल रीत है॥ पूर्व...॥6॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पूर्वधातकी खण्ड द्वीप संबंधी पूर्वविदेहे 'कच्छकावती' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

त्रय आवर्तन आदि करें सारे मुनी।
'आवर्ता में आतम धन वरते धुनी॥ पूर्व...॥7॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पूर्वधातकी खण्ड द्वीप संबंधी पूर्वविदेहे 'आवर्ता' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

लांगल विद्याधर यतियों को पूजते।
'लांगल आवर्ता' में सुख से झूलते॥ पूर्व...॥8॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पूर्वधातकी खण्ड द्वीप संबंधी पूर्वविदेहे 'लांगलावर्ता' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

लगे 'पुष्कला' पुष्पों सी सुरभित मुदा।
प्रभु महिमा से षट् ऋतुएँ होती सदा॥
पूर्व धातकी के जिनवर को ध्या रहे।
रत्नत्रय पाने हम अर्घ चढ़ा रहे॥9॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पूर्वधातकी खण्ड द्वीप संबंधी पूर्वविदेहे 'पुष्कला' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'पुष्कलावती' जहाँ पुष्कलयती[1]।
शिवपुर पति बन जाते पाकर सन्मती॥ पूर्व...॥10॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पूर्वधातकी खण्ड द्वीप संबंधी पूर्वविदेहे 'पुष्कलावती' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तीर्थंकर के निकट भव्य जन आ रहे।
'वत्सा' में वात्सल्य ईश का पा रहे॥ पूर्व...॥11॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पूर्वधातकी खण्ड द्वीप संबंधी पूर्वविदेहे 'वत्सा' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

क्षेत्र 'सुवत्सा' तीर्थभूमि कहला रहा।
तीर्थंकर के यशोगान को गा रहा॥ पूर्व...॥12॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पूर्वधातकी खण्ड द्वीप संबंधी पूर्वविदेहे 'सुवत्सा' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री जिन के कल्याणक से कल्याण है।
देश 'महावत्सा' का पुण्य अपार है॥ पूर्व...॥13॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पूर्वधातकी खण्ड द्वीप संबंधी पूर्वविदेहे 'महावत्सा' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तीर्थ धाम का पावन पुण्य विशाल है।
क्षेत्र 'वत्सकावती' सदा खुशहाल है॥ पूर्व...॥14॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पूर्वधातकी खण्ड द्वीप संबंधी पूर्वविदेहे 'वत्सकावती' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. बहुत सारे मुनि।

'रम्यावासी' राग द्वेष से दूर हो।
प्रभु चरणों में करें कर्म चकचूर वो॥
पूर्व धातकी के जिनवर को ध्या रहे।
रत्नत्रय पाने हम अर्घ चढ़ा रहे॥15॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पूर्वधातकी खण्ड द्वीप संबंधी पूर्वविदेहे 'रम्या' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

क्षेत्र 'सुरम्या' समोशरण से रम्य है।
जहाँ जिनेश्वर वाणी सबके गम्य[1] है॥ पूर्व...॥16॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पूर्वधातकी खण्ड द्वीप संबंधी पूर्वविदेहे 'सुरम्या' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'रमणीया' में श्रमण श्रमणिया श्रम करें।
धर्म देशना दे भव्यों का भ्रम हरें॥ पूर्व...॥17॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पूर्वधातकी खण्ड द्वीप संबंधी पूर्वविदेहे 'रमणीया' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'मंगलावती' बनी मंगल पुरी[2]।
पंच सुमंगल उत्सव की मंगल धुरी॥ पूर्व...॥18॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पूर्वधातकी खण्ड द्वीप संबंधी पूर्वविदेहे 'मंगलावती' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'पद्मा' की वसुधा[3] पद्मों से खचित है।
जहाँ धनद[4] कृत समोशरण भी रचित है॥ पूर्व...॥19॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पूर्वधातकी खण्ड द्वीप संबंधी अपरविदेहे 'पद्मा' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुरकृत स्वर्ण पदम से जिन ऊपर चलें।
नगर 'सुपद्मा' के सारे संकट टलें॥ पूर्व...॥20॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पूर्वधातकी खण्ड द्वीप संबंधी अपरविदेहे 'सुपद्मा' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. जानना, 2. नगरी, 3. धरती, 4. धनपति कुबेर।

क्षेत्र 'महापद्मा' प्रभु को पाये सदा।
जिनके दर्शन से मिट जाये आपदा॥
पूर्व धातकी के जिनवर को ध्या रहे।
रत्नत्रय पाने हम अर्घ चढ़ा रहे॥21॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पूर्वधातकी खण्ड द्वीप संबंधी अपरविदेहे 'महापद्मा' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'पद्मकावती' सुगंधित पद्म सम।
जहाँ चतुर्विध संघ हरे मिथ्या भरम॥ पूर्व...॥22॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पूर्वधातकी खण्ड द्वीप संबंधी अपरविदेहे 'पद्मकावती' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शंखनाद 'शंखा' में होता धर्म का।
प्रभु सन्निध में विलय हुआ वसु कर्म का॥ पूर्व...॥23॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पूर्वधातकी खण्ड द्वीप संबंधी अपरविदेहे 'शंखा' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्म नाल कटती 'नलिना' में सर्वदा।
तीर्थंकर मुख से बहती श्रुत नर्मदा॥ पूर्व...॥24॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पूर्वधातकी खण्ड द्वीप संबंधी अपरविदेहे 'नलिना' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'कुमुदा' भक्त कुमुद से सुरभित हो रही।
केवल रवि को पाकर प्रमुदित हो रही॥ पूर्व...॥25॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पूर्वधातकी खण्ड द्वीप संबंधी अपरविदेहे 'कुमुदा' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'सरित' क्षेत्र में बहती सरिता त्याग की।
भव्य झाकियाँ दिखती हैं वैराग्य की॥ पूर्व...॥26॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पूर्वधातकी खण्ड द्वीप संबंधी अपरविदेहे 'सरित' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'वप्रा' में तीर्थंकर दीक्षा दे रहे।
प्रशम भाव धारो यह शिक्षा दे रहे
पूर्व धातकी के जिनवर को ध्या रहे।
रत्नत्रय पाने हम अर्घ चढ़ा रहे॥27॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पूर्वधातकी खण्ड द्वीप संबंधी अपरविदेहे 'वप्रा' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शम दम से वैराग्य भाव धारण करें।
देश 'सुवप्रा' के प्रभु दुःख दारुण[1] हरें॥ पूर्व...॥28॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पूर्वधातकी खण्ड द्वीप संबंधी अपरविदेहे 'सुवप्रा' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भव्य पाप की तपन हरें उपदेश से।
'महावप्र' में श्रीजिन के संदेश से॥ पूर्व...॥29॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पूर्वधातकी खण्ड द्वीप संबंधी अपरविदेहे 'महावप्रा' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'वप्रकावती' जहाँ जिनवर शरण।
प्रभु दर्शन से पाते मुनि पंडितमरण॥ पूर्व...॥30॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पूर्वधातकी खण्ड द्वीप संबंधी अपरविदेहे 'वप्रकावती' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'गंधा' में शुभ गंध उड़े चारित्र की।
वहाँ चाह मुनियों सम सच्चे मित्र की॥ पूर्व...॥31॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पूर्वधातकी खण्ड द्वीप संबंधी अपरविदेहे 'गंधा' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'सुगन्धा' में लहरे परमार्थ की।
वहाँ श्रमण चर्या साधे शिवस्वार्थ की॥ पूर्व...॥32॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पूर्वधातकी खण्ड द्वीप संबंधी अपरविदेहे 'सुगन्धा' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. कठोर दुःख, 2. समाधिमरण का एक भेद।

श्रमण साधना होती है जिस देश में।
देश 'महागंधा' का यश हर देश में॥
पूर्व धातकी के जिनवर को ध्या रहे।
रत्नत्रय पाने हम अर्घ चढ़ा रहे॥33॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पूर्वधातकी खण्ड द्वीप संबंधी अपरविदेहे 'महागंधादेश' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अतिशय देह सुगंधित प्रभुवर की जहाँ।
'गंधमालिनी' में कल्याणक हो वहाँ॥ पूर्व...॥34॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पूर्वधातकी खण्ड द्वीप संबंधी अपरविदेहे 'गंधमालिनी' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पश्चिम धातकीखंडद्वीप संबंधी चौतिंस कर्मभूमिज तीर्थंकरों के अर्घ

अथ मंडलस्योपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

(शंभु छंद)

हम अपर[1] धातकी खण्ड रहे तीर्थंकर को नित ध्याते हैं।
शुभ 'भरत' क्षेत्र के ऋषिगण को मन मन्दिर में पड़गाते[2] हैं॥
लख अपर धातकी के प्रभु का सब पाप तिमिर नश जाता है।
जो मन से श्रद्धा करता है वो शिवपुर में बस जाता है॥1॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पश्चिमधातकी खण्ड द्वीप संबंधी 'भरत' क्षेत्र स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री अचल मेरु के उत्तर में 'ऐरावत' क्षेत्र लगे प्यारा।
इसमें तीर्थंकर मुनिवर की बहती है ज्ञान सलिल[3] धारा॥ लख...॥2॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पश्चिमधातकी खण्ड द्वीप संबंधी 'ऐरावत' क्षेत्र स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

त्रयकाल भक्ति करने वाले 'कच्छा' नगरी के वासी हैं।
जिनशासन की सेवा करते वे मुनिपद के अभिलाषी हैं॥ लख...॥3॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पश्चिमधातकी खण्ड द्वीप संबंधी पूर्वविदेहे 'कच्छा' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. बुलाना, 2. पश्चिम, 3. जल।

वह देश 'सुकच्छा' पावन है जिसमें तीर्थंकर होते हैं।
प्रभु पूजा कर भविजन निज के सब पाप कर्म को धोते हैं॥
लख अपर धातकी के प्रभु का सब पाप तिमिर नश जाता है।
जो मन से श्रद्धा करता है वो शिवपुर में बस जाता है॥4॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पश्चिमधातकी खण्ड द्वीप संबंधी पूर्वविदेहे 'सुकच्छा' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अतिपावन तीर्थ 'महाकच्छा' तीर्थंकर समोशरण राजे।
रत्नत्रय धारी श्रमण संघ गण अधिनायक उसमें साजे॥ लख...॥5॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पश्चिमधातकी खण्ड द्वीप संबंधी पूर्वविदेहे 'महाकच्छा' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अरिहंत 'कच्छकावती' रहें वे शिवपुर मार्ग बताते हैं।
इनकी सेवा करने वाले निज पाप करम विनशाते हैं॥ लख...॥6॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पश्चिमधातकी खण्ड द्वीप संबंधी पूर्वविदेहे 'कच्छकावती' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जो पंच परावर्तन तजने प्रभु चरणों में नित आते हैं।
'आवर्ता' नगरी धन्य हुई जहँ श्रमण शिवालय पाते हैं॥ लख...॥7॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पश्चिमधातकी खण्ड द्वीप संबंधी पूर्वविदेहे 'आवर्ता' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

परमौदारिक तन के धारी 'लांगल आवर्ता' में आये।
उनकी मंगलवाणी सुनकर भक्तों का जीवन हर्षाये॥ लख...॥8॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पश्चिमधातकी खण्ड द्वीप संबंधी पूर्वविदेहे 'लांगलावर्ता' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'पुष्कला' नगर शाश्वत तीरथ धर्मोत्सव नित जिसमें होता।
क्षीरादि[1] भरे शुभ कलशों से अभिषेक जिनालय में होता॥ लख...॥9॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पश्चिमधातकी खण्ड द्वीप संबंधी पूर्वविदेहे 'पुष्कला' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. दूध आदि पंचामृत।

अर्हन्तों के चौंतिस अतिशय जिस वसुधा पर निशदिन होते।
है पुण्यवती 'पुष्कलावती' कल्याणक नित जिसमें होते।।
लख अपर धातकी के प्रभु का सब पाप तिमिर नश जाता है।
जो मन से श्रद्धा करता है वो शिवपुर में बस जाता है।।10।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पश्चिमधातकी खण्ड द्वीप संबंधी पूर्वविदेहे 'पुष्कलावती' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वह धरती तीर्थ प्रसूता[1] है जहँ तीर्थंकर अवतीर्ण[2] हुए।
'वत्सा' के वत्सल गुणधारी मुनिवर तप में उत्तीर्ण हुए।। लख...।।11।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पश्चिमधातकी खण्ड द्वीप संबंधी पूर्वविदेहे 'वत्सा' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

यह नगर 'सुवत्सा' मनहारी प्रभु दर्शन से सुखकारी है।
मंगलमय प्रतिमायें न्यारी जो भव-भव संकटहारी हैं।। लख...।।12।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पश्चिमधातकी खण्ड द्वीप संबंधी पूर्वविदेहे 'सुवत्सा' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जहँ धर्म सभा लगती प्रभु की सतकाल वहाँ नित रहता है।
धनभाग 'महावत्सा' नगरी जिसमें धर्मामृत बहता है।। लख...।।13।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पश्चिमधातकी खण्ड द्वीप संबंधी पूर्वविदेहे 'महावत्सा' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मनहर नगरी 'वत्सकावती' जहाँ मुनि जन पायें गूढ़मति।
उन मुनिवर के दर्शन पाकर भविजन बन जाते परम यति।। लख...।।14।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पश्चिमधातकी खण्ड द्वीप संबंधी पूर्वविदेहे 'वत्सकावती' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उन्नत मनहर शिखरों वाले जिन चैत्यालय हैं प्रभुवर के।
'रम्या' में धर्म देशना शुभ पाते हैं भविजन ऋषिवर से।। लख...।।15।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पश्चिमधातकी खण्ड द्वीप संबंधी पूर्वविदेहे 'रम्या' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. जन्म देने वाली, 2. जन्म।

जिनमन्दिर के घंटाओं से 'शुभरम्या' गूँज रही सारी।
प्रभुवर की गुण पूजा करते हर्षित होकर सब नर-नारी।।
लख अपर धातकी के प्रभु का सब पाप तिमिर नश जाता है।
जो मन से श्रद्धा करता है वो शिवपुर में बस जाता है।।16।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पश्चिमधातकी खण्ड द्वीप संबंधी पूर्वविदेहे 'सुरम्या' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'रमणीया' के जिनमन्दिर में रम्यक् मनहर उद्यान बने।
फर-फर फहराते झण्डों से वे मंदिर पुष्पक यान बने।। लख...।।17।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पश्चिमधातकी खण्ड द्वीप संबंधी पूर्वविदेहे 'रमणीया' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'मंगलावती' मंगलकारी जिसमें मंगल ध्वनि ध्वनित हुई।
इन्द्राणी प्रभु पद में रत हो जिन गुण गाकर मन मुदित हुई।। लख...।।18।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पश्चिमधातकी खण्ड द्वीप संबंधी पूर्वविदेहे 'मंगलावती' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिनवर के पाद पद्म सम्मुख 'पद्मा' के पद्म[1] लगे फीके।
अतएव चमकते स्वर्ण कमल शोभे प्रभुवर के पद नीचे।। लख...।।19।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पश्चिमधातकी खण्ड द्वीप संबंधी अपरविदेहे 'पद्मा' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री नगर 'सुपद्मा' के मुनिगण कर्मों की होली जला रहे।
ये संत रसिक भवि को शिव का रसदार मधुर रस पिला रहे।। लख...।।20।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पश्चिमधातकी खण्ड द्वीप संबंधी अपरविदेहे 'सुपद्मा' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री देश 'महापद्मा' का नभ सुरकृत पद्मों से दमक रहा।
जिनवर की पदरज को पाकर हर पद्म सूर्य सम चमक रहा।। लख...।।21।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पश्चिमधातकी खण्ड द्वीप संबंधी अपरविदेहे 'महापद्मा' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. कमल।

पद्मों से प्रभु को पूज रहे 'पद्मकावती' नगरीवासी।
जिन चरणों के जो अभिलाषी वो बनते हैं शिवपुरवासी।।
लख अपर धातकी के प्रभु का सब पाप तिमिर नश जाता है।
जो मन से श्रद्धा करता है वो शिवपुर में बस जाता है।।22।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पश्चिमधातकी खण्ड द्वीप संबंधी अपरविदेहे 'पद्मकावती' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिन आगम का हो शंखनाद 'शंखा' में निशदिन अघहारी।
दुःख हर सुखकर भक्ति करते प्रभु के सम्मुख सुर नर–नारी।। लख...।।23।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पश्चिमधातकी खण्ड द्वीप संबंधी अपरविदेहे 'शंखा' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'नलिना' की ललनायें[1] मिलकर प्रभु भक्ति महोत्सव करती हैं।
सम्यग्दर्शन पा परभव में वे क्रमिक मोक्ष सुख वरती हैं।। लख...।।24।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पश्चिमधातकी खण्ड द्वीप संबंधी अपरविदेहे 'नलिना' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'कुमुदा' के कुमुदोद्यानों[2] में जिन प्रतिमा सुन्दर मनहारी।
दर्शन करके मन कुमुद खिले संकट हरते प्रभु सुखकारी।। लख...।।25।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पश्चिमधातकी खण्ड द्वीप संबंधी अपरविदेहे 'कुमुदा' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शुभ देश 'सरित' में जिनमुख से ओंकार ध्वनि सरिता बहती।
वन उपवन खग सरिता वापी प्रभु महिमा की कविता कहती।। लख...।।26।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पश्चिमधातकी खण्ड द्वीप संबंधी अपरविदेहे 'सरित' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'वप्रा' का पुण्य निराला है जहाँ शाश्वत धर्म सभा लगती।
वैभव दिखता जिन तीर्थों में निशदिन ही ज्ञान सभा लगती।। लख...।।27।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पश्चिमधातकी खण्ड द्वीप संबंधी अपरविदेहे 'वप्रा' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. स्त्रियाँ, 2. कमल का बगीचा।

श्रमणों का ध्यान मनन चिंतन, भव्यों का मोह भगाता है।
शुभ नगर 'सुवप्रा' वासी में शिवपथ अनुराग जगाता है।।
लख अपर धातकी के प्रभु का सब पाप तिमिर नश जाता है।
जो मन से श्रद्धा करता है वो शिवपुर में बस जाता है।।28।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पश्चिमधातकी खण्ड द्वीप संबंधी अपरविदेहे 'सुवप्रा' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पलने में लेटे शिशु को माँ, अध्यातम गीत सुनाती है।
उस देश 'महावप्रा' की रज शिवपथ की प्रीत जगाती है।। लख...।।29।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पश्चिमधातकी खण्ड द्वीप संबंधी अपरविदेहे 'महावप्रा' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नभ जिसका नभगामी मुनियों औ समोशरण से शोभ रहा।
'वप्रकावती' का यह तप सुख सारे स्वर्गों को लोभ रहा।। लख...।।30।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पश्चिमधातकी खण्ड द्वीप संबंधी अपरविदेहे 'वप्रिकावती' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिनवर पर क्षेपित पुष्पांजलि 'गंधा' को सुरभित करती है।
जिसमें ऊँची जिन प्रतिमायें श्रद्धा को विकसित करती हैं।। लख...।।31।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पश्चिमधातकी खण्ड द्वीप संबंधी अपरविदेहे 'गंधा' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'शुभगंधा' में सद्भक्तों के गृह चैत्यालय बहुतेरे हैं।
भव्यों के मन को हरने में लगते जो कुशल चितेरे[1] हैं।। लख...।।32।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पश्चिमधातकी खण्ड द्वीप संबंधी अपरविदेहे 'सुगंधा' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सब श्रमण 'महागंधा' के मिल अध्यातम गंध लगाते हैं।
चारित्र इत्र से सुरभित हो वैभाविक गंध भगाते हैं।। लख...।।33।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पश्चिमधातकी खण्ड द्वीप संबंधी अपरविदेहे 'महागंधा' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. चित्रकार।

गणधर ने 'गंधमालिनी' में सद्ज्ञान प्रभा विकसाई है।
रत्नत्रय के उजियाले से मिथ्यात्व निशा[1] विनशाई है॥
लख अपर धातकी के प्रभु का सब पाप तिमिर नश जाता है।
जो मन से श्रद्धा करता है वो शिवपुर में बस जाता है॥34॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पश्चिमधातकी खण्ड द्वीप संबंधी अपरविदेहे 'गंधमालिनी' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्व पुष्करार्द्ध द्वीप संबंधी 34 कर्मभूमिज तीर्थंकरों के अर्घ

अथ मंडलस्योपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

(नवगीता छंद)

छह खण्ड से शोभित भरत में आर्यखण्ड महान् है।
तीर्थंकरों के तीर्थ का होता यहाँ अभियान है॥
हम पूर्व पुष्कर द्वीप के तीर्थंकरों को ध्या रहे।
निर्वाण पद के लाभ हेतु अर्घ मनहर ला रहे॥1॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पूर्वपुष्करार्द्ध द्वीप संबंधी 'भरत' क्षेत्र स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अनुनय विनय से भक्त गण करते स्तवन जिनराज का।
वह क्षेत्र 'ऐरावत' बना है तीर्थ भव्य समाज का॥ हम...॥2॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पूर्वपुष्करार्द्ध द्वीप संबंधी 'ऐरावत' क्षेत्र स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'कच्छा' नगर की मूर्तियाँ मिथ्यात्व मोह निवारती।
अध्यात्म गुण विकसित करें चिरकाल के अघ टारती॥ हम...॥3॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पूर्वपुष्करार्द्ध द्वीप संबंधी पूर्वविदेहे 'कच्छा' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पावन 'सुकच्छा' देश में अतिशय निरन्तर हो रहे।
प्रभु चरण रज से भविक जन निज पाप मल को धो रहे॥ हम...॥4॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पूर्वपुष्करार्द्ध द्वीप संबंधी पूर्वविदेहे 'सुकच्छा' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. रात।

सम्यक्त्व ज्ञान चरित्र की प्रतिमूर्ति तीर्थंकर प्रभो।
नगरी 'महाकच्छा' जहाँ राजे सदा जिनवर विभो॥
हम पूर्व पुष्कर द्वीप के तीर्थंकरों को ध्या रहे।
निर्वाण पद के लाभ हेतु अर्घ मनहर ला रहे॥5॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पूर्वपुष्करार्द्ध द्वीप संबंधी पूर्वविदेहे 'महाकच्छा' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'कच्छकवती' में पुण्य से जिनधर्म धारा बह रही।
प्रभु की सुमंगल देशना मुनिराज चर्या कह रही॥ हम...॥6॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पूर्वपुष्करार्द्ध द्वीप संबंधी पूर्वविदेहे 'कच्छकावती' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गति चार का वर्तन मिटे 'आवर्त' के प्रभु दर्श से।
पंचमसुगति[1] का पद मिले निज शुद्ध आतम दर्श से॥ हम...॥7॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पूर्वपुष्करार्द्ध द्वीप संबंधी पूर्वविदेहे 'आवर्ता' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री 'लांगलावर्ता' नगर में गल रहे सब पाप हैं।
भवि जीव के अघ मेटते जिनवर परम निष्पाप हैं॥ हम...॥8॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पूर्वपुष्करार्द्ध द्वीप संबंधी पूर्वविदेहे 'लांगलावर्ता' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पा जिन चरण सान्निध्य हम इस 'पुष्कला' के गगन में।
तप आचरें जिनरूप धर हम तप करें तन भुवन में॥ हम...॥9॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पूर्वपुष्करार्द्ध द्वीप संबंधी पूर्वविदेहे 'पुष्कला' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'पुष्कलवती' में नित्य ही कीर्तन श्रमण[2] का हो रहा।
वंदन भजन के लाभ से सम्यक्त्व दर्शन हो रहा॥ हम...॥10॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पूर्वपुष्करार्द्ध द्वीप संबंधी पूर्वविदेहे 'पुष्कलावती' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. मोक्ष, 2. मुनि।

जिन धर्म के अनुराग से 'वत्सा' नगर जग सिद्ध है।
उसमें भविक जिनरूप धर बनते निरन्तर सिद्ध हैं॥
हम पूर्व पुष्कर द्वीप के तीर्थंकरों को ध्या रहे।
निर्वाण पद के लाभ हेतु अर्घ मनहर ला रहे॥11॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पूर्वपुष्करार्द्ध द्वीप संबंधी पूर्वविदेहे 'वत्सा' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुन्दर 'सुवत्सा' तीर्थ में दिखते प्रचुर आश्चर्य हैं।
आजन्म वैरी वैर तज वरते सदा साहचर्य[1] हैं॥ हम...॥12॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पूर्वपुष्करार्द्ध द्वीप संबंधी पूर्वविदेहे 'सुवत्सा' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नगरी 'महावत्सा' जहाँ सुन्दर जिनालय बन रहे।
तीर्थंकरों के दर्श से सब शोक क्रन्दन टल रहे॥ हम...॥13॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पूर्वपुष्करार्द्ध द्वीप संबंधी पूर्वविदेहे 'महावत्सा' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री 'वत्सकावती' में बसे भवि धर्मवत्सलता धरें।
तीर्थंकरों का कर भजन शिवपुर सदन[1] निश्चय वरें॥ हम...॥14॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पूर्वपुष्करार्द्ध द्वीप संबंधी पूर्वविदेहे 'वत्सकावती' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अक्षय रमा[2] की साधना करते श्रमण गण ध्यान से।
'रम्या' नगर के तीर्थ की सेवा करें सम्मान से॥ हम...॥15॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पूर्वपुष्करार्द्ध द्वीप संबंधी पूर्वविदेहे 'रम्या' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रभुगम्य भी दुष्कर करम कटते 'सुरम्या' तीर्थ में।
तिरते भविक भव वारिधी[3] दुर्लभ श्रमण पद तीर्थ में॥ हम...॥16॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पूर्वपुष्करार्द्ध द्वीप संबंधी पूर्वविदेहे 'सुरम्या' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. मित्रता, 2. लक्ष्मी, 3. सागर।

वह देश 'रमणीया' जहाँ रमते श्रमण निज ध्यान में।
अज्ञानतम हर पद मिले जिनके विशद व्याख्यान में॥
हम पूर्व पुष्कर द्वीप के तीर्थंकरों को ध्या रहे।
निर्वाण पद के लाभ हेतु अर्घ मनहर ला रहे॥17॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पूर्वपुष्करार्द्ध द्वीप संबंधी पूर्वविदेहे 'रमणीया' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मंगल अमंगल हर रहे श्री 'मंगलावती' देश में।
प्रभु अर्चना को आ रहे भविजन सुमंगल वेष में॥ हम...॥18॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पूर्वपुष्करार्द्ध द्वीप संबंधी पूर्वविदेहे 'मंगलावती' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिनराज के पद पद्म में सुर नर सुमन अर्पण करें।
'पद्मा' नगर के भव्यजन निज पाप का तर्पण करें॥ हम...॥19॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पूर्वपुष्करार्द्ध द्वीप संबंधी अपरविदेहे 'पद्मा' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुन्दर 'सुपद्मा' के भविक त्रैलोक्य का मन मोहते।
कृत्रिम अकृत्रिम भव्यतम जिनचैत्य उनमें सोहते॥ हम...॥20॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पूर्वपुष्करार्द्ध द्वीप संबंधी अपरविदेहे 'सुपद्मा' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नगरी 'महापद्मा' बसें त्यागी महाव्रत पालते।
आवश्य षट् को पालकर वे कर्म आवृत[1] टालते॥ हम...॥21॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पूर्वपुष्करार्द्ध द्वीप संबंधी अपरविदेहे 'महापद्मा' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री 'पद्मकावती' के पदम शोभें प्रभु पद पद्म से।
अमरावती के इन्द्रगण पूजें वरें शिव[2] सद्म[3] वे॥ हम...॥22॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पूर्वपुष्करार्द्ध द्वीप संबंधी अपरविदेहे 'पद्मकावती' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. आवरण, 2. मोक्ष, 3. शीघ्र।

शंकादि दोषों से रहित 'शंखा' नगर के लोग हैं।
जिसमें परम तप धर श्रमण, करते गमन खग[1] लोक में॥
हम पूर्व पुष्कर द्वीप के तीर्थंकरों को ध्या रहे।
निर्वाण पद के लाभ हेतु अर्घ मनहर ला रहे॥23॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पूर्वपुष्करार्द्ध द्वीप संबंधी अपरविदेहे 'शंखा' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'नलिनावती' की आर्यिका निर्मल महाव्रत पालती।
निज नैन शिवपथ से लगा श्रुतज्ञान को विस्तारती॥ हम...॥24॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पूर्वपुष्करार्द्ध द्वीप संबंधी अपरविदेहे 'नलिना' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'कुमुदा' सदा प्रमुदित रहे अर्हंत के सद्भाव से।
भव से तिरें मुनिवर जहाँ जिनधर्म रूपी नाव से॥ हम...॥25॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पूर्वपुष्करार्द्ध द्वीप संबंधी अपरविदेहे 'कुमुदा' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तीर्थंकरों के ज्ञान की सरिता 'सरित' में बह रही।
जिनके परम चारित्र को ऋतुएँ स्वयं ही कह रही॥ हम...॥26॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पूर्वपुष्करार्द्ध द्वीप संबंधी अपरविदेहे 'सरित' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'वप्रा' नगर की वापिका[2] प्रभु के चरण प्रक्षालती।
जिसकी सुखद सामीप्यता जग संकटों को टालती॥ हम...॥27॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पूर्वपुष्करार्द्ध द्वीप संबंधी अपरविदेहे 'वप्रा' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कण-कण महापावन जहाँ अर्हच्चरण मिलते सदा।
वसुधा 'सुवप्रा' मुक्तिदा[3] चारों शरण देती सदा॥ हम...॥28॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पूर्वपुष्करार्द्ध द्वीप संबंधी अपरविदेहे 'सुवप्रा' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. आकाश, 2. बावड़ी, 3. मुक्ति देनेवाली।

तीर्थेश की पग रेणु[1] से शोभित 'महावप्रा' मही।
पूजें उसे हम भाव से पाने महामंगल मही॥
हम पूर्व पुष्कर द्वीप के तीर्थंकरों को ध्या रहे।
निर्वाण पद के लाभ हेतु अर्घ मनहर ला रहे॥29॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पूर्वपुष्करार्द्ध द्वीप संबंधी अपरविदेहे 'महावप्रा' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिसकी अकथ[2] मनहर कथा, मुनिराज ने रुचि से कही।
उस 'वप्रकावती' के सफल ऋषि पा रहे मुक्ति मही॥ हम...॥30॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पूर्वपुष्करार्द्ध द्वीप संबंधी अपरविदेहे 'वप्रकावती' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'गंधा' नगर में उड़ रही शुभ गंध प्रभु के ज्ञान की।
जिसमें सदा मुनिवर कहें श्रुत सूक्तियाँ उत्थान की॥ हम...॥31॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पूर्वपुष्करार्द्ध द्वीप संबंधी अपरविदेहे 'गंधा' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तीर्थेश के संदेश से सुरभित 'सुगंधा' की धरा।
उनकी महा अर्चा हरे दुःख जन्म वा मृत्यु जरा॥ हम...॥32॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पूर्वपुष्करार्द्ध द्वीप संबंधी अपरविदेहे 'सुगंधा' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिस 'गंधिला' के आर्य जन त्यागें विषय दुर्गंध को।
उसके सभी अर्हंत को हम अर्चते निर्द्वन्द हो॥ हम...॥33॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पूर्वपुष्करार्द्ध द्वीप संबंधी अपरविदेहे 'गंधिला' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिसके गुरुकुल मुक्तिवर ऋषि-बालकों से शोभते।
उस 'गंधमालिनी' के मुनि शिवधाम वधु[3] को लोभते॥ हम...॥34॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पूर्वपुष्करार्द्ध द्वीप संबंधी अपरविदेहे 'गंधमालिनी' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. धूल, 2. जो कहीं न जा सके, 3. दुल्हन।

अपर पुष्करार्द्ध द्वीप संबंधी 34 कर्मभूमिज तीर्थंकरों के अर्घ

अथ मंडलस्योपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

(काव्य छंद)

पश्चिम पुष्कर द्वीप, जिसमें विद्युन्माली।
जिसके दक्षिण ओर 'भरत' भूमि उजियाली॥
जिसमें चौथे काल तीर्थंकर जन्मे हैं।
करके धर्म प्रभात निज में स्वयं रमे हैं॥1॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अपरपुष्करार्द्ध द्वीप संबंधी 'भरत' क्षेत्र स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भरत क्षेत्र समरूप 'ऐरावत' मन भावन।
जिसमें सुन्दर चैत्य चैत्यालय हैं पावन॥
इसमें कृतयुग बीच तीर्थंकर प्रभु आये।
उनको अर्घ चढ़ाय सुर नर पाप नशायें॥2॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अपरपुष्करार्द्ध द्वीप संबंधी 'ऐरावत' क्षेत्र स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'कच्छा' के जिननाथ करुणा भाव जगाते।
देकर हित उपदेश भव्यों को हर्षाते॥
तीर्थंकर जिनराज पश्चिम पुष्करवर के।
करूँ अर्चना आज अर्घ थाल भर-भर के॥3॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अपरपुष्करार्द्ध द्वीप संबंधी पूर्वविदेहे 'कच्छा' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्कालसंबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इन्द्रिय सुख का त्याग, स्वेच्छा से जो करता।
क्षेत्र 'सुकच्छा' पाय, सुख अच्छा वो वरता॥ तीर्थंकर...॥4॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अपरपुष्करार्द्ध द्वीप संबंधी पूर्वविदेहे 'सुकच्छा' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'महाकच्छ' इक देश जिसमें भव्य जिनालय।
भव-भव के सब पाप हरते जिन चैत्यालय॥
तीर्थंकर जिनराज पश्चिम पुष्करवर के।
करूँ अर्चना आज अर्घ थाल भर-भर के॥5॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अपरपुष्करार्द्ध द्वीप संबंधी पूर्वविदेहे 'महाकच्छा' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'कच्छकवती' महान् जिसमें संत विराजे।
करके आतम ध्यान निज आतम में राजे॥ तीर्थंकर...॥6॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अपरपुष्करार्द्ध द्वीप संबंधी पूर्वविदेहे 'कच्छकावती' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुर गण कर आवर्त 'आवर्ता' नगरी का।
हर्ष मनायें नव्य[1] दर्शन कर जिनजी का॥ तीर्थंकर...॥7॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अपरपुष्करार्द्ध द्वीप संबंधी पूर्वविदेहे 'आवर्ता' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पंचामृत अभिषेक भव्य जहाँ नित करता।
प्रभु पूजा से पूत देश 'लांगलावर्ता'॥ तीर्थंकर...॥8॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अपरपुष्करार्द्ध द्वीप संबंधी पूर्वविदेहे 'लांगलावर्ता' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

बरसायें सुर पुष्प नभ से श्री जिनवर पर।
नगर 'पुष्कला' भव्य श्रीजी विचरें जिस पर॥ तीर्थंकर...॥9॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अपरपुष्करार्द्ध द्वीप संबंधी पूर्वविदेहे 'पुष्कला' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिसका पुण्य अपार उसे मिले प्रभु वाणी।
'पुष्कलवती' महान् जहाँ रहें मुनि ध्यानी॥ तीर्थंकर...॥10॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अपरपुष्करार्द्ध द्वीप संबंधी पूर्वविदेहे 'पुष्कलावती' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. नया।

(अर्द्ध शंभु छंद)

'वत्सा' के तीर्थंकर प्यारे, त्रिभुवन के सब संकटहारे।
हम उनको अर्घ चढ़ाते हैं, रत्नत्रय गुण निधि पाते हैं॥11॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अपरपुष्करार्द्ध द्वीप संबंधी पूर्वविदेहे 'वत्सा' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नगरों में श्रेष्ठ 'सुवत्सा' है, जिसकी धरती जिनवत्सा[1] है।
उनको त्रिभुवन वन्दन करता, भव-भव के दुःख क्रन्दन हरता॥12॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अपरपुष्करार्द्ध द्वीप संबंधी पूर्वविदेहे 'सुवत्सा' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सौधर्म 'महावत्सा' आये, प्रभु का कल्याणक मनवाये।
जिससे इक भव अवतारी हो, निश्चित वरता शिवनारी[2] वो॥13॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अपरपुष्करार्द्ध द्वीप संबंधी पूर्वविदेहे 'महावत्सा' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'वत्सकावती' में परम यती, वर लेते केवलज्ञान मती।
हम उनको अर्घ चढ़ाते हैं, जिन पद में शीश नवाते हैं॥14॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अपरपुष्करार्द्ध द्वीप संबंधी पूर्वविदेहे 'वत्सकावती' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'रम्या' के रम्यक समवशरण, भव्यों को देते नित्य शरण।
त्रैलोक्य वहाँ सम्यक्त्व वरे, हम उसे नमन शत बार करें॥15॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अपरपुष्करार्द्ध द्वीप संबंधी पूर्वविदेहे 'रम्या' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुर देश 'सुरम्या' रमण करें, वे जिन मुनियों के चरण वरें।
सम्यक्त्व सुनिधि सब पाते हैं, जीवन को धन्य बनाते हैं॥16॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अपरपुष्करार्द्ध द्वीप संबंधी पूर्वविदेहे 'सुरम्या' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. भगवान को जन्म देने वाली, 2. मोक्षलक्ष्मी।

'रमणीया' के मुनि योग धरें, आतापन प्रतिमा योग करें।
उन मुनियों को वंदन कर लो, अर्हंतों का अर्चन कर लो॥17॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अपरपुष्करार्द्ध द्वीप संबंधी पूर्वविदेहे 'रमणीया' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'मंगलावती' की जिन प्रतिमा, बतलाती शिवपथ की महिमा।
जो उनका मन से ध्यान करें, वो निश्चय अविचल थान वरें॥18॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अपरपुष्करार्द्ध द्वीप संबंधी पूर्वविदेहे 'मंगलावती' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'पद्मा' के पद्म सदा दमके, प्रभु चरणों में रवि सम चमके।
पग रेणू प्रभुवर की पाकर, मुनिवर बनते गुण रत्नाकर॥19॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अपरपुष्करार्द्ध द्वीप संबंधी अपरविदेहे 'पद्मा' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

यह देश 'सुपद्मा' पुण्य किला, जहँ तीर्थंकर सा पद्म खिला।
सब जय-जय कह नाचें गायें, प्रभु चरणों में झुक-झुक जायें॥20॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अपरपुष्करार्द्ध द्वीप संबंधी अपरविदेहे 'सुपद्मा' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ये नगर महान् 'महापद्मा', धनि धन्य यहाँ की धरती माँ।
ये भूमि मुनि आर्या की माँ, हम गा न सके इसकी महिमा॥21॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अपरपुष्करार्द्ध द्वीप संबंधी अपरविदेहे 'महापद्मा' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जहँ विचरे ध्यानी परम यती, ऐसी नगरी 'पद्मकावती'।
उसमें नित चौथा काल रहे, सुर गण प्रभु की गुणमाल कहें॥22॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अपरपुष्करार्द्ध द्वीप संबंधी अपरविदेहे 'पद्मकावती' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हैं वीतराग सर्वज्ञ प्रभो, 'शंखा' के जिनवर श्रेष्ठ विभो।
ॐकारमयी वाणी जिनकी, सर्वात्म प्रदेशों से खिरती॥23॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अपरपुष्करार्द्ध द्वीप संबंधी अपरविदेहे 'शंखा' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'नलिना' की सुन्दर ललनायें, शुभ स्वर में प्रभु के गुण गायें।
वंदन पूजन नर्तन[1] करती, वे अविनश्वर शिव पथ वरती॥24॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अपरपुष्करार्द्ध द्वीप संबंधी अपरविदेहे 'नलिना' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'कुमुदा' के प्रमुदित संत सदा, तप से भूषित श्रमणी प्रमुदा।
वे अर्हंतों का ध्यान धरें, मुनियों का उर[2] से मान करें॥25॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अपरपुष्करार्द्ध द्वीप संबंधी अपरविदेहे 'कुमुदा' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कहती हैं कवि यति की कविता, 'सरिता' में बहती श्रुत सरिता।
जिसमें भवि अवगाहन करते, निज अंतस् प्रक्षालन करते॥26॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अपरपुष्करार्द्ध द्वीप संबंधी अपरविदेहे 'सरित' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'वप्रा' में तीर्थ विकास करें, क्षायिक सुख का उल्लास भरें।
वैराग्य भाव को प्रगटाते, जिनमत की महिमा दर्शाते॥27॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अपरपुष्करार्द्ध द्वीप संबंधी अपरविदेहे 'वप्रा' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'सुवप्रा' की वापी सुन्दर, जिसमें जिन प्रतिमायें अघहर।
हम उनको अर्घ चढ़ाते हैं, शिवपथ पर कदम बढ़ाते हैं॥28॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अपरपुष्करार्द्ध द्वीप संबंधी अपरविदेहे 'सुवप्रा' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'महावप्रा' में तीर्थेश सदा, करते कर्मों का क्लेश जुदा।
उनकी ऐसी कर लो अर्चा, जिसकी त्रिभुवन में हो चर्चा॥29॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अपरपुष्करार्द्ध द्वीप संबंधी अपरविदेहे 'महावप्रा' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चौंसठ ऋद्धीश गणी[3] सारे 'वप्रकावती' वसुधा धारें।
आराधन उन संयमधर का, साधन बनता संयम पथ का॥30॥

1. नृत्य, 2. हृदय, 3. गणधर।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अपरपुष्करार्द्ध द्वीप संबंधी अपरविदेहे 'वप्रकावती' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'गंधा' में तप की गंध उड़े, कर्मों के बंधन मंद पड़े।
चौपालों[1] पर तप की चर्चा, घर-घर में मुनियों की अर्चा॥31॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अपरपुष्करार्द्ध द्वीप संबंधी अपरविदेहे 'गंधा' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सौभाग्य 'सुगंधा' का न्यारा, वीरों ने घोर सुतप धारा।
वे कर्म श्रृंखला तोड़ रहे, हम जिन सम्मुख कर जोड़ रहे॥32॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अपरपुष्करार्द्ध द्वीप संबंधी अपरविदेहे 'सुगंधा' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जग श्रेष्ठ 'गंधिला' की धरती, जिसमें होती शिवपद भरती।
उसमें सदेह[2] होते विदेह[3], करते वृषभातम[4] से सनेह॥33॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अपरपुष्करार्द्ध द्वीप संबंधी अपरविदेहे 'गंधिला' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सौधर्म जहाँ नित आता है, शुभ समोशरण रचवाता है।
उस 'गंधमालिनी' की बदली, बरसायें धर्म सुधा बदली॥34॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अपरपुष्करार्द्ध द्वीप संबंधी अपरविदेहे 'गंधमालिनी' देश स्थित आर्यखण्डे भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य (गीता छंद)

पावन धरा पर धर्म की वर्षा निरन्तर हो रही।
सत्तर अधिक सौ कर्म भू पर ज्ञान अंकुर बो रही॥
उसमें जघन्तम[5] बीस वा सत्तर अधिक सौ तीर्थकर।
उनका भजन अर्चन मनन त्रैलोक्य को है प्रीतकर॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री द्वयाधिक अर्द्ध द्वीप संबंधी पंचदशकर्मभूमिस्थ शतसप्तति आर्यखण्डेषु भूतवर्तमानभविष्यत्काल संबंधी शतसप्तति तीर्थंकरेभ्यो पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. चबूतरा, 2. शरीर सहित, 3. शरीर रहित, 4. श्रेष्ठ आत्मा, 5. कम से कम।

दोहा : कनक रजतमय कलश से, अर्पण है जलधार।
पुष्पांजलि क्षेपण करें, चरणों में मनहार॥

शांतये शांतिधारा....दिव्य पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

जाप्य मंत्र : ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्रेभ्यो नमः।

जयमाला

दोहा : ढाई द्वीप त्रय लोक में, संयम का आधार।
इक सौ सत्तर कर्म भू, तीर्थंकर दातार॥
उनकी जयमाला पढ़ें, करें नमन त्रय बार।
तीर्थंकर की पाद रज, करे सकल उद्धार॥

(शंभु छन्द)

जय तीर्थभूत जय तीर्थराज, तीर्थंकर तीर्थ प्रणेता हो।
तीर्थेश तीर्थवित[1] तीर्थात्मा, तुम मोक्ष महापथ नेता हो॥
सर्वज्ञ सर्वसुख के दाता, जिन धर्म धीर त्रिभुवन स्वामी।
तव गुण जयमाल बनाता हूँ, स्वीकार करो अंतर्यामी॥1॥

इक जंबूद्वीप धातकी खण्ड, पुष्करवर को आधा लेकर।
ये ढाई द्वीप कहलाते हैं, इसमें होते हैं तीर्थंकर॥
इन ढाई द्वीप में पाँच भरत, ऐरावत पाँच विदेह कहे।
उनमें भी भरतैरावत में, इक-इक जिनवर का तीर्थ रहे॥2॥

जम्बू में एक विदेह कहा, अग्रिम द्वीपों में दो-दो हैं।
बस ढाई द्वीप तक पाँच सुने, तीर्थंकर जिन के शब्दों में॥
इक-इक विदेह की आगम में, बत्तीस नगरियाँ बतलायी।
कुल इक सौ साठ नगरियाँ सब, पाँचों विदेह की कहलायी॥3॥

1. तीर्थ के जानकार।

इनयुत दस भरतैरावत की, कुल इक सौ सत्तर नगरी हैं।
ये धर्म अर्थ वा काम मोक्ष, सब पुरुषार्थों की मगरी हैं॥
इनमें सब भरतैरावत में, चौथे युग तीर्थंकर होते।
उनमें पाँचों कल्याणक में, भवि धर्म मोक्ष अंकुर बोते॥4॥

लेकिन विदेह के नगरों में, षट्काल भ्रमण नहीं होता है।
उनमें इक चौथा काल रहे, वा जिन दर्शन नित होता है॥
उनमें जन्मे कुछ जिनवर के, कल्याण पाँच भी होते हैं।
कुछ दो या त्रय कल्याणकधर, तीर्थंकर जिन भी होते हैं॥5॥

पाँचों विदेह में कम से कम, विंशति तीर्थंकर होते हैं।
पन्द्रह क्षेत्रों में सर्वाधिक, इक सौ सत्तर जिन होते हैं॥
तीर्थेश अजित जिन के युग में, ऐसा सुयोग बन आया था।
इक सौ सत्तर तीर्थेशों का, देवों ने दर्शन पाया था॥6॥

हम यही भावना भाते हैं, सब क्षेत्रों में तीर्थंकर हो।
मिथ्यात्व मिटे त्रय लोकों से, सम्यक्त्व सुनय हर घर-घर हो॥
हम रत्नत्रय गुण पूर्ण करें, ऐसा पावन अवसर आये।
शिवराज हेतु त्रय गुप्ति सधे, 'गुप्तिनंदी' जिन पद पाये॥7॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री द्वयार्ध्य द्वीप संबंधी पंचदशकर्मभूमिस्थ शतसप्तति आर्यखण्डेषु भूतवर्तमानभविष्यतकाल संबंधी शतसप्तति तीर्थंकरेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(गीता छन्द)

जिनभक्त निर्मल भाव से यह 'रत्नत्रय पूजन' करें।
त्रैलोक्य सुख पावें सदा सुर नर उसे वन्दन करें॥
फिर धर क्षमादिक् धर्म को शिवराज वे पा जायेंगे।
त्रय 'गुप्ति' व्रत को धारकर भवदुःख कभी ना पायेंगे॥

इत्याशीर्वादः दिव्य पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

श्री पंचकल्याणक पूजा

(शंभु छन्द)

श्री गर्भ-जन्म-तप-ज्ञान-मोक्ष पाँचों कल्याणक के धारी।
इनके गुण कीर्तन वंदन से बनते अतिशय सुख भंडारी।।
मनहर छवि लख मन कुमुद खिला इनका आह्वानन करते हैं।
इनके सम गुण पाने को हम पुष्पांजलि अर्पण करते हैं।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री चतुर्विंशति तीर्थंकर पंचकल्याणक समूह ! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननम्। अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः-ठः स्थापनम्। अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्।

(अष्टक) तर्ज : हे दीनबन्धु...

जल के घड़ों से नाथ पे त्रयधार हम करें ।
तीर्थेश अर्चना से तीन रोग को हरें ।।
श्री पंचकल्याणक प्रभु का भक्ति से करें ।
हम गान-नृत्य-वंदना से मुक्ति को वरें ।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री चतुर्विंशतितीर्थंकर पंचकल्याणकेभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा।।1।।

त्रैलोक्यनाथ दर्श से क्रंदन भगा दिया।
भवदाह मिटाने उन्हें चंदन चढ़ा दिया।। श्री पंच....

ॐ ह्रीं अर्हं श्री चतुर्विंशतितीर्थंकर पंचकल्याणकेभ्यो चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।।2।।

भर पुँज अक्षतों के चढ़ा मोद मनायें।
अक्षय अनंत गुण निधि को आपसे पायें।। श्री पंच....

ॐ ह्रीं अर्हं श्री चतुर्विंशतितीर्थंकर पंचकल्याणकेभ्यो अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा ।।3।।

बेला गुलाब चंपकादी पुष्प सजायें।
श्री कामजेता नाथ को भक्ति से चढ़ायें।। श्री पंच....

ॐ ह्रीं अर्हं श्री चतुर्विंशतितीर्थंकर पंचकल्याणकेभ्यो पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।।4।।

तीर्थेश धर्मवैद्य सर्व रोग को हरें।
नैवेद्य चढ़ा हम क्षुधादि रोग को हरें।। श्री पंच...

ॐ ह्रीं अर्हं श्री चतुर्विंशतितीर्थंकर पंचकल्याणकेभ्यो नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।5।।

मोहान्ध को हरें प्रभो कैवल्यज्योति से।
निजमोह नाश हेतु पूजें दीपज्योति से।।
श्री पंचकल्याणक प्रभु का भक्ति से करें ।
हम गान-नृत्य-वंदना से मुक्ति को वरें ।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री चतुर्विंशतितीर्थंकर पंचकल्याणकेभ्यो दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।।6।।

ध्यानाग्नि में प्रभु ने आठों कर्म नशायें।
सुरभित मनोज्ञ धूप उन्हें रोज चढ़ायें।। श्री पंच...

ॐ ह्रीं अर्हं श्री चतुर्विंशतितीर्थंकर पंचकल्याणकेभ्यो धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।।7।।

मीठे सरस फलों के श्रेष्ठ थाल चढ़ायें।
शिवराह के पथिक बने यह भाव बनायें।। श्री पंच...

ॐ ह्रीं अर्हं श्री चतुर्विंशतितीर्थंकर पंचकल्याणकेभ्यो फलं निर्वपामीति स्वाहा ।।8।।

कल्याणवान ईश को हम अर्घ चढ़ायें।
कल्याण भाव से सदा ही शीश झुकायें।। श्री पंच...

ॐ ह्रीं अर्हं श्री चतुर्विंशतितीर्थंकर पंचकल्याणकेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।9।।

पंचकल्याणक के अर्घ

दोहा- धन्य मात-पित क्षेत्र वा, गर्भ सुमंगल काल।
जो पूजें नित भाव से, होवे पूर्ण निहाल।।

गर्भकल्याणक (काव्य छंद)

अथ मंडलस्योपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

पितुनाभि महाराज, माता मरुदेवी हैं।
माँ की सेवा हेत, आयी सब देवी हैं।।
दूज बदी आषाढ़, ऋषभ गर्भ में आये।
धन्य अयोध्यानाथ, सुर नर मंगल गायें।।1।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री ऋषभनाथस्य आषाढ़कृष्णाद्वितीयायां गर्भकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जितशत्रु के लाल, विजया माँ धन भागी।
जेठ अमावस श्याम, अवधपुरी[1] तब जागी॥
नाचें गायें देव, अजित गर्भ में आये।
ले पूजन की थाल, सब मिल अर्घ चढ़ायें॥2॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अजितनाथस्य ज्येष्ठकृष्णाऽमावस्यायां गर्भकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पिता जितारि धन्य, धन्य सुसेना माता।
जननी के उर आय, संभव जिन जगत्राता॥
श्रावस्ती के भव्य, गर्भ सुमंगल गायें।
फागुन शुक्ला आठ, बहुविध अर्घ चढ़ायें॥3॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री संभवनाथस्य फाल्गुनशुक्ला अष्टम्यां गर्भकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विजय अनुत्तर छोड़, साकेतापुर आये।
अभिनंदन जिननाथ, मात गरभ में आये॥
गर्भोत्सव से पूर्व, धनपति[2] रत्न गिराये।
शुक्ला छठ वैशाख, हम सब अर्घ चढ़ायें॥4॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अभिनंदननाथस्य वैशाखशुक्लाषष्ठम्यां गर्भकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मात मंगला धन्य, जिनके सुमति सुनंदन।
इन्द्र करें जयकार, करें विनय अभिनंदन॥
श्रावण शुक्ला दोज, मघा ऋक्ष[3] उपकारी।
छाईं खुशियाँ आज, हर्षित हैं नर-नारी॥5॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सुमतिनाथस्य फाल्गुनशुक्ला अष्टम्यां गर्भकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(चौपाई छन्द)

पद्म प्रभु जी गर्भ में आये, मात सुसीमा हर्ष मनाये।
माघ वदी छठ मंगलकारी, जयकारा गूंजे सुखकारी॥6॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पद्मनाथस्य माघकृष्णाषष्ठम्यां गर्भकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. अयोध्या, 2. कुबेर, 3. नक्षत्र।

श्री सुपार्श्व माँ के उर आये, माँ पृथ्वी को धन्य बनाये।
भादो सुदि छठ का दिन आया, हमने मिलकर अर्घ चढ़ाया॥7॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सुपार्श्वनाथस्य भाद्रपदशुक्लाषष्ठम्यां गर्भकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चैत वदी पंचम दिन आया, गर्भ महोत्सव सबने गाया।
चंद्रनाथ का यश हम गायें, अर्घ चढ़ाकर पाप नशायें॥8॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री चन्द्रनाथस्य चैत्रकृष्णापंचम्यां गर्भकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

फाल्गुन कृष्णा नवमी आई, स्वप्न देख माता हर्षाई।
माँ रामा के उर[1] जिन आये, पुष्पदन्त सब के मन भाये॥9॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पुष्पदंतनाथस्य फाल्गुनकृष्णानवम्यां गर्भकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मात सुनंदा जग उपकारी, दृढ़रथ सुत शीतल हितकारी।
चैत वदि अष्टम सुखकारी, गर्भ महोत्सव मंगलकारी॥10॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री शीतलनाथस्य चैत्रकृष्णा अष्टम्यां गर्भकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(नरेन्द्र छंद)

श्रेयनाथ जिन पुष्पोत्तर से, सिंहपुरी में आये थे।
पिता विष्णु माँ वेणू देवी, उनको पा हर्षाये थे॥
जेठ श्याम छठ श्रवण ऋक्ष[2] में, स्वर्ग धरा पर आया था।
प्रभु को अर्घ चढ़ाकर सबने, गर्भ सुमंगल गाया था॥11॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री श्रेयांसनाथस्य ज्येष्ठकृष्णाषष्ठम्यां गर्भकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वासुपूज्य ने महाशुक्र तज, विजया माँ को धन्य किया।
वसुपूज्य पितु ने तब सबको, मंगलमय शुभ दान दिया॥
वदि आषाढ़ षष्ठ शतभिष में, धन कुबेर ने बरसाया।
चम्पापुर में तब देवों ने, गर्भ सुमंगल को गाया॥12॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री वासुपूज्यनाथस्य आषाढ़कृष्णाषष्ठम्यां गर्भकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विमलनाथ सुरगति को तजकर, जय श्यामा माँ उर आये।
कृतवर्मा की कम्पिलपुर में, स्वर्ग गर्भ मंगल गाये॥

1. गर्भ, 2. नक्षत्र।

जेठ वदी दश भाद्रपदोत्तर[1], भव्यों को अति हर्ष हुआ।
प्रभु का गर्भ महोत्सव पाकर, भावों का उत्कर्ष हुआ॥13॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री विमलनाथस्य ज्येष्ठकृष्णादशम्यां गर्भकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पुष्पोत्तर तज प्रभु अनंत ने, सर्वयशा माँ को पाया।
सिंहसेन की साकेता को, सुरपति ने फिर सजवाया॥
कार्तिक वद प्रतिपदा रेवती, गर्भ सुमंगल जिनवर का।
अर्घ चढ़ायें भक्ति रचायें, ध्यान करें जगदीश्वर का॥14॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अनंतनाथस्य कार्तिककृष्णाप्रतिपदायां गर्भकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मात सुव्रता का सुकृत था, धर्मनाथ उर में आये।
रत्नपुरी नृप जिनपालक बन, अन्तस[2] में अति हर्षाये॥
अंतिम स्वर्ग तजा जिनवर ने, सुदि वैशाख सुतेरस को।
प्रभु का गर्भ महोत्सव पूजें, पायें हम निर्मल यश को॥15॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री धर्मनाथस्य वैशाखशुक्लात्रयोदश्यां गर्भकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ऐरावती माँ की कुक्षि[3] में, शांतिनाथ ने शयन किया।
च्युत होकर सर्वार्थसिद्धि से, विश्वसेन घर चयन किया॥
भादों श्याम सप्तमी भरणी, हस्तिनपुर में हर्ष हुआ।
सुरपति गर्भ सुमंगल गाये, त्रिभुवन को आनंद हुआ॥16॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री शांतिनाथस्य भाद्रपदकृष्णासप्तम्यां गर्भकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कुन्थुनाथ ने हस्तिनागपुर, श्रीमति माता को पाया।
तज सर्वार्थसिद्धि का वैभव, सूर्यसेन को हर्षाया॥
श्रावण श्याम दशम कृतिका में, अमरावति भूपर आई।
सुर ललनायें मंगल गाने, जिनवर के आंगन आईं॥17॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री कुन्थुनाथस्य श्रावणकृष्णादशम्यां गर्भकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मात सुमित्रा पिता सुदर्शन, हस्तिनागपुर के राजा।
अरहनाथ अपराजित को तज, बने मात के सुत राजा॥

1. उत्तराभाद्रपद नक्षत्र, 2. मन, 3. कोख।

फाल्गुन श्याम रेवती तीजी, दिक्कन्यायें आईं थी।
माता की सेवा में वे सब, द्रव्य सुमंगल लाईं थी॥18॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अरहनाथस्य फाल्गुनकृष्णातृतीयायां गर्भकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मिथिलापुर में सब देवों ने, आकर मंगल गान किया।
मात प्रभावति कुम्भ पिता का, मनहारी यशगान किया॥
चैत्र सुदी एकम् अश्विन को, उर में आये त्रिपुरारी।
गर्भ सुमंगल मल्लिनाथ का, मना रहे सब नर-नारी॥19॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री मल्लिनाथस्य चैत्रशुक्लाप्रतिपदायां गर्भकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आनत स्वर्ग छोड़ मुनिसुव्रत, माँ पद्मा के उर आये।
अतिशय पुण्य प्रभाव प्रभो का, जग में सब जय-जय गायें॥
श्रवण ऋक्ष श्रावण वदि द्वितीया, राजगृही सुखदायी थी।
सुरपति ने मुनिसुव्रत प्रभु की, गर्भ बधाई गायी थी॥20॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री मुनिसुव्रतनाथस्य श्रावणकृष्णाद्वितीयायां गर्भकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मिथिलापुर में पिता विजय को, धन्य बनाया जिनवर ने।
वदि आसोज दूज अश्विन को, वप्रिल माँ उर आप बसे॥
नमि जिनेश का गर्भ महोत्सव, सबको मंगलकारी है।
अर्घ्य चढ़ायें हम भावों से, जो भव भ्रम तमहारी है॥21॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री नमिनाथस्य आश्विनकृष्णाद्वितीयायां गर्भकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अपराजित को छोड़ नेमि जिन, समुद्रजय घर आये थे।
शौरीपुर में मात शिवा को, सोलह स्वप्न दिखाये थे॥
कार्तिक सुदि छठ उत्तरषाढ़ा, विस्मयकारी[1] काल हुआ।
गर्भ सुमंगल भव्य मनाकर, सब जग मालामाल हुआ॥22॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री नेमिनाथस्य कार्तिकशुक्लाषष्ठम्यां गर्भकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जगजननी वामा माता के, उर में पारस जिन आये।
अश्वसेन घर वाद्य बजाकर, सुर नर सारे हर्षाये॥

1. आश्चर्यकारी।

वदि वैशाख दूज शुभ दिन में, गर्भकल्याणक आया था।
वंदन कीर्तन अर्घ्य चढ़ाकर, सबने पुण्य कमाया था॥23॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पार्श्वनाथस्य वैशाखकृष्णाद्वितीयायां गर्भकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अंतिम तीर्थंकर प्रभुवर का, गर्भोत्सव सुर पाते हैं।
कुण्डलपुर में सर्व भव्यजन, पुण्य बधाई गाते हैं॥
जगमाता त्रिशला के उर में, वर्धमान जिनवर आये।
सिद्धारथ घर वाद्य बजे थे, जिनगुण महिमा हम गायें॥24॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री महावीरनाथस्य आषाढ़शुक्लाषष्ठम्यां गर्भकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य (शंभु छंद)

तीर्थंकर जिन जहँ से आये, जिन माता उर अवतरण करें।
नक्षत्र योग तिथि लग्न करण, जिस वार समय का वरण करें॥
जिन जनक गोत्र कुल जन्मस्थल, गर्भोत्सव पाकर धन्य बने।
सुरपति पूजित जिनमात पिता, सुरबाला[1] से अभिवंद्य बने॥
जिन माता सोलह स्वप्न लखे, शुभ शकुन निरन्तर पाती है।
संकेत पाय आ सुर सेना, माता की भक्ति रचाती है॥
जिनवर के पावन सन्निध से, वह काल पूज्य कहलाया है।
वह काल सुमंगल पाने को, हमने भी अर्घ चढ़ाया है॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री चतुर्विंशति तीर्थंकराणां गर्भकल्याणकेभ्यो पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जन्मकल्याणक के अर्घ

दोहा– दश अतिशय युत जन्म लें, तीर्थंकर जिनराज।
पुष्पाञ्जलि ले पूजता, मिलें बाल जिनराज॥

अथ मंडलस्योपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

(काव्य छंद)

जन्मे आदि जिनेश, सुरपति हर्ष मनायें।
क्षीरोदधि का नीर, लेकर न्हवन करायें॥

1. दिक्कुमारी।

चैतवदि नौ धन्य, सुर–नर मंगल गाते।
अर्घ चढ़ाते आज, पुण्य महाफल पाते॥1॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री चैत्रकृष्णनवम्यां ऋषभनाथस्य जिनेन्द्रस्य जन्मकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अजितनाथ का जन्म–माघ सुदी दशमी को।
देव करें जयकार, पाने पुण्य निधी को॥
आयें हम सब साथ, जन्म सुपर्व मनाने।
अष्ट द्रव्य का थाल, लायें पुण्य कमाने॥2॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री माघशुक्लादशम्यां अजितनाथस्य जन्मकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कार्तिक पूनम धन्य संभव जिनवर आये।
देव–देवियाँ आय, प्रभु का न्हवन करायें॥
शचियुत देवी देव, मिलकर नृत्य रचायें।
भक्तिभाव को धार, सुन्दर अर्घ चढ़ायें॥3॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री कार्तिकशुक्लापूर्णिमायां संभवनाथस्य जन्मकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अभिनंदन का आज, अभिनंदन करते हैं।
बाल रूप को देख, हम वंदन करते हैं॥
वज्रवृषभनाराच, संहनन के तुम धारी।
द्वादश शुक्ला माघ, जग–जन मंगलकारी॥4॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री माघशुक्लाद्वादश्यां अभिनंदननाथस्य जन्मकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ग्यारस शुक्ला चैत, शुभ दिन में प्रभु आये।
पुण्यमयी तव रूप, लख सुर पुण्य कमायें॥
सुमतिनाथ का जन्म, सुमति सर्व को देता।
कर सन्मार्ग प्रकाश, मोह तिमिर हर लेता॥5॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री चैत्रशुक्लाएकादश्यां सुमतिनाथस्य जन्मकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(चौपाई छन्द)

पद्मनाथ ने जन्म लिया है, धनतेरस को धन्य किया है।
सुरपति प्रभु को गोद खिलाये, मेरुगिरी पे न्हवन कराये॥6॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री कार्तिककृष्णात्रयोदश्यां पद्मनाथस्य जन्मकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रभु सुपार्श्व का रूप निराला, इक हजार अठ लक्षण वाला।
जेठ सुदी द्वादश जब आये, जन्म महोत्सव भव्य मनायें॥7॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री ज्येष्ठशुक्लाद्वादश्यां सुपार्श्वनाथस्य जन्मकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चन्द्रपुरी में चन्द्रनाथजी, पूर्ण चन्द्रसम जन्मे प्रभुजी।
पौष कृष्ण ग्यारस थी प्यारी, वाद्य बजायें सुर नर-नारी॥8॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पौषकृष्णाएकादश्यां चन्द्रनाथस्य जन्मकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पुष्पदंत का जन्म हुआ है, घर-घर में जयकार हुआ है।
हम सब जन्म बधाई गायें, मगसिर सुद एकम मन भाये॥9॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री मार्गशीर्षशुक्लाप्रतिपदायां पुष्पदंतनाथस्य जन्मकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शीतल जब भूतल पर आये, मात सुनंदा हर्ष मनाये।
माघ वदि द्वादश सुखदायी, हमने प्रभु की भक्ति रचायी॥10॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री माघकृष्णाद्वादश्यां शीतलनाथस्य जन्मकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(चौबोल छंद)

श्री श्रेयांस का जन्म महोत्सव, सबको मंगलकारी है।
सुरपति न्हवन करे मेरु पर, जिन दर्शन सुखकारी है॥
फाल्गुन वद ग्यारस के शुभ दिन, सुरगण भू-पर आते हैं।
अर्घ्य नाथ को चढ़ा मनोहर, समता सुख पा जाते हैं॥11॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री फाल्गुनकृष्णाएकादश्यां श्रेयांसनाथस्य जन्मकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वासुपूज्य जन्में चम्पापुर, खुशियाँ चहुँ दिश छाय रही।
मनहर प्रभु की मुद्रा लखकर, शचि मन में हर्षाय रही॥
फागुन वद चौदस को सुरगण, भक्ति रचाने आते हैं।
जिनवर की गुण संपत पाने, अर्घ चढ़ा सुख पाते हैं॥12॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री फाल्गुनकृष्णाचतुर्दश्यां वासुपूज्यनाथस्य जन्मकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विमलनाथ का जन्म महोत्सव, सुर-नर इन्द्र रचाते हैं।
अतिशय बाल स्वरूप मनोहर, देख-देख हर्षाते हैं॥
शचिपति नेत्र हजार बनाये, फिर भी तृप्त न हो पाता।
शुक्ला माघ चतुर्थी के दिन, शिशु मुद्रा लख हर्षाता॥13॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री माघशुक्लाचतुर्थ्यां विमलनाथस्य जन्मकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जेठ वदी बारस को सबने, जन्म महोत्सव पाया था।
श्री अनंत की मुद्रा लखकर, भव अनंत विनशाया था॥
इन्द्राणी के भाग्य जगे हैं, शिशु को गोद खिलाती है।
प्रभु मुद्रा अवलोकन कर वो, सम्यक्दर्शन पाती है॥14॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री ज्येष्ठकृष्णाद्वादश्यां अनंतनाथस्य जन्मकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

माघ सुदि तेरस के शुभ दिन, धर्मनाथ का जन्म हुआ।
भूतल में तब खुशियाँ छाईं, रत्ननगर तब धन्य हुआ॥
सुरगण मिलकर धर्मनाथ का, मेरु पर अभिषेक करें।
ऋद्धि-सिद्धि धारी मुनि आदिक, उसे देख गुण रत्न वरें॥15॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री माघशुक्लात्रयोदश्यां धर्मनाथस्य जन्मकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(अवतार छंद)

तिथि चौदस जेठ सुस्याम, त्रिभुवन सुखकारी।
श्री शान्तिनाथ का जन्म, जग मंगलकारी॥
सौधर्म सहित सब देव, भूतल पर आये।
शिशु को सुर गज पर धार, मेरु ले जाये॥16॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री ज्येष्ठकृष्णाचतुर्दश्यां शांतिनाथस्य जन्मकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री हस्तिनागपुर धन्य, प्रभु ने जन्म लिया।
शचि ने कर जिन अभिषेक, जीवन धन्य किया॥
एकम् शुक्ला वैशाख, नगरी खूब सजी।
मैं पूजूँ वह शुभ काल, जब शहनाई बजी॥17॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री वैशाखशुक्लाप्रतिपदायां कुंथुनाथस्य जन्मकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मगसिर सुदि चौदस श्रेष्ठ, जन्में अरह प्रभो।
ऐरावत गज भी श्रेष्ठ, धारे बाल विभो।।
तब साढ़े बारह कोटि, मंगल वाद्य बजे।
हम भक्ति करें नव कोटि, सुन्दर अर्घ सजे।।18।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री मार्गशीर्षशुक्लाचतुर्दश्यां अरहनाथस्य जन्मकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मगसिर एकादश शुक्ल, मल्लि जिनेश्वर ने।
बन जिन तीर्थंकर बाल, मिथिलापुर जन्में।।
शचि दिव्य बलाई लेय, त्रिभुवन स्वामी की।
हम अर्चें थाली लेय, शिवपथ गामी की।।19।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री मार्गशीर्षशुक्लाएकादश्यां मल्लिनाथस्य जन्मकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शुभ बारस वदि वैशाख, जग में धन्य हुई।
पा मुनिसुव्रत अवतार, भव्यन वंद्य हुई।।
सुरपति ले कलश मनोज्ञ, जिन अभिषेक करे।
वह क्षण पूजा के योग्य, ऋषि उल्लेख करें।।20।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री वैशाखकृष्णाद्वादश्यां मुनिसुव्रतनाथस्य जन्मकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दशमी कृष्णा आषाढ़, नमि अवतार हुआ।
सुर अर्चन करें प्रगाढ़, जय-जयकार हुआ।।
शचि जिन बालक को लाय, सुरपति को देती।
मेरू पर न्हवन कराय, भवतम हर लेती।।21।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री आषाढ़कृष्णादशम्यां नमिनाथस्य जन्मकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

छठ श्रावण सुदि जयवान, सुर-नर जय गायें।
आये नेमी भगवान, जग में सुख छाये।।

सुर देवी कर अभिषेक, मंगल नृत्य करें।
हम पूजें वह शुभ लेख, अक्षय सत्य वरें।।22।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री श्रावणशुक्लाषष्ठम्यां नेमिनाथस्य जन्मकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शुभ ग्यारस कृष्णा पौष, पूजें भवि प्राणी।
आये पारस जिनराज, कहती जिनवाणी।।
अभिषेक देख मुनिराज, दृढ़ श्रद्धान करें।
हम मनहर अर्घ चढ़ाय, जिन गुणगान करें।।23।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पौषकृष्णाएकादश्यां पार्श्वनाथस्य जन्मकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुदि चैत सुतेरस धन्य, त्रिशला माता है।
जन्में सन्मति जग वंद्य, त्रिभुवन त्राता हैं।।
जिन माता-पिता का मान, नर सुरपति करते।
कर निज वैभव का दान, जिन गुण निधि वरते।।24।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री चैत्रशुक्लात्रयोदश्यां महावीरनाथस्य जन्मकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य (अवतार छंद)

कुरु वंशज शांति जिनेश, कुंथु अरह भी हैं।
हरि वंशज सुव्रत नेमि, उग्रज पारस हैं।।
श्री वीर नाथ कुल आय, जग में धन्य किया।
इक्ष्वाकु कुल अवशेष, प्रभु ने वरण किया।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री चतुर्विंशति तीर्थंकर जन्मकल्याणकेभ्यो पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तपकल्याणक के अर्घ

दोहा- कर्म श्रृंखला तोड़ने, धरा दिगम्बर रूप।
पूजूँ ले सुमनावली, पाऊँ प्रभु सम रूप।।

अथ मंडलस्योपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

(काव्य छंद)

नवमी कृष्णा चैत प्रभु ने तप को धारा।
आदि जिनेश महान् छोड़ दिया संसारा।।

लौकांतिक सुर आय, तप अनुमोदन करते।
हम भी अर्घ चढ़ाय, कर्म विमोचन करते॥1॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री चैत्रकृष्णनवम्यां ऋषभनाथस्य दीक्षाकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वेष दिगम्बर धार, जीत लिया कर्मों को।
अजितनाथ मुनिराज, धारा दश धर्मों को॥
माघ सुदी नव धन्य, जिसमें दीक्षा धारी।
अर्घ समर्पित नाथ, तुम हो मोह जितारी[1]॥2॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री माघशुक्लानवम्यां अजितनाथस्य दीक्षाकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

संभवनाथ जिनेश, भव-भव पीड़ा हरने।
धरा दिगम्बर वेष, आत्म सुखों को वरने॥
तव मुद्रा को देख, सुर-नर शीश झुकाते।
मगसिर पूनम धन्य, हम सब अर्घ चढ़ाते॥3॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री मार्गशीर्षशुक्लापूर्णिमायां संभवनाथस्य दीक्षाकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अभिनंदन जगवंद्य, इन्द्र सभी मिल ध्यावें।
द्वादश शुक्ला माघ, जिनवर मुनिपद पावें॥
करके भाव विशुद्ध, सर्व ऋद्धियाँ पाई।
अर्घ चढ़ाते आज, जिन मुद्रा मन भाई॥4॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री माघशुक्लाद्वादश्यां अभिनंदननाथस्य दीक्षाकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जातिस्मरण विचार सुमति विरक्त हुए थे।
शिवपथगामी जीव, तप अनुरक्त हुए थे॥
नवमी सुदि वैशाख, जिनवर ने तप धारा।
ले पूजन की थाल, भव्य करें जयकारा॥5॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री वैशाखशुक्लानवम्यां सुमतिनाथस्य दीक्षाकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(चौपाई छंद)

प्रभु को जातिस्मरण हुआ था, उससे ही वैराग्य हुआ था।
पद्मनाथ ने तप अपनाया, धनतेरस को धन्य बनाया॥6॥

1. जीतने वाले।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री कार्तिककृष्णात्रयोदश्यां पद्मनाथस्य दीक्षाकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ऋतुवर्तन[1] लख मोह नशाया, प्रभुवर ने वैराग्य जगाया।
ज्येष्ठ शुक्ल द्वादश मन भाये, श्री सुपार्श्व जिन को हम ध्यायें॥7॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री ज्येष्ठशुक्लाद्वादश्यां सुपार्श्वनाथस्य दीक्षाकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दर्पण देख विरक्त हुए थे, चन्द्रनाथ सन्यस्त हुए थे।
पौष वदी एकादश प्यारी, अर्घ चढ़ावें सब नर-नारी॥8॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पौषकृष्णाएकादश्यां चंद्रनाथस्य दीक्षाकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उल्कापात[2] हुआ धरती पर, पुष्पदंत बन गये मुनीश्वर।
मगसिर शुक्ला एकम आये, अर्घ चढ़ा हम पुण्य कमायें॥9॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री मार्गशीर्षशुक्लाप्रतिपदायां पुष्पदंतनाथस्य दीक्षाकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शीतल ने मुनिव्रत को धारा, मोक्ष मार्ग का किया प्रचारा।
माघ कृष्ण द्वादश जब आये, हम सब दीक्षा पर्व मनायें॥10॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री माघकृष्णाद्वादश्यां शीतलनाथस्य दीक्षाकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(नरेन्द्र छंद)

ऋतु बसंत की नश्वरता लख, प्रभु के मन वैराग्य जगा।
फाल्गुन कृष्णा एकादश को, भौतिक सुख का योग भगा॥
लौकांतिक देवों ने आकर, संयम का अनुमोद किया।
श्री श्रेयांस बने तप धारी, मुनिपद का आमोद लिया॥11॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री फाल्गुनकृष्णाएकादश्यां श्रेयांसनाथस्य दीक्षाकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तीन लोक के पूज्य पदों को, वासुपूज्य मन में धारें।
जाति स्मृति पा तीर्थंकर जिन, मोह शत्रु को संहारें॥
पुष्पाभा शिविका में चढ़कर, बाग मनोहर आये थे।
फाल्गुन श्याम चतुर्दश पावन, हम जिन भक्ति रचायेंगे॥12॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री फाल्गुनकृष्णाचतुर्दश्यां वासुपूज्यनाथस्य दीक्षाकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. परिवर्तन, 2. तारा टूटना।

मेघ[1] नाश का दृश्य देखकर, विमलनाथ मन अकुलाये।
द्वादश अनुप्रेक्षायें[2] भाकर, भेदज्ञान को प्रगटायें॥
भूषण वसन विषय विष तजकर, नग्न दिगम्बर रूप धरा।
माघ शुक्ल की चौथ प्रभु ने, सर्व ऋद्धि का तेज वरा॥13॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री माघशुक्लाचतुर्थ्यां विमलनाथस्य दीक्षाकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रभु अनंत ने भव अनंत की, पीड़ाओं को जान लिया।
उल्कापात देखने भर से, निज आतम का भान किया॥
जेठ वदि बारस को प्रभु ने, मोह श्रृंखलायें तोड़ी।
इक हजार राजाओं ने भी, तुम संग निज कड़ियाँ जोड़ी॥14॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री ज्येष्ठकृष्णाद्वादश्यां अनंतनाथस्य दीक्षाकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

धर्मनाथ ने दश धर्मों से, आत्मधर्म का वरण किया।
माघ सुदी तेरस को प्रभु ने, मुनिमुद्रा का वरण किया॥
सम्यक् तप आराधन करना, जिन मुद्रा सिखलाती है।
ऐसे मुनि की उत्तम अर्चा, अष्ट कर्म विनशाती है॥15॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री माघशुक्लात्रयोदश्यां धर्मनाथस्य दीक्षाकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(शंभु छंद)

श्री शांतिनाथ को द्वय पद से, जब शांति नहीं मिल पाई थी।
वदि ज्येष्ठ चतुर्दश को प्रभु ने, निज आत्म भावना भाई थी॥
वे नमः सिद्ध उच्चारण कर, केशों का लोचन करते हैं।
ऐसे प्रभुवर को अर्घ चढ़ा, हम कर्म विमोचन करते हैं॥16॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री ज्येष्ठकृष्णाचतुर्दश्यां शांतिनाथस्य दीक्षाकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भौतिक सुख ही दुख का कारण, यह कुंथुनाथ ने जान लिया।
वैशाख शुक्ल एकम् प्रभु ने, मुनिमुद्रा धर कल्याण किया॥
मुनि दीक्षा धारण करते ही, चौंसठ ऋद्धि जिन प्राप्त हुई।
इन वीतराग हितदेशी की, महिमा जग में फिर व्याप्त हुई॥17॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री वैशाखशुक्लाप्रतिपदायां कुंथुनाथस्य दीक्षाकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. बादल, 2. भावनाएँ।

बादल की क्षण भंगुरता लख, अरनाथ जगत सुख छोड़ चले।
मगसिर शुक्ला दशमी को वे, भार्या सुत से मुख मोड़ चले॥
इन्द्राणी स्वस्तिक चौक बना, जिन स्वामी को बैठाती है।
नृप इक सहस्र की दीक्षा लख[1], वह दीक्षा भाव बनाती है॥18॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री मार्गशीर्षशुक्लादशम्यां अरहनाथस्य दीक्षाकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विद्युत नश्वर लख मल्लिनाथ, जग माया तज सन्यस्त हुए।
झट ऋद्धि सिद्धियाँ भृत्य हुई, जग के सब संकट अस्त हुए॥
जिन केश रत्न मंजूषा[2] धर, सुरपति क्षीरोदधि में छोड़े।
मगसिर शुक्ला ग्यारस पावन, हम निज मन विषयों से मोड़ें॥19॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री मार्गशीर्षशुक्लाएकादश्यां मल्लिनाथस्य दीक्षाकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जातिस्मृति मुनिसुव्रत जिन को, वैराग्य जगाने आयी थी।
लौकांतिक सुर की टोली तब, अनुमोदन करने आयी थी॥
वैशाख कृष्ण दशमी का दिन, सौधर्म भूल ना पायेंगे।
मुनिव्रत विधि में सहभागी बन, अविनश्वर शिव सुख पायेंगे॥20॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री वैशाखकृष्णादशम्यां मुनिसुव्रतनाथस्य दीक्षाकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नमिजिन को जाति स्मरण हुआ, प्रभु जग सुख तज मुनिव्रत पाया।
आषाढ़ वदी दश देवों ने, त्रिभुवन में जय-जय गुँजाया॥
सुर-नर खेचर गणधर मुनिवर, तप मंगल पर्व मनाते हैं।
हम भी जिनवर को अर्घ्य चढ़ा, जिन गुण से प्रीत बढ़ाते हैं॥21॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री आषाढ़कृष्णादशम्यां नमिनाथस्य दीक्षाकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पशु बंधन क्रंदन को लखकर, वैराग्य जगा जिनके मन में।
राजुल प्यारी दुनियादारी, सब छोड़ गये नेमी वन में॥
श्रावण शुक्ला छठ मंगल दिन, गिरनारी त्रिपुरारी आये।
जो पूजे इस मंगल दिन को, वो क्रम से शिवनारी पाये॥22॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री श्रावणशुक्लाषष्ठम्यां नेमिनाथस्य दीक्षाकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. देखकर, 2. पेटी।

जाति स्मृति से पारस स्वामी, मुनि पद धारें अन्तर्यामी।
शुभ पौषवदि ग्यारस के दिन, तप मंगल पायें शिवगामी॥
नृप तीन शतक बन जिन अनुचर, सम्यक् संयम अपनाते हैं।
तप मंगल भूषित पारस को, हम अर्घ्य विशाल चढ़ाते हैं॥23॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पौषकृष्णाएकादश्यां पार्श्वनाथस्य दीक्षाकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भव पूरब का कुछ ज्ञान हुआ, जिससे प्रभु को निज भान हुआ।
मगसिर दशमी श्यामा के दिन, सन्मति को संयम लाभ हुआ॥
चन्द्राभा शिविका में प्रभु को, सौधर्म नाथ[1] को वन लाया।
सुरनर किन्नर ने अर्घ्य चढ़ा, श्री वीर प्रभु का गुण गाया॥24॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री मार्गशीर्षकृष्णादशम्यां महावीरनाथस्य दीक्षाकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य (शंभु छंद)

जिन करें पंच मुष्ठी लोचन, सुरपति क्षीरोदधि ले जाये।
चौबिस जिन के आहार समय, सुर अचरज पाँचों करवाये॥
आदीश्वर से सन्मति जिन का, हम तपकल्याण मनाते हैं।
इनमें जो पाँचों बालयती, उनको पुनि अर्घ चढ़ाते हैं॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री चतुर्विंशति तीर्थंकर दीक्षाकल्याणकेभ्यो पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ज्ञानकल्याणक के अर्घ

दोहा– चार घातिया नाशकर, बने नाथ अरिहंत।
पुष्प लिए उनको भजें, करें कर्म का अंत॥

अथ मंडलस्योपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

(काव्य छंद)

पुरिमताल उद्यान, फागुन ग्यारस श्यामा।
समोशरण सुविशाल, बना नयन अभिरामा॥
तप कर वर्ष हजार, केवल ज्योति जगाई।
आदिनाथ भगवान, पूजें हम शिवराई॥1॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री फाल्गुनकृष्णाएकादश्यां ऋषभनाथस्य केवलज्ञानकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. श्री महावीर स्वामी।

चार घातिया नाश, तीर्थंकर पद धारा।
ग्यारस शुक्ला पौष, ओम नाद उच्चारा॥
नाना भाषा रूप, स्याद्वाद मय वाणी।
अजितनाथ भगवान, करें पाप की हानी॥2॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पौषशुक्लाएकादश्यां अजितनाथस्य केवलज्ञानकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कार्तिक श्यामा चौथ, मगसिर ऋक्ष मनोहर।
करके कर्म विनाश, संभव बने जिनेश्वर॥
समोशरण के बीच, गंधकुटी में राजे।
चँवर मनोहर लेय, चौंसठ यक्ष विराजे॥3॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री कार्तिककृष्णाचतुर्थ्यां संभवनाथस्य केवलज्ञानकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चौदस शुक्ला पौष, सर्वज्ञेय को जाना।
इसको केवलज्ञान, हम सबने है माना॥
पुण्य उदय से जीव, समोशरण में आते।
अभिनंदन जिनराज, मोक्षमार्ग बतलाते॥4॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पौषशुक्लाचतुर्दश्यां अभिनंदननाथस्य केवलज्ञानकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुमति घात चउकर्म, बने सर्व के ज्ञाता।
धनद इन्द्र अनुसार, समोशरण रचवाता॥
दृढ़ श्रद्धानी जीव, धर्म सभा में आते।
ग्यारस शुक्ला चैत, उत्तम अर्घ चढ़ाते॥5॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री चैत्रशुक्लाएकादश्यां सुमतिनाथस्य केवलज्ञानकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(चौपाई छंद)

चार घातिया कर्म विनाशे, तत्क्षण केवलज्ञान प्रकाशे।
हेम पद्म पर पद्म विराजे, चैत पूर्णिमा प्रभु से साजे॥6॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री चैत्रशुक्लापूर्णिमायां पद्मनाथस्य केवलज्ञानकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

फागुन कृष्णा षष्ठम आये, श्री सुपार्श्व सर्वज्ञ कहाये।
प्रभु की धर्म सभा मनहारी, आये अनगिन सुर नर नारी॥7॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री फाल्गुनकृष्णाषष्ठम्यां सुपार्श्वनाथस्य केवलज्ञानकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चन्द्रनाथ बन केवलज्ञानी, भव्यों को देते श्रुतवाणी।
फागुन श्याम सप्तमी प्यारी, दिव्यध्वनि खिरती है न्यारी॥8॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री फाल्गुनकृष्णासप्तम्यां चंद्रनाथस्य केवलज्ञानकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कार्तिक शुक्ला दोज लुभाये, पुष्पदंत अर्हत् पद पायें।
समोशरण जिनका मनहारी, हम सब आये शरण तिहारी॥9॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री कार्तिकशुक्लाद्वितीयायां पुष्पदंतनाथस्य केवलज्ञानकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शीतल जिन शीतलता धारें, दिव्य ज्योति जग में विस्तारें।
पौष वदि चौदस सुखदायी, हमने प्रभु की महिमा गायी॥10॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पौषकृष्णाचतुर्दश्यां शीतलनाथस्य केवलज्ञानकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(नरेन्द्र छंद)

प्रभु श्रेयांस श्रेय के दाता, श्रेष्ठ मार्ग बतलाते हैं।
माघ वदी मावस को जिनवर, मोक्षमार्ग दर्शाते हैं॥
सप्त धातु से रहित जिनेश्वर, परमौदारिक तन धारी।
अर्घ चढ़ाकर ज्ञान महोत्सव, मना रहे सुर नरनारी॥11॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री माघकृष्णाऽमावस्यायां श्रेयांसनाथस्य केवलज्ञानकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

क्षपक श्रेणी आरोहण करके, घातिकर्म का दहन किया।
क्षायिक नव लब्धिधर प्रभु को, तीन लोक ने नमन किया॥

माघ सुदी द्वितीया की बेला, सुरपति धर्मसभा रचता।
वासुपूज्य का ज्ञान पूजकर, कर्म कालिमा से बचता॥12॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री माघशुक्लाद्वितीयायां वासुपूज्यनाथस्य केवलज्ञानकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विमलनाथ ने शुक्ल ध्यान से, कर्म मलों का नाश किया।
माघ शुक्ल षष्ठी को जिनवर, केवलज्ञान विकास किया॥
समोशरण के मानथंभ से, प्रभु ने जग का मान हरा।
जिसने पाई शरण आपकी, उसने सम्यक् ज्ञान वरा॥13॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री माघशुक्लाषष्ठम्यां विमलनाथस्य केवलज्ञानकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कोटि-कटि जन्मों के संचित, पापकर्म भटकाते हैं।
ज्ञान साधना करने से ही, मोहकर्म नश जाते हैं॥
चैत श्याम मावस को जिनवर, दिव्य देशना देते हैं।
प्रभु अनंत शरणागत जन के, अघ अनंत हर लेते हैं॥14॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री चैत्रकृष्णाऽमावस्यायां अनंतनाथस्य केवलज्ञानकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

धर्मनाथ ने धर्मचक्र से, कर्मचक्र को चूर किया।
पौष शुक्ल पूनम को प्रभु ने, आनंदामृत लाभ लिया॥
धर्म चक्रधारी यक्षों से, शोभित प्रभु की धर्म सभा।
अर्घ चढ़ायें भक्त विनय से, पा जायें तव ज्ञानप्रभा॥15॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पौषशुक्लापूर्णिमायां धर्मनाथस्य केवलज्ञानकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(शंभु छंद)

श्री शांतिनाथ अघ क्लांति हरें, कैवल्य ज्योति के भण्डारी।
सुदि पौष दशम अपराह्न समय, जिन बने वीतभय त्रिपुरारी॥
धनपति ने धर्मसभा रचकर, पुनि-पुनि जयघोष लगाया है।
प्रभु पद नीचे रच स्वर्ण कमल, अतिशायी पुण्य कमाया है॥16॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पौषशुक्लादशम्यां शांतिनाथस्य केवलज्ञानकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुदि तीज चैत्र कुन्थु जिन ने, चउ घाति कर्म का हनन किया।
भू से ऊपर धनु पाँच सहस, सुर समवशरण का सृजन किया॥
सर्वाण्ह यक्ष ले धर्म चक्र, तीर्थंकर यश गाथा गाये।
हम जिन गुण धर्मसभा को ध्या, शुभ अर्घ चढ़ा तव गुण पाये॥17॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री चैत्रशुक्लातृतीयायां कुंथुनाथस्य केवलज्ञानकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिनने ले लौकिक चक्ररत्न, षट्खण्ड किये निज के वश में।
ले धर्मचक्र हर कर्मचक्र, कर बैठे मोह असुर वश में॥
कार्तिक शुक्ला बारस के दिन, अर जिन ने निज गुणसार लहा।
धनपति कृत धर्मसभा लखकर, सुरपति करता सत्कार महा॥18॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री कार्तिकशुक्लाद्वादश्यां अरहनाथस्य केवलज्ञानकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मल्ली जिनवर नश मोह मल्ल, निर्मल गुणमणि से युक्त हुए।
वदि दूज पौष गोधूलि समय, प्रभु घाति कर्म से मुक्त हुए॥
सुर-नर निज वैभव कोष लुटा, पुलकित होकर करते अर्चा।
हम भी वह जिनगुण पूज रहे, जिसकी त्रिभुवन में है चर्चा॥19॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पौषकृष्णाद्वितीयायां मल्लिनाथस्य केवलज्ञानकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मुनिसुव्रत मुनिव्रत पूर्ण किये, निज केवलज्ञान जगा बैठे।
नवमी श्यामा वैशाख श्रवण, चउ कर्मन् दैत्य भगा बैठे॥
जिनवर की धर्मसभा थल से, फैला सुभिक्ष सौ योजन तक।
आरोग्य धर्म धन-धान्य बढ़े, ज्ञानामृत बरसा घर-घर तक॥20॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री वैशाखकृष्णानवम्यां मुनिसुव्रतनाथस्य केवलज्ञानकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नमि जिन निज कर्म निशा नाशे, फिर केवल रवि आलोक हुआ।
मगसिर शुक्ला ग्यारस संध्या, सारा त्रिभुवन गत शोक हुआ॥
जिनवर ने अपनी वाणी से, सम्यक् शिवपथ उद्योत किया।
हमने भी मंगल भक्ति रचा, जिन गुण से मन उत्प्रोत किया॥21॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री मार्गशीर्षशुक्लाएकादश्यां नमिनाथस्य केवलज्ञानकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नेमीश्वर पहले मोह नाश, फिर निज त्रय घाति कर्म नशे।
गुण-द्रव्य और सब पर्यायें, प्रभु केवल दर्पण में विलसे[1]॥
गिरनारी पर रच धर्मसभा, धनपति ने सौख्य कमाया है।
हमने जिनगुण निधियाँ पाने, मनभावन अर्घ बनाया है॥22॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री आश्विनशुक्लाप्रतिपदायां नेमीनाथस्य केवलज्ञानकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री पार्श्वनाथ ने दृढ़ता से, निज आतम ध्यान लगाया था।
उस समय कमठ शठ ने आकर, दारुढ़ उपसर्ग रचाया था॥
अहिपति पद्मावति ने आकर, प्रभु का उपसर्ग मिटाया था।
वदि चैत चतुर्थी जिनवर ने, निज केवलज्ञान जगाया था॥23॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री चैत्रकृष्णाचतुर्थ्यां पार्श्वनाथस्य केवलज्ञानकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ऋजुकूला सरिता के तट पर, सन्मति ने चौथा ध्यान धरा।
वैशाख शुक्ल दशमी संध्या, जिन अक्षय क्षायिक ज्ञान वरा॥
सुरपति ने समोशरण रचवा, ज्ञानोत्सव जग में करवाया।
हम अर्घ चढ़ा वह दिन पूजें, निश्चय शुभ ज्ञान उदय आया॥24॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री वैशाखशुक्लादशम्यां महावीरनाथस्य केवलज्ञानकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य (शंभु छंद)

सर्वज्ञों के उपदेश गमन, भव्यों के सुकृत[2] से होते।
तब केवल गुण के दश अतिशय, चौदह सुरकृत अतिशय होते॥

1. स्पष्ट दिखे, 2. पुण्य।

उपसर्ग न हो दुर्भिक्ष हरे, प्रभु वैर अनादि मिटाते हैं।
त्रिभुवनपति अक्षय दानी को, हम अर्घ मनोज्ञ चढ़ाते हैं॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री चतुर्विंशति तीर्थंकर केवलज्ञानकल्याणकेभ्यो पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मोक्षकल्याणक के अर्घ

दोहा– आठों कर्म नशे विभो, बनें सिद्ध भगवान।
कुसुमांजलि अर्पण करूँ, बन जाऊँ भगवान॥

अथ मंडलस्योपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

(काव्य छंद)

चौदस माघ सुश्याम, पूर्व समय जिनवर ने।
शेष कर्म का नाश, किया ऋषभ जिनवर ने॥
दस हजार मुनिराज, संग अष्टापद आये।
आदिनाथ के साथ, मोक्षपुरी को जायें॥1॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री माघकृष्णाचतुर्दश्यां ऋषभनाथस्य मोक्षकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पंचम शुक्ला चैत, पौर्वाह्निक मनहारी।
मुनि हजार के साथ, अजित बने अघहारी॥
शेष कर्म को नाश, गिरि सम्मेदशिखर से।
लाडू का शुभ थाल, लाये भवि निज घर से॥2॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री चैत्रशुक्लापंचम्यां अजितनाथस्य मोक्षकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

करके कर्म निरोध, आत्म विशोधन कीना।
मुनि हजार के साथ, सिद्धरूप वर लीना॥
चैत्र सुदी छठ धन्य, संभव मोक्ष पधारें।
मोदक अर्घ चढ़ाय, हम प्रभु रूप निहारें॥3॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री चैत्रशुक्लाषष्ठम्यां संभवनाथस्य मोक्षकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तिथि शुक्ला वैशाख, छठ का दिन जब आया।
मुनि हजार के साथ, अविनश्वर सुख पाया॥
अभिनंदन जिनराज, जग के पाप निवारो।
भक्त खड़े नत शीश, उनको आप उबारो॥4॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री वैशाखशुक्लाषष्ठम्यां अभिनंदननाथस्य मोक्षकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ग्यारस शुक्ला चैत, योग निरोध किया है।
मुनि हजार के साथ, शिवपथ शोध लिया है॥
सुमति भक्त अनिवार्य, शिव रमणी पायेंगे।
इस कारण हम आज, प्रभुवर को ध्यायेंगे॥5॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री चैत्रशुक्लाएकादश्यां सुमतिनाथस्य मोक्षकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(चौपाई छन्द)

फाल्गुन श्याम चौथ मन भाये, पद्मनाथ शिवपुर को जायें।
अक्षय पद को पाने वाले, तीन भुवन के हो रखवाले॥6॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री फाल्गुनकृष्णाचतुर्थ्यां पद्मनाथस्य मोक्षकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

फाल्गुन कृष्णा सात विशाखा, जिनवर ने शिवफल को चाखा।
नाथ सुपारस कर्म नशायें, हम सब उनकी भक्ति रचायें॥7॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री फाल्गुनकृष्णासप्तम्यां सुपार्श्वनाथस्य मोक्षकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इक हजार ऋषियों संग आये, गिरि सम्मेद शिखर को जायें।
चंद्र बने फिर त्रिभुवनरायी, फागुन शुक्ल सात मन भायी॥8॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री फाल्गुनशुक्लासप्तम्यां चंद्रनाथस्य मोक्षकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भादव शुक्ला अष्टम् आई, पुष्पदंत ने शिव वधु पाई।
हमने उनको अर्घ चढ़ाया, गिरि सम्मेद शिखर को ध्याया॥9॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री भाद्रपदशुक्लाऽष्टम्यां पुष्पदंतनाथस्य मोक्षकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अश्विन शुक्ला अष्टम आये, शीतल जिन वसु कर्म नशायें।
अष्ट मूलगुण के तुमधारी, भविजन आये शरण तुम्हारी॥10॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री आश्विनशुक्लाऽष्टम्यां शीतलनाथस्य मोक्षकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(चौबोल छन्द)

अंतिम शुक्ल ध्यान को धारा, शेष अघाती कर्म नशे।
शिवथल गामी श्री श्रेयांस जिन, मोक्षपुरी में जाय बसे॥
श्रावण पूनम को हर प्राणी, मोक्ष सुपर्व मनाते हैं।
मोदक[1] अर्घ चढ़ाने प्रभु को, सम्मेदाचल जाते हैं॥11॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री श्रावणशुक्लापूर्णिमायां श्रेयांसनाथस्य मोक्षकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

द्रव्य-भाव-नोकर्म नशाकर, वासुपूज्य ने मोक्ष लहा।
अग्नि कुमार विनय से आकर, नख केशों को पूज रहा॥
चम्पापुर निर्वाण भूमि में, सुरपति मोदक ले आये।
भादो शुक्ला चौदस के दिन, मोक्ष महोत्सव करवाये॥12॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री भाद्रपदशुक्लाचतुर्दश्यां वासुपूज्यनाथस्य मोक्षकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्म मलों के पूर्णनाश हित, विमलनाथ ने ध्यान धरा।
वदि आषाढ़ अष्टमी के दिन, प्रभु ने शिवपुर धाम वरा॥
अष्ट मूलगुण धारी प्रभु को, उत्तम अर्घ चढ़ाते हैं।
मोक्ष महा मंगल फल पाने, प्रभु चरणों में आते हैं॥13॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री आषाढ़कृष्णाऽष्टम्यां विमलनाथस्य मोक्षकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दुःख अनंत को नाश नाथ ने, सुख अनंत को प्राप्त किया।
श्री अनंत ने गुण अनंत को, आत्म भुवन में व्याप्त किया॥
हम लाडू व अर्घ सजाकर, श्री जिन के गुण गाते हैं।
चैत्र कृष्ण मावस के दिन हम, मोक्ष सुपर्व मनाते हैं॥14॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री चैत्रकृष्णाऽमावस्यायां अनंतनाथस्य मोक्षकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शेष कर्म को नाश प्रभु ने, मोक्ष महल में वास किया।
धर्मनाथ ने आत्मधर्म से, आत्मधर्म में वास किया॥
आत्म सार के इच्छुक भविजन, लड्डू श्रेष्ठ चढ़ाते हैं।
शुक्ला जैठ चतुर्थी को हम, प्रभु गुण गाथा गाते हैं॥15॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री ज्येष्ठशुक्लाचतुर्थ्यां धर्मनाथस्य मोक्षकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. निर्वाण लाडू।

(शंभु छंद)

श्री शांति अघाति कर्म नशा, सम्मेदाचल से सिद्ध बने।
नौ सौ मुनिवर भी उस दिन ही, वसुकर्म नाश श्री सिद्ध बने॥
शुभ ज्येष्ठ श्याम चौदस तिथि को, जिनवर ने जग को त्याग दिया।
हमने मोदक के थाल चढ़ा, उनके गुण में अनुराग किया॥16॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री ज्येष्ठकृष्णाचतुर्दश्यां शांतिनाथस्य मोक्षकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कुंथु जिन सह मुनि इक हजार, अविचल सुख का आनंद लिया।
वैशाख शुक्ल एकम के दिन, शाश्वत निज परमानंद पिया॥
सम्मेद शिखर मुक्ति स्थल में, सौधर्म चरण रचना करते।
हम कूट ज्ञानधर जाकर के, लाडू ले प्रभु अर्चा करते॥17॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री वैशाखशुक्लाप्रतिपदायां कुंथुनाथस्य मोक्षकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वदि चैत अमावस प्रत्यूषा[1], अर जिन वसु कर्म रिपू नशते।
मुनि इक हजार सह निज तन तज, तीर्थंकर सिद्धालय बसते॥
सौधर्म हाथ ले वज्रदण्ड, प्रभु चरण पुनीत[2] रचाते हैं।
त्रिभुवन के सुरनर लाडु ले, सब मोक्ष सुमंगल गाते हैं॥18॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री चैत्रकृष्णाऽमावस्यायां अरहनाथस्य मोक्षकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

फाल्गुन कृष्णा पंचम के दिन, मल्लीश्वर योग निरोध किया।
संग पाँच शतक मुनिराजों ने, वसु कर्मों का अवरोध किया॥
प्रभुवर के शिवपुर जाते ही, देवों ने जय-जयकार किया।
मोदक युत अर्घ चढ़ाकर के, हमने शिवसुख उपहार लिया॥19॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री फाल्गुनशुक्लापंचम्यां मल्लिनाथस्य मोक्षकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मुनिसुव्रत ने सम्मेद सिखर, निज शेष कर्म को नाश किया।
फाल्गुन कृष्णा बारस प्रदोष, शाश्वत शिवपुर में वास किया॥
अग्नि कुमार सुर ने आकर, नख केशों का संस्कार किया।
शचि सुर-नर ने प्रभु भक्ति रचा, जिनवर का जय-जयकार किया॥20॥

1. ब्रह्ममुहूर्त, 2. पवित्र।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री फाल्गुनकृष्णाद्वादश्यां मुनिसुव्रतनाथस्य मोक्षकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नमि ने वसु कर्म नशाने को, अंतिम अघहारी ध्यान किया।
ह्रस्वाक्षर पंच नाद घटि में, अविचल शिवनगर प्रयाण किया॥
जिनवर संग एक हजार श्रमण, उनने कर्मों का क्लेश हरा।
चौदस कृष्णा वैशाख दिवस, हमने गुणगान विशेष करा॥21॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री वैशाखकृष्णाचतुर्दश्यां नमिनाथस्य मोक्षकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आषाढ़ शुक्ल सप्तम् प्रदोष, नेमी जिन कर्म प्रदोष हने।
संग पाँच शतक छत्तीस मुनि, श्रम कर प्रभु सह निर्दोष बने॥
सुर सेना ने गिरनार शिखर, प्रभु का शिव पर्व मनाया था।
लाडू ले मनहर अर्घ चढ़ा, हर घर में दीप जलाया था॥22॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री आषाढ़शुक्लासप्तम्यां नेमिनाथस्य मोक्षकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सर्वोच्च ध्यान धर पारस ने, सम्पूर्ण कर्म का नाश किया।
श्रावण सुदि सात प्रदोष काल, लोकाग्र क्षेत्र में वास किया॥
जिनवर सह छत्तिस श्रमणों ने, परमौदारिक तन छोड़ दिया।
हमने मोदक मय अर्घ चढ़ा, दुनिया से निज मन मोड़ लिया॥23॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री श्रावणशुक्लासप्तम्यां पार्श्वनाथस्य मोक्षकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कार्तिक वदि मावस प्रत्यूषा, सन्मति जिन ध्यान कृपाण धरें।
पावापुरी में वसु कर्म नशा, श्री वर्द्धमान शिव थान वरें॥
तब गणधर सुर नर नारी ने, मोक्षोत्सव पर्व मनाया था।
दीपावली घर-घर में करके, शिव मोदक[1] थाल चढ़ाया था॥24॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री कार्तिककृष्णाऽमावस्यायां महावीरनाथस्य मोक्षकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य (शंभु छंद)

आदी चौदह दिन पूर्व तजें, उपदेश गमन वा धर्म सभा।
सन्मति तेरह दिन शेष सभी, इक माह पूर्व तज तीर्थ प्रभा॥
ऋषभेश्वर नेमी वासुपूज्य, पर्यंकासन से कर्म नशे।
अवशेष सभी तीर्थंकर जिन, कायोत्सर्गासन मोक्ष बसे॥

1. निर्वाण लाडू।

उपसर्ग सुपारस पारस वा, अतिवीर तीर्थंकर पर आया।
तीर्थंकर कष्टद काल वही, हुंडावसर्पिणी कहलाया॥
जो तीर्थंकर जिस काल क्षेत्र, अक्षय शिव सदन रमा पायें।
हम लाडू संग पूर्णार्घ चढ़ा, जिन सम अविनश्वर सुख पायें॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री चतुर्विंशति तीर्थंकर मोक्षकल्याणकेभ्यो पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा- रत्न जड़ित कंचन कलश, उसमें सुरभित हार।
त्रिभुवन शांति के लिए, करें त्रि शांतीधार॥

शांतये शांतिधारा

रत्न रजत हेमाभ वा, जलज सुमन उपहार।
ले जिन पद अर्पण करें, पायें ब्रह्म विचार॥

दिव्य पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्...

जाप्य मंत्र-ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सम्यक्दर्शन-ज्ञान-चारित्रेभ्यो नमः।

जयमाला

दोहा- जिनवर की जयमाल की, महिमा अपरम्पार।
चौबीसों तीर्थेश जी, धर्म तीर्थ आधार॥

(शंभु छंद)

जय भरतक्षेत्र के आदीश्वर, सन्मति पर्यंत जिनेश्वर की।
जय जगद्गुरु त्रय जगपालक, त्रिभुवन पूजित विद्येश्वर की॥
जिन गर्भागम छह माह पूर्व, धनराज[1] रत्न बरसाता है।
रवि चन्द्र नील वैडूर्य आदि, नाना मणि रत्न लुटाता है॥1॥

पन्द्रह महीने चौदह करोड़, जन्मोत्सव तक वे रत्न गिरें।
सुख दाता के आगमन पूर्व, हर पुर परिजन के भाग्य फिरे॥
सुरपति से प्रेरित धनपति भी, जिन नगर भव्य निर्माण करें।
वास्तु कुमार सुर भावों से, श्री नगर सृजन अभियान करें॥2॥

श्री आदि सुरेन्द्र प्रेरणा से, जिन मात गर्भ शोधन करती।
छप्पन कुमारिकायें भी आ, माता का मन रंजन करती॥

1. कुबेर।

गर्भोत्सव से कुछ समय पूर्व, जिनमात स्वप्न सोलह देखें।
तीर्थंकर तब गर्भस्थ होय, ऐसा जिनआगम उल्लेखे ॥3॥
जिन जननी आ जिनपालक से, स्वप्नों के फल को पूछ रही।
संकेत प्राप्त आ सुर सेना, जिनमात-पिता को पूज रही॥
प्रभु धरते मति-श्रुत-अवधि ज्ञान, गर्भस्थ काल में निश्चय से।
माता पुनि विद्यावान हुई, गर्भस्थ नाथ के अतिशय से॥4॥
छप्पन कुमारि कृत गूढ़प्रश्न[1], जिनमात सहज सुलझाती है।
वसु दिक्कुमारि कृत सेवा से, माँ की आभा बढ़ जाती है॥
तीर्थंकर जिन का जन्मोत्सव, त्रिभुवन को अतिशय का दाता।
सिंह शंखनाद कहिं वाद्य बजे, सुरपति का आसन कम्पाता॥5॥
तब सुरपति ऐरावत गज ले, वैभव युत सुरसेना लाये।
लख योजन का ऐरावत गज, अठ मुख बत्तीस सूंड पाये॥
प्रत्येक सूंड पर ह्रद[2] पंकज, उस पर नाचें सुर ललनायें।
रजताभ[3] गजेन्द्र प्रदक्षिण दे, निज भव-भव के अघ विनशाये॥6॥
इन्द्राणी जाय प्रसूति गृह, जिन बालक लख हर्षाय रही।
पुनि अवलोके कह धन्य-धन्य, शुचि सम्यक्दर्शन पाय रही॥
तीर्थंकर शिशु को गोद लिए, नर्तन कर सुरपति को देती।
पा प्रथम दर्श तीर्थंकर का, सौधर्म पूर्व शिव[4] वर लेती॥7॥
सौधर्म नाथ को गोद लिए, ऐशान छत्र प्रभु पर ताने।
सानत्कुमार माहेन्द्र स्वयं, ले चंवर युगल निज अघ हाने॥
सब मेरू शिखर पर जा पहुँचे, अंतर्मुहूर्त में सुर सारे।
सिंहासन पर प्रभु को बैठा, अभिषेक मंत्र सब उच्चारे॥8॥
सौधर्म शची निज परिकर सह, इक साथ जन्म अभिषेक करें।
मेरु क्षीरोदधि एक हुआ, ऐसा आगम उल्लेख करे॥
अभिषिक्त दिव्य गंधोदक से, शचि सुरपति मिल करते होली।
कर नृत्य देव-देवी उसमें, भरते निज अक्षय सुख झोली॥9॥

1. रहस्यमयी प्रश्न, 2. सरोवर, 3. चाँदी जैसी आभा वाली, 4. मोक्ष।

सुरभित द्रव्यों का लेप शची, प्रभु के सुरभित तन पर करती।
कुंडल किरीट मणिमाला वा, वस्त्राभूषण शोभित करती॥
अतिशय सुन्दर प्रभु मुद्रा लख, निज नेत्र हजार बनाये थे।
अपलक जिन रूप लखे सुरपति, पर तृप्त नहीं हो पाये थे॥10॥
शचिपति ने बाल तीर्थंकर की, अर्चाकर सौंपा अम्बे को।
फिर आनंद ताण्डव नृत्य किया, जग पूजे जिन पितु अम्बे को॥
तीर्थंकर शिशु की सेवा में, निश्चित कर देव देवियों को।
जिन गुण निधि वरने का अवसर, सुरपति दे धर्म सेवियों को॥11॥
तीर्थेश सहज हैं स्वयंबुद्ध, बिन गुरु वे जग के गुरु बनते।
जिन बाल सुलभ लीलाओं से, सुख ज्ञान सुधा झरने लगते॥
स्वर[1] में मणि निर्मित मानखंभ, वहाँ रत्नज भव्य पिटारे हैं।
जिससे सुर प्रभु वय रूप योग्य, वस्त्राभूषण ले आते हैं॥12॥
तीर्थंकर का राज्याभिषेक, आ शक्र[2] स्वयं ही करवाता।
वात्सल्यउदधि में डुबकी ले, सुख समता घट भर ले जाता॥
जिनवर को जब वैराग्य जगे, लौकांतिक सुर आ अनुमोदें।
सब प्राणी से धर क्षमाभाव, प्रभु पुर परिजन को सम्बोधें॥13॥
नर-खगचर-सुर क्रम से बढ़कर, जिन शिविका[3] को वन में लाये।
तब नमः सिद्ध कहकर स्वामी, लोचन कर संयम अपनायें॥
तीर्थंकर मुनि उस क्षण में ही, सब ऋद्धि-सिद्धिधर बन जाते।
जिस घर में प्रभु आहार करें, तहँ अचरज पाँचों हो जाते॥14॥
श्रेणी चढ़ ध्यानानल प्रगटा, प्रभु घाति कर्म को विघटाया।
तब अक्षय अनुपम आत्मजन्य, कैवल्य सूर्य को प्रगटाया॥
लाभान्तराय क्षय करने से, प्रभु त्रिभुवन स्वामी कहलाये।
दानान्तराय नश जाने से, जिन अक्षय दानी बन जाये॥15॥
धनपति शुभ समोशरण रचकर, त्रिभुवन पति योग्य पुण्य पाये।
सुरपति जिसकी अर्चा करके, भारी अचरज में पड़ जाये॥

1. स्वर्ग, 2. इन्द्र, 3. पालकी।

भू से ऊपर धनु पाँच सहस, प्रभु कमलासन तज अधर रहें।
जिनके सर्वात्म प्रदेशों से, अनमोल ज्ञान घन निकल रहे॥16॥
प्रभु सात शतक अठदश भाषी, निरपेक्ष मोक्ष पथ बतलाते।
शरणागत भव्य समूहों में, सम्यक् श्रुत दीपक जल जाते॥
श्री जिन विहार में स्वर्ण कमल, सुर वसु[1] दिश में रचते जाते।
जिस-जिस दिश में प्रभु चरण पड़े, तहँ भवि अघ से बचते जाते॥17॥
जो दृढ़ मन से प्रभु भक्ति करे, वो मनवांछित सुख पा जाये।
गूंगा बोले लंगड़ा दौड़े, निर्धन भी धन सुख पा जाये॥
रोगी निरोग जड़ ज्ञानवान, रागी विरागमय हो जाते।
लोभी अलोभ मोही विमोह, बालक भी शिवसुख को पाते॥18॥
जिनवर जब योग निरोध करें, तब समोशरण विघटाया है।
सब भव्य जीव नतशिर बैठे, मन में प्रभु रूप समाया है॥
ह्रस्वाक्षर पंच नाद घटि में, प्रभु कर्मन् पिण्ड जलाते हैं।
परमौदारिक तन को तजकर, अविराम सिद्ध पद पाते हैं॥19॥
प्रभु तन विलीन कर्पूर भाँति, नख केशमात्र रह जाते हैं।
सुरपति अग्नीन्द्र देव द्वारा, उसका संस्कार कराते हैं॥
तीर्थंकर की अग्नि पवित्र, त्रय काल सदा पूजी जाती।
उनके पाँचों कल्याणक की, तिथि वा भूमि पूजी जाती॥20॥
प्रभु के पाँचों कल्याणक हम, नित प्रति श्रद्धा से ध्याते हैं।
प्रभु गर्भ-जन्म-तप-ज्ञान-मोक्ष, पाँचों को अर्घ चढ़ाते हैं॥
हे नाथ ! आप गुण मणियों का, जिन भक्त सदा शुभ ध्यान धरें।
प्रभु गुण गा ये 'गुप्तिनंदी', जिन सम निज का कल्याण करें॥21॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री चतुर्विंशति तीर्थंकर पंचकल्याणकेभ्यः जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गीता छंद- जिन भक्त निर्मल भाव से यह 'रत्नत्रय पूजन' करें।
त्रैलोक्य सुख पा जाये वो सुर नर उन्हें वन्दन करें॥
फिर धर क्षमादिक धर्म को शिवराज वे पा जायेंगे।
त्रय 'गुप्ति' का व्रत पूर्णकर भव दुःख कभी ना पायेंगे॥

इत्याशीर्वादः दिव्य पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

1. आठ।

श्री सिद्ध परमेष्ठी पूजा

(शंभु छन्द)

सम्यक्त्व-ज्ञान-दर्शन-सुवीर्य, सूक्ष्मत्व शुद्ध अवगाहन हो।
हो अगुरुलघू गुणधारी वा, अव्याबाधी को वन्दन हो॥
लोकाग्रवास करने वाले, सब सिद्धों का आह्वानन है।
अविराम सिद्धपद पाने को, अभिनन्दन गुणगण थापन है॥1॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री णमो सिद्धाणं सिद्ध परमेष्ठी समूह ! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननम्। अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः-ठः स्थापनम्। अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्।

(अडिल्ल छन्द)

मंत्रपूत प्रासुक निर्मल जल ले लिया।
जन्मादिक त्रय नाशन हित अर्पण किया॥
लोककाल त्रयवर्ती सिद्धसमूह को।
पूजूँ नशने निज वसु कर्म समूह को॥1॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री णमो सिद्धाणं सिद्धाधिपतये जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

शीतल चन्दन देहताप पीड़ा हरे।
उनको अर्पित जो निज में क्रीड़ा करें॥ लोक...॥2॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री णमो सिद्धाणं सिद्धाधिपतये संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

अक्षय सुखदाता सिद्धों को पूजता।
तव पूजक पाये तुम जैसी पूज्यता॥ लोक...॥3॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री णमो सिद्धाणं सिद्धाधिपतये अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

मन्मथ दर्प[1] दलन सब सिद्धों ने किया।
इसविध मैंने पद्म सद्य[2] अर्पण किया॥ लोक...॥4॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री णमो सिद्धाणं सिद्धाधिपतये कामबाणविनाशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

गुझिया पूड़ी व्यंजन से अर्चा करूँ।
क्षुधा दमन हित सिद्धन् गुण चर्चा करूँ॥ लोक...॥5॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री णमो सिद्धाणं सिद्धाधिपतये क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. घमण्ड, 2. शीघ्र।

मृण्मय[1] घृत दीपक से जिन आराधना।
सिद्ध शरण देने वाली यह साधना।।
लोक-काल त्रयवर्ती सिद्धसमूह को।
पूजूँ नशने निज वसु कर्म समूह को।।6।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री णमो सिद्धाणं सिद्धाधिपतये मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

अगर-तगर मय सुरभित धूपों के घड़े।
कर्म दहन हित सर्व सिद्ध जिन को चढ़ें।। लोक...।।7।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री णमो सिद्धाणं सिद्धाधिपतये अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

ताल खजूर कपित्थ आदि फल से भजूँ।
शिवफल पाऊँ स्वयं सिद्धपद को जजूँ।। लोक...।।8।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री णमो सिद्धाणं सिद्धाधिपतये महामोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल-फल आदिक मिश्रित अर्पित अर्घ में।
पद अनर्घ पा वरूँ सिद्ध का वर्ग मैं।। लोक...।।9।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री णमो सिद्धाणं सिद्धाधिपतये अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

16 गुण सहित सिद्धों के अर्घ

अथ मंडलस्योपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

(चौपाई)

कर्म दर्शनावरण नशाया, तब अनंत दर्शन गुण पाया।
उन सिद्धों को शीश झुकायें, अर्घ चढ़ा रत्नत्रय पायें।।1।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अनंतदर्शन गुणमंडित सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ज्ञानावरण तिमिर को नाशें, गुण अनंत ज्ञानात्म प्रकाशें।। उन...।।2।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अनंतज्ञान गुणमंडित सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अंतराय की आय[2] निरोधी, अतुल वीर्य धारें शिव शोधी।। उन...।।3।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अनंतवीर्य गुणमंडित सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. मिट्टी के, 2. आस्रव।

कर्म मल्ल को जिस क्षण मारा, पाया क्षायिक[1] सुख भण्डारा।
उन सिद्धों को शीश झुकायें, अर्घ चढ़ा रत्नत्रय पाये।।4।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अनंतसुख गुणमंडित सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मोह महा रिपु को जब मारा, तब पाया सम्यक्त्व अपारा।। उन...।।5।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अनंतसम्यक्त्व गुणमंडित सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नामकर्म जड़ से विनशाया, तब अनंत सूक्ष्मत्व उपाया।। उन...।।6।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अनंतसूक्ष्मत्व गुणमंडित सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्मवेदनी को विघटाया, अव्याबाध परम गुण पाया।। उन...।।7।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अव्याबाधत्व गुणमंडित सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आयुकर्म बंधन परिहारें, वे जिन[2] अवगाहन गुण धारें।। उन...।।8।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अवगाहनत्व गुणमंडित सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चंचल कर्म प्रभाव हरें जो, आत्मगुणों में अचल रहें वो।। उन...।।9।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अचल गुणमंडित सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जरा[3] महाबाधा को घातें, ऐसे सिद्ध अजर कहलाते।। उन...।।10।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अजर गुणमंडित सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मरण दोष को आप विनाशें, अमर रूप धर मोक्ष निवासें।। उन...।।11।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अमर गुणमंडित सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अल्पज्ञान जिनको नहीं जाने, अप्रमेय जिन मम अघ हाने।। उन...।।12।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अप्रमेय गुणमंडित सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

द्रव्य-भाव इन्द्रिय विनशायें, अतीन्द्रियोत्सव आप कहायें।। उन...।।13।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अतीन्द्रियोत्सव गुणमंडित सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तीन वेद के जो अपहर्त्ता, वे अवेद निर्मल सुख भर्त्ता।। उन...।।14।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अवेद गुणमंडित सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भेदभाव के जिनवर त्यागी, नाथ अभेद परम गत[4] रागी।। उन...।।15।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अभेद गुणमंडित सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. जो कभी नाश ना हो, 2. प्रभु, 3. बुढ़ापा, 4. रागरहित।

नश्वर सौख्य विलीन करायें, अविनश्वर अविलीन कहायें।
उन सिद्धों को शीश झुकायें, अर्घ चढ़ा रत्नत्रय पायें॥4॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अविलीन गुणमंडित सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

32 गुण सहित सिद्धों के अर्घ

अथ मंडलस्योपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

(चौपाई)

कर्म चेतना को विनशायें, शुद्ध चेतना को वो पायें।
उन सिद्धों को शीश झुकायें, अर्घ चढ़ा रत्नत्रय पायें॥1॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री शुद्ध चैतन्याय सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मिश्र ज्ञान जिनवर ने छोड़ा, शुद्धज्ञान से निज को जोड़ा॥ उन..॥2॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री शुद्ध ज्ञानाय सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्मज तन विद्रुप[1] मिटाया, स्वयं शुद्ध चिद्रूप[2] उपाया॥ उन..॥3॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री शुद्ध चिद्रूपाय सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्मज दूषित रूप तजे हैं, शुद्ध स्वरूप अनूप भजे हैं॥ उन..॥4॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री शुद्ध स्वरूपाय सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वैभाविक पररूप[3] हरा है, निर्मल शुद्ध स्वरूप वरा है॥ उन..॥5॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री शुद्ध स्वरूपभावाय सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शुद्ध दृढ़ाय सिद्ध को वंदें, दृढ़ता से जिनगुण अभिनंदें॥ उन..॥6॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री शुद्ध दृढ़ीयसे सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शुचि आवर्तक जिन कहलायें, पंच परावर्तन विनशायें॥ उन..॥7॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री शुद्धावर्तकाय सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शुद्ध स्वयंभू को हम ध्यायें, तव पद में निज चित्त लगायें॥ उन..॥8॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री शुद्ध स्वयंभुवे सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

परालम्ब त्रय योग नशायें, शुद्ध योग जिन शिवमग पायें॥ उन..॥9॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री शुद्धयोगिने सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. भयंकर रूप, 2. आत्मस्वरूप, 3. दूसरा

शुद्ध योनि कुल जिनने पाया, शुद्ध जात बन कर्म नशाया।
उन सिद्धों को शीश झुकायें, अर्घ चढ़ा रत्नत्रय पायें॥10॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री शुद्धजाताय सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अन्तर बहि दोनों तप कीना, शुद्ध तपस्वी का पद लीना॥ उन..॥11॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री शुद्धतपसे सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मूर्तमंत परभाव नशायें, शुद्ध मूर्त जग में कहलायें॥ उन..॥12॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री शुद्धमूर्तये सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

परम शुद्ध सुख को जो पायें, शुद्ध सुखी जग में कहलायें॥ उन..॥13॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री शुद्धसुखाय सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

परम शुद्ध पौरुष अपनाया, शुद्ध पुरुष संज्ञा को पाया॥ उन..॥14॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री शुद्धपावनाय सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्मजन्य है सकल शरीरा, शुद्ध शरीर हरें तन पीड़ा॥ उन..॥15॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री शुद्धशरीराय सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शुद्ध ज्ञान तुमको लख पाये, इस विध शुद्ध प्रमेय कहाये॥ उन..॥16॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री शुद्धप्रमेयाय सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

निज अशुद्ध उपयोग नशायें, अतः शुद्ध उपयोग कहायें॥ उन..॥17॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री शुद्धयोगाय सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्मज भोग आत्मगुण घातें, शुद्ध भोग जिन उनको घातें॥ उन..॥18॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री शुद्धभोगाय सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शुद्ध ज्ञान गुण में रम जायें, सिद्ध शुद्ध अवलोक कहायें॥ उन..॥19॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री शुद्धावलोकिने सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शुक्ल ध्यान की अग्नि जलायें, निज आतम को वहाँ तपायें॥ उन..॥20॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री शुद्धार्हत् जाताय सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

निज शुचि ज्ञान निपात करें हैं, शिव रमणी का साथ वरे हैं॥ उन..॥21॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री शुद्धनिपाताय सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शुद्ध गर्भ में वास किया है, गर्भ-जन्म का नाश किया है॥
उन सिद्धों को शीश झुकायें, अर्घ चढ़ा रत्नत्रय पायें॥22॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री शुद्धार्हगर्भवासाय सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

लोकवास का त्याग करायें, शुद्ध वास जिनवर कहलायें॥ उन..॥23॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री शुद्ध सिद्धवासाय सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

परम शुद्ध वासाय जिनेशा, काटें मम वसु कर्मज क्लेशा॥ उन..॥24॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री शुद्ध परमवासाय सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शुद्ध सिद्ध परमातम ध्याऊँ, तव पद को मैं भी पा जाऊँ॥ उन..॥25॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री शुद्ध सिद्ध परमात्मने सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शुद्ध अनंत महागुण पायें, शुद्ध अनंत जिनेश कहायें॥ उन..॥26॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री शुद्धानंतगुणाय सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शुद्ध शांत सुख शांति प्रदाता, दुःख हर प्रभुवर हैं सुखदाता॥ उन..॥27॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री शुद्धशांताय सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शुद्ध भदंत[1] नाथ को ध्यायें, तव गुण में निज चित्त लगायें॥ उन..॥28॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री शुद्धभदंताय सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शुद्ध ज्योति जिनवर प्रगटायें, शुद्ध ज्योति जिन को हम ध्यायें॥ उन..॥29॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री शुद्धनिरूपमाय सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

परम शुद्ध निर्वाण विधाता, तीन लोक के हैं जो त्राता॥ उन..॥30॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री शुद्ध निर्वाणाय सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शुचि संदर्भ गर्भ उपजाया, जिनको सुर असुरों ने ध्याया॥ उन..॥31॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री शुद्ध संदर्भगर्भाय सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शुद्ध प्रशांत सिद्ध कहलायें, कर्म समूल प्रशांत करायें॥ उन..॥32॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री शुद्धस्वान्ताय सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. ज्ञानवान।

पूर्णार्घ्य (हरिगीता छंद)

निर्मल निरंजन नित्य निर्भय नय निपुण निज में रमें।
अक्षय अजर अकलंक अविचल अमर आतम में रमें॥
आनंदनंदन आत्मरंजन की करूँ नित अर्चना।
शुद्धात्म शुद्ध प्रबुद्ध जिनवर सिद्ध की शुभ वंदना॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अष्टचत्वारिंशदगुणमंडित सिद्धपरमेष्ठिने पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सोरठा- निर्मल शांतिधार, कंचन घट जल से भरा।
पुष्प मनोज्ञ अपार, पुष्पाञ्जलि अर्पण करूँ॥

शांतये शांतिधारा.....दिव्य पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

जाप्य मंत्र : ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सम्यक्दर्शनज्ञानचारित्रेभ्यो नमः।

जयमाला

दोहा- सिद्ध शिवालय में बसे, उनको करूँ प्रणाम।
जयमाला प्रभु नाम की, मंगलमय सुख धाम॥

(शेर छन्द)

जय-जय अनंत सिद्ध अग्रलोक विराजे।
जय-जय अनंत सिद्ध तीन लोक में साजे॥
प्रभु ध्यान अग्नि में प्रवीण कर्म हने थे।
जिन अष्टकर्म नाश श्रेष्ठ सिद्ध बने थे॥1॥

जिन दशवें गुणस्थान मोहकर्म नशाया।
छद्मस्थ वीतराग नाम बारवें पाया॥
फिर बारवें उपान्त तीन घाति नशायें।
त्रैलोक्य भासमान ज्ञानसूर्य को पायें॥2॥

जिनवर अनंतज्ञान से त्रिलोक देखते।
निज आत्म के अनंतगुण अशोक लेखते॥

जय अंत में अघाति कर्म भी विनाशते।
अरहंत रूप छोड़ सिद्धलोक वासते॥3॥

उपसर्ग चारविध सहें उपसर्गकेवली।
कितने अयोग बन गये थे मूककेवली॥
कोई सयोगकेवली अंतर्मूहूर्त में।
जिन अंतःकृत बने अशेष कर्म को हने॥4॥

सिद्धों की अर्चना समस्त कार्य सिद्धी दें।
सब ऋद्धि संपदा दिला के मोक्ष सिद्धी दें॥
रवि और भौम ग्रह के सर्व रिष्ट भी हरे।
जो नाम जपे आपका वो इष्ट सुख वरें॥5॥

उन सर्व सिद्ध की यहाँ उपासना करें।
सम्पूर्ण सिद्धि हेतु नित आराधना करें॥
मैं सिद्धभक्ति कर समाधिभाव को वरूँ।
त्रय 'गुप्ति' पूर्ण पाल मुक्तिराज को वरूँ॥6॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री णमो सिद्धाणं अनंत गुण समन्वित सिद्ध परमेष्ठिभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(गीता छंद)

जिनभक्त निर्मल भाव से यह रत्नत्रय पूजन करें।
त्रैलोक्य सुख पा जाये वो, सुर-नर उसे वंदन करें॥
फिर धर क्षमादिक् धर्म को, शिवराज वे पा जायेंगे।
त्रय 'गुप्ति' का व्रत पूर्ण कर, भवदुःख कभी ना पायेंगे॥

इत्याशीर्वादः दिव्य पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

श्री आचार्य परमेष्ठी पूजा

(शंभु छन्द)

हे ऋषिनायक ! गुणमणिदायक, तव पद हम शीश झुकाते हैं।
तुम सम निज रूप बनाने को, तव गुण में ध्यान लगाते हैं॥
दीक्षा-शिक्षा अनुग्रह दाता, छत्तीस गुणों के धारी हैं।
आह्वानन वा थापन करते, हम गुरु के चरण पुजारी हैं॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री णमो आयरियाणं आचार्य परमेष्ठि समूह ! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननम्।
ॐ ह्रीं अर्हं श्री णमो आयरियाणं आचार्य परमेष्ठि समूह ! अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः-ठः स्थापनम्।
ॐ ह्रीं अर्हं श्री णमो आयरियाणं आचार्य परमेष्ठि समूह ! अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्।

चौपाई (आंचली बद्ध)

निर्मल जल के कलश भराय, गुरु पद में त्रय धार कराय।
महाऋषि हो, जय जगबंधु महाऋषि हो॥
छत्तिस गुणधारी ऋषिराज, उनको पूजें भव्य समाज।
महाऋषि हो, जय जगबंधु महाऋषि हो॥1॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री णमो आयरियाणं आचार्य परमेष्ठिभ्यः जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

चंदन संग कपूर घिसाय, ऋषिनायक के पद अर्चाय।
महाऋषि हो, जय जगबंधु महाऋषि हो॥ छत्तिस गुणधारी..॥3॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री णमो आयरियाणं आचार्य परमेष्ठिभ्यः संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

मुक्ता तंदुल भर-भर लाय, गुरु सम्मुख त्रय पुँज चढ़ाय।
महाऋषि हो, जय जगबंधु महाऋषि हो॥ छत्तिस गुणधारी..॥3॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री णमो आयरियाणं आचार्य परमेष्ठिभ्यः अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

नीरज भूमिज पुष्प मनोज्ञ, यतिपद भज हर मन्मथरोग।
महाऋषि हो, जय जगबंधु महाऋषि हो ।।
छत्तिस गुणधारी ऋषिराज, उनको पूजें भव्य समाज।
महाऋषि हो, जय जगबंधु महाऋषि हो ।।4 ।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री णमो आयरियाणं आचार्य परमेष्ठिभ्यः कामबाणविनाशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

षट्रस व्यंजन लिये हजार, ऋषिपद पूज करें जयकार।
महाऋषि हो, जय जगबंधु महाऋषि हो।। छत्तिस गुणधारी..।।5।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री णमो आयरियाणं आचार्य परमेष्ठिभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

घृत दीपक ले बहुत प्रकार, करें आरती मंगलकार।
महाऋषि हो, जय जगबंधु महाऋषि हो।। छत्तिस गुणधारी..।।6।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री णमो आयरियाणं आचार्य परमेष्ठिभ्यः महामोहान्धकार विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

अगर कपूर सुमिश्रित धूप, अग्निपात्र धर खेओ अनूप।
महाऋषि हो, जय जगबंधु महाऋषि हो।। छत्तिस गुणधारी..।।7।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री णमो आयरियाणं आचार्य परमेष्ठिभ्यः अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

केला आम फनस जंबीर, फल से पूज वरें जगतीर।
महाऋषि हो, जय जगबंधु महाऋषि हो।। छत्तिस गुणधारी..।।8।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री णमो आयरियाणं आचार्य परमेष्ठिभ्यः महामोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्घ चढ़ाय भविक हर्षाय, पद अनर्घ जिससे मिल जाय।
महाऋषि हो, जय जगबंधु महाऋषि हो।। छत्तिस गुणधारी..।।9।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री णमो आयरियाणं आचार्य परमेष्ठिभ्यः अनर्घपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अष्ट प्रवचन मातृकाधारी आचार्य परमेष्ठी के अर्घ

अथ मंडलस्योपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

(शंभु छंद)

जो गुरु अठ प्रवचन माता को, संयम चित हो प्रतिपाल करें।
प्रतिपल उसमें निज चित्त लगा, शिष्यों में भी वह जोश भरें।।
वे श्रमण सूर्य पंचाचारी, जग में ऋषिपति कहलाते हैं।
उन जैसा पुण्य जगाने को, सुमनावलि भव्य चढ़ाते हैं।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अष्टप्रवचनमातृकाधारक आचार्य परमेष्ठिभ्यो पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

निज व्रत निर्मल पालन करने, संयम से गमन करें पथ में।
ईर्यासमिती धारी गुरुवर, अविचल बढ़ जाते शिवमग में।।
जो वसु प्रवचन माताधारी, मुनिगण नायक कहलाते हैं।
उन सम रत्नत्रय पाने हम, श्रद्धा से अर्घ चढ़ाते हैं।।1।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री ईर्यासमिति गुणसहित आचार्य परमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हित-मित-प्रिय मंगल वाणी से, रत्नत्रय मार्ग बताते हैं।
भवि जीवों को अवलम्बन दे, वे मोक्ष महल ले जाते हैं।। जो वसु..।।2।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री भाषासमिति गुणसहित आचार्य परमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

छ्यालीस दोष बत्तीस विघ्न, टालें आहार की चर्या में।
आहार करें अंजुलि पुट में, फिर लगते संयम चर्या में।। जो वसु..।।3।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री ऐषणासमिति गुणसहित आचार्य परमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उपकरण उठाने रखने में, आगम सम्मत चर्या करते।
षट्काय जीव रक्षक ऋषिवर, निज पर हितकर चर्या करते।। जो वसु..।।4।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री आदाननिक्षेपण समिति गुणसहित आचार्य परमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मल-मूत्र-पुरीष विसर्जन में, वे जीव दया का ध्यान धरें।
तन की माया ममता तजकर, रत्नत्रय का अभियान करें।। जो वसु..।।5।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री व्युत्सर्गसमिति गुणसहित आचार्य परमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शुभ-अशुभ विचार शृंखला का, क्रम-क्रम से रोधन करते हैं।
ऋषि मनोगुप्ति का पालन कर, आतम का शोधन करते हैं।। जो वसु..।।6।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री मनोगुप्ति गुणसहित आचार्य परमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वचनों पर संयम रखने को, जो वचन गुप्ति पालन करते।
सुखकर मधुकर निज वचनों से, निज कर्मन् प्रक्षालन करते॥
जो वसु प्रवचन माताधारी, मुनिगण नायक कहलाते हैं।
उन सम रत्नत्रय पाने हम, श्रद्धा से अर्घ चढ़ाते हैं॥7॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री वचोगुप्ति गुणसहित आचार्य परमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वे काय गुप्तिधारी गुरुवर, काया निरोध संयम वरते।
निज आत्म लगन में तन्मय हो, पर भावों का उपशम करते॥ जो वसु..॥8॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री कायगुप्ति गुणसहित आचार्य परमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य (शंभु छंद)

त्रय गुप्ति समितियाँ पाँच वरें, उसका भावात्मक बोध करें।
वे स्वपर भेदविज्ञान वरें, निज शुद्धातम का शोध करें॥ जो वसु..॥9॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अष्टप्रवचनमातृकाधारक आचार्य परमेष्ठिभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

छत्तीस मूलगुण सहित आचार्य परमेष्ठी के अर्घ

अथ मंडलस्योपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

(शंभु छंद)

ऋषिनायक द्वादश तप करते, दश धर्म पंच आचार वरें।
षट् आवश्यक निशदिन पालें, त्रयगुप्ति धरें शिवद्वार वरें॥
छत्तीस मूलगुण के धारी, शिष्यों से मुनिव्रत पलवाते।
ऐसे जगनायक ऋषिगण पर, हम पुष्पाञ्जलि कर हर्षाते॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री षट्त्रिंशत् गुणसहित आचार्य परमेष्ठिभ्यः पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

अनशन आदि द्वादश तप (सखी छंद)

बहुविध अनशन[1] तप धारें, निज काय ममत्व निवारें।
ऋषिवर छत्तिस गुणधारी, हम भक्ति करें मनहारी॥1॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अनशन तपोगुणसहिताचार्य परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. उपवास।

ऊनोदर[1] तप अपनाते, निज रसना पर जय पाते।
ऋषिवर छत्तिस गुणधारी, हम भक्ति करें मनहारी॥2॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अवमोदर्य तपोगुणसहिताचार्य परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

व्रत परिसंख्यान करें जो, बहुविध संकल्प धरें वो॥ ऋषिवर...॥3॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री वृत्तिपरिसंख्यान तपोगुणसहिताचार्य परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

षट् रस के जो परित्यागी, वे सूरीश्वर[2] वैरागी॥ ऋषिवर...॥4॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री रसपरित्याग तपोगुणसहिताचार्य परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अति दुर्द्धर तप स्वीकारें, गुरु काय क्लेश व्रत धारें॥ ऋषिवर...॥5॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री कायक्लेश तपोगुणसहिताचार्य परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गुरुवर एकांत निवासी, शय्या विविक्त[3] अभ्यासी॥ ऋषिवर...॥6॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री विविक्तशयनासन तपोगुणसहिताचार्य परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रायश्चित्त तप को धारा, निज-पर का शल्य निवारा॥ ऋषिवर...॥7॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री प्रायश्चित्त तपोगुणसहिताचार्य परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दृढ़ विनय धर्म अपनाया, अविनय का भाव नशाया॥ ऋषिवर...॥8॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री विनय तपोगुणसहिताचार्य परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नित वैयावृत्ति करें हैं, तीर्थंकर धर्म वरे हैं॥ ऋषिवर...॥9॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री वैयावृत्ति तपोगुणसहिताचार्य परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

स्वाध्याय महातप पाया, निज प्रज्ञा दीप जलाया॥ ऋषिवर...॥10॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री स्वाध्याय तपोगुणसहिताचार्य परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

व्युत्सर्ग परम तप धारा, तन का ममत्व परिहारा॥ ऋषिवर...॥11॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री व्युत्सर्ग तपोगुणसहिताचार्य परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गुरु ध्यानानल प्रगटायें, उसमें निज कर्म जलायें॥ ऋषिवर...॥12॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री ध्यान तपोगुणसहिताचार्य परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य (सखी छंद)

इस विध द्वादश तप कीना, आतम को निर्मल कीना॥ ऋषिवर...॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री द्वादश तपोगुणसहिताचार्य परमेष्ठिने पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. भूख से कम भोजन करना, 2. आचार्य, 3. एकांत।

उत्तम क्षमादिक् दश धर्म

अथ मंडलस्योपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

दोहा– दावानल से भी अधम, क्रोधानल[1] कहलाय।
उसे जीत आचार्यवर, क्षमा धरम अपनाय॥1॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री उत्तम क्षमाधर्म सहिताचार्य परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मान आत्म गुण को हने, संकट पट[2] दे खोल।
मद जेता ऋषिराज की, हे प्राणी ! जय बोल॥2॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री उत्तम मार्दवधर्म सहिताचार्य परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कपट आत्म पट से हटा, ऋजुता भाव बनाय।
आर्जव धनी मुनीश को, हम सब अर्घ चढ़ाय॥3॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री उत्तम आर्जवधर्म सहिताचार्य परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

लोभ हरें संतोष धर, गुरुवर परम प्रवीण।
शौच धर्म धारी गुरु, तव पद में मन लीन॥4॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री उत्तम शौचधर्म सहिताचार्य परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सब असत्य परिहार कर, पाया सत्य स्वराज।
सत्पथ धर गणनाथ की, भक्ति करें हम आज॥5॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री उत्तम सत्यधर्म सहिताचार्य परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

यम[3] वा कर्म विनाशने, संयम धरें गणेश।
उन सम संयम धारने, पूजें नित्य सुरेश॥6॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री उत्तम संयमधर्म सहिताचार्य परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

द्वादश तप की धार से, होय निरंजन आत्म।
उत्तम तप को धारकर, श्रमण बनें परमात्म॥7॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री उत्तम तपोधर्म सहिताचार्य परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पर परिग्रह के राग से, जले द्वेष की आग।
उसे त्याग आचार्यवर, बने परम गत राग॥8॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री उत्तम त्यागधर्म सहिताचार्य परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. क्रोध अग्नि, 2. द्वार, 3. मृत्यु।

आकिंचन वृष के धनी, तजे सकल व्यामोह[1]।
श्रमण संघ नायक बने, करें मोक्ष आरोह[2]॥9॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री उत्तम आकिंचन्यधर्म सहिताचार्य परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

घोर शील व्रत पाल कर, करते ब्रह्म विहार।
धर्म केतु[3] आचार्यवर, वृष गुण के दातार॥10॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री उत्तम ब्रह्मचर्यधर्म सहिताचार्य परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्यं (दोहा)

दशलक्षण दश धर्म को, पालें बिन अतिचार।
उन गुरु के पद मैं भजूँ, होवे मम उद्धार॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री दशधर्म सहिताचार्य परमेष्ठिने पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पंचाचार

अथ मंडलस्योपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

चौपाई– निर्मल दर्शन करें करावें, दर्शनीय आचार बनावें।
पंचाचारी गुरु को ध्याओ, पंचाचार परम गुण पाओ॥1॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री दर्शनाचार गुण सहिताचार्य परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ज्ञान योग करते करवाते, जग में ज्ञानामृत बरसाते॥ पंचाचारी...॥2॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री ज्ञानाचार गुण सहिताचार्य परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दृढ़ चरित्र को वरें मुनीशा, बनते स्वयंबुद्ध जगदीशा॥ पंचाचारी...॥3॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री चारित्राचार गुण सहिताचार्य परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तप आचार करें करवाते, स्वयं शुद्ध कुंदन[4] बन जाते॥ पंचाचारी...॥4॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री तप आचार गुण सहिताचार्य परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

बन अनगूहित[5] वीर्याचारी, जीतें कर्मन् मल्ल जितारी॥ पंचाचारी...॥5॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री वीर्याचार गुण सहिताचार्य परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्यं (दोहा)

दर्शन–ज्ञान–चरित्र तप, पालें वीर्याचार।
उन आचार्य मुनीश को, पूजें बारम्बार॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पंचाचार गुण सहिताचार्य परमेष्ठिने पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. विशेष मोह, 2. चढ़ना, 3. ध्वजा, 4. सोना, 5. बिना छिपाए हुए।

षट् आवश्यक

अथ मंडलस्योपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

(चौपाई)

समता रस को प्रतिपल पीते, समता मय गुरु जीवन जीते।
षट् आवश्यक करें कराते, उन्हें यहाँ हम अर्घ चढ़ाते॥28॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री समतावश्यक गुण सहिताचार्य परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चौबिस जिन का संस्तव करते, उन सम गुण निधियाँ वे वरते॥ षट्...॥29॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री चतुर्विंशति स्तवावश्यक गुण सहिताचार्य परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्हत् सिद्धों के गुण गाते, जिन पद में निज प्रीति लगाते॥ षट्...॥30॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री वंदनावश्यक गुण सहिताचार्य परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पापों का अतिक्रमण हरें जो, निशिवासर[1] प्रतिक्रमण करें वो॥ षट्...॥31॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री प्रतिक्रमणावश्यक गुण सहिताचार्य परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रत्याख्यान करें गण स्वामी, भवदधि[2] तिरने अन्तर्यामी॥ षट्...॥32॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री प्रत्याख्यानावश्यक गुण सहिताचार्य परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

काया से ममता को छोड़ें, शिवरमणी से नाता जोड़ें॥ षट्...॥33॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री कायोत्सर्गावश्यक गुण सहिताचार्य परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्यं (दोहा)

अनावश्यकों को तजें, जो आवश्यक पाल।
महा अर्घ अर्पित करो, उनको थर-थर भाल॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री षट् आवश्यक गुण सहिताचार्य परमेष्ठिने पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तीन गुप्ति

अथ मंडलस्योपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

(शंभु छंद)

निज मन का रोधन कर ऋषिवर, मन बल गुण निधियाँ प्राप्त करें।
मनःपर्ययज्ञान जगाकर वे, निज मन आगम में व्याप्त करें॥

1. रात-दिन, 2. भवसागर।

ऐसे ऋषिनायक गुरुवर के, गुण में हम ध्यान लगाते हैं।
त्रय गुप्ति महागुण पाने को, भक्ति से अर्घ्य चढ़ाते हैं॥34॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री मनोगुप्ति गुण सहिताचार्य परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शुभ वचनामृत का पान करा, फिर वचन कला व्यापार तजें।
व्रत वचो गुप्ति का पालन कर, गुरु निजानंद पीयूष[1] चखें॥ ऐसे..॥35॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री वचोगुप्ति गुण सहिताचार्य परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आतापन आदिक योग धरें, गुरु काय गुप्ति पालन करते।
तप ज्ञान ध्यान में तन्मय हो, अन्तस का प्रक्षालन करते॥ ऐसे..॥36॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री कायगुप्ति गुण सहिताचार्य परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्यं (शंभु छंद)

तप द्वादश धर दश धर्म वरें, आचार पंच अपनाते हैं।
षट् आवश्यक त्रय गुप्ति धरें, शिष्यों से भी पलवाते हैं॥
छत्तीस गुणाकर[2] ऋषिनायक, उनके गुण हम नित गाते हैं।
गुरु सम गुण निधियाँ पाने को, चरणों में अर्घ चढ़ाते हैं॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री षट्त्रिंशत् गुण सहिताचार्य परमेष्ठिने पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा- **हेम कुम्भ मणि खचित लें, करें भव्य त्रय धार।**
पुष्पांजलि अर्पण करें, करने निज उद्धार॥

शांतये शांतिधारा.... दिव्य पुष्पांजलि क्षिपेत्।

जाप्य मंत्र : ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्रेभ्यो नमः।

जयमाला

दोहा- **शिष्य करें यह प्रार्थना, झुका-झुका कर शीश।**
जयमाला हम गा रहे, दो गुरुवर आशीष॥

(शेर छन्द)

जैवंत श्रेष्ठ संत श्री आचार्य महंता,
छत्तीस मूलगुण के नाथ आप धरंता।

1. अमृत, 2. गुणों की खान।

जय पाँच हि आचार आप नित्य आचरें।
जय शिष्य वर्ग में भी वो हि प्रेरणा भरें॥1॥

उत्तम क्षमादि धर्म को जो पालते सदा।
द्वादश तपों से आत्मा को तापते सदा॥
समतादि षडावश्यकों में लीन वो रहे।
त्रय गुप्तियों को पाल कर्म क्षीण कर रहे॥2॥

शुचि देश-जाति-गोत्र-कुल में जन्म पावते।
निज आचरण व देशना से सबको तारते॥
आगम स्वपर को जानकर वे सत्य शोधते।
आगम प्रमाण सूत्र से शिष्यों को बोधते॥3॥

कर बाल-गुरु-वृद्ध-शिष्य-साधु की सेवा।
वात्सल्य हृदय मातृ सदृश हो गुरु देवा॥
शासनपति तुम्ही हो सर्वसंघ के पिता।
संसारी जीव को बतायें मोक्ष का पता॥4॥

गुरु आदि ग्रह की आपदा हरें गुरु सदा।
दिलवाये आत्मसौख्य वा अखंड सम्पदा॥
हे नाथ ! प्रार्थना है तीन रत्न दीजिये।
मुझ 'गुप्ति' सूरि को भी मोक्षराज दीजिये॥5॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री आचार्य परमेष्ठिने जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(गीता छन्द)

जिनभक्त निर्मल भाव से यह 'रत्नत्रय पूजन' करें।
त्रैलोक्य सुख पा जाये वो सुर-नर उसे वन्दन करें॥
फिर धर क्षमादिक् धर्म को शिवराज वे पा जायेंगे।
त्रय 'गुप्ति' व्रत को धारकर भवदुःख कभी ना पायेंगे॥

इत्याशीर्वादः दिव्य पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

श्री चौबीस तीर्थंकरों के गणधरों की पूजा

(गीता छन्द)

चौबीस जिन के गणधरों की, आज हम अर्चा करें।
सुरभित सुमन ले साथ में, उनकी परम अर्चा करें॥
गणधर गुरु सब आईए, हममें भरें तप ज्योत्सना।
उन सम विरागी हम बने, इस हेतु यह आराधना॥

ॐ ह्रीं ह्रवीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय ! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननम्। अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः-ठः स्थापनम्। अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्।

(दोहा)

नीर भरे घट से करें, गणधर पद प्रक्षाल।
जन्मादिक त्रय रोग हर, पायें सुख त्रय काल॥
चौबीसों जिनराज के, गणधर का गुणगान।
सर्व रोग संकट हरें, करें अखिल उत्थान॥1॥

ॐ ह्रीं ह्रवीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झौं झौं नमः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

शीतल सुरभित गंध से, अर्चें श्री गुरु पाद।
नशें सकल संताप वा, राग-द्वेष अवसाद॥ चौबीसों...॥2॥

ॐ ह्रीं ह्रवीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झौं झौं नमः गंधं निर्वपामीति स्वाहा।

अक्षत उज्ज्वल धवल ले, उत्तम पुँज चढ़ाय।
गणधर कृपा रहे जहाँ, अक्षय सुख मिल जाय॥ चौबीसों...॥3॥

ॐ ह्रीं ह्रवीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झौं झौं नमः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

कमलादिक बहु सुमन लें, जपें गुरु का नाम।
आत्म ब्रह्म में लीन हो, नशें अधम खल काम॥ चौबीसों...॥4॥

ॐ ह्रीं ह्रवीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झौं झौं नमः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

पुड़ी इमरती आदि ले, पूजें गण अधिनाथ।
क्षुधा विजय क्षण में करें, बन जायें जगनाथ॥
चौबीसों जिनराज के, गणधर का गुणगान।
सर्व रोग संकट हरें, करें अखिल उत्थान॥5॥

ॐ ह्रीं ह्र्वीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झौं झौं नमः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दीप आरती से करें, गणनायक गुणगान।
मोह तिमिर अज्ञान हर, पायें केवलज्ञान॥ चौबीसों...॥6॥

ॐ ह्रीं ह्र्वीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झौं झौं नमः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

धूप अनल में खेयकर, पूजें गुरु पद पद्म।
आठों कर्म विनाश कर, वरें सुखद शिव सद्म॥ चौबीसों...॥7॥

ॐ ह्रीं ह्र्वीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झौं झौं नमः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

केलादिक बहु फल लिए, आये गणधर द्वार।
उनका सुफलाशीष ही, नाशे कर्म विकार॥ चौबीसों...॥8॥

ॐ ह्रीं ह्र्वीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झौं झौं नमः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल से फल तक द्रव्य ले, मनहर अर्घ सजाय।
विघ्न विनायक को भजें, पद अनर्घ मिल जाय॥ चौबीसों...॥9॥

ॐ ह्रीं ह्र्वीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झौं झौं नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रत्येक तीर्थंकर के गणधरों के अर्घ

अथ मंडलस्योपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

(नरेन्द्र छंद)

आदिनाथ के धर्म सूत्र को, जिनने उर में धारा।
'वृषभसेन' आदिक चौरासि, गणि को नमन हमारा॥
चौदह सौ बावन गणधर की, भक्ति आपदा नाशे।
ऋद्धि-सिद्धि वा सौख्य दिलाये, केवलज्ञान विकासे॥1॥

ॐ ह्रीं ह्र्वीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झौं झौं नमः श्री वृषभनाथस्य 'वृषभसेनादि' चतुरशीति गणधरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अजितनाथ के अजित त्याग को, 'सिंहसेन' गणि धारें।
उन युत नब्बे गणधर मुनिवर, क्रम से मोक्ष सिधारें॥
चौदह सौ बावन गणधर की, भक्ति आपदा नाशे।
ऋद्धि-सिद्धि वा सौख्य दिलाये, केवलज्ञान विकासे॥2॥

ॐ ह्रीं ह्र्वीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झौं झौं नमः श्री अजितनाथस्य 'सिंहसेनादि' नवति गणधरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

संभव जिन के सह भव नाशे, 'चारुदत्त' गण स्वामी।
इक सौ पाँच गणेश्वर जिनवर, बने परम शिवगामी॥ चौदह..॥3॥

ॐ ह्रीं ह्र्वीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झौं झौं नमः श्री संभवनाथस्य 'चारुदत्तादि' पंचोत्तरशतम् गणधरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अभिनंदन का वंदन करते, इक सौ तीन गणेशा।
गुरु 'व्रजादि' गणधर जिन को, नमते सर्व सुरेशा॥ चौदह..॥4॥

ॐ ह्रीं ह्र्वीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झौं झौं नमः श्री अभिनंदननाथस्य 'व्रजादि' त्रयाधिक शतं गणधरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुमतिनाथ ने इक सौ सोलह, गणधर रत्न बनाये।
'तौतक' आदिक गण के नायक, तीर्थंकर गुण गायें॥ चौदह..॥5॥

ॐ ह्रीं ह्र्वीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झौं झौं नमः श्री सुमतिनाथस्य 'चमरादि' षोडशाधिक शतं गणधरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'वज्रचमर' आदिक इक सौ दस, पद्मप्रभु के चेले।
उनके गणधर बनकर वे सब, शिवरमणी संग खेलें॥ चौदह..॥6॥

ॐ ह्रीं ह्र्वीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झौं झौं नमः श्री पद्मनाथस्य 'वज्रचमरादि' दशाधिक शतं गणधरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री सुपार्श्व के समवशरण में, 'बलदत्तादि' गणेशा।
एक शतक कम पाँच कहाये, श्रमण संघ के ईशा॥ चौदह..॥7॥

ॐ ह्रीं ह्र्वीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झौं झौं नमः श्री सुपार्श्वनाथस्य 'बलदत्तादि' पंचनवति गणधरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चंद्रनाथ हैं पूर्ण चंद्र सम, गणधर बने सितारे।
'दंतादि' त्रय नब्बे गणधर, उनके चरण पखारें॥
चौदह सौ बावन गणधर की, भक्ति आपदा नाशे।
ऋद्धि-सिद्धि वा सौख्य दिलाये, केवलज्ञान विकासे॥8॥

ॐ ह्रीं ह्रवीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झौं झौं नमः श्री चंद्रप्रभस्य 'दंतादि' त्रिनवति गणधरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पुष्पदंत की वाणी झेलें, अट्ठयासी गुरु न्यारे।
'संघातिक' गण के अधिनायक, अपना संघ सम्हारें॥ चौदह..॥9॥

ॐ ह्रीं ह्रवीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झौं झौं नमः श्री पुष्पदंतस्य 'संघातिकादि' अष्टाशीतिः गणधरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शीतल जिन के 'अनगारादिक', इक्यासी गण इन्द्रा।
जिनके चरण कमल को पूजें, नर सुर इन्द्र मुनीन्द्रा॥ चौदह..॥10॥

ॐ ह्रीं ह्रवीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झौं झौं नमः श्री शीतलनाथस्य 'अनगारादि' एकाशीतिः गणधरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'सौधर्मादि' सतत्तर गणधर, श्री श्रेयांस जिनवर के।
चरम शरीरी गुरु मुद्रा को, भव्य जीव अवलोके॥ चौदह..॥11॥

ॐ ह्रीं ह्रवीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झौं झौं नमः श्री श्रेयांसनाथस्य 'सुधर्मादि' सप्तसप्तति गणधरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गुरु 'वरांश' ने वासुपूज्य से, रत्नत्रय वर पाया।
उन संग छ्यासठ गणधारी ने, जीवन अमर बनाया॥ चौदह..॥12॥

ॐ ह्रीं ह्रवीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झौं झौं नमः श्री वासुपूज्यस्य 'वरांशादि' षट्षष्टिः गणधरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विमलनाथ की जय-जय बोलें, श्री 'जय' गणधर स्वामी।
पचपन गुरु भी प्रभु को ध्याकर, बने सुखद शिवगामी॥ चौदह..॥13॥

ॐ ह्रीं ह्रवीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झौं झौं नमः श्री विमलनाथस्य 'जयादि' पंचपंचाशत गणधरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अनंत जिन ने भव अनंत की, अन्त्य विधि सिखलाई।
गुरु 'अरिष्टादिक' पचास ने, वही विधी अपनाई॥
चौदह सौ बावन गणधर की, भक्ति आपदा नाशे।
ऋद्धि-सिद्धि वा सौख्य दिलाये, केवलज्ञान विकासे॥14॥

ॐ ह्रीं ह्रवीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झौं झौं नमः श्री अनन्तनाथस्य 'अरिष्टादि' पंचाशत् गणधरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

धर्मनाथ की धर्म ध्वजा को, धर 'अरिष्टसेनादि'।
तैंतालिस गणनायक सम्मुख, हारे परमत वादी॥ चौदह..॥15॥

ॐ ह्रीं ह्रवीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झौं झौं नमः श्री धर्मनाथस्य 'अरिष्टसेनादि' त्रिचत्वारिंशत् गणधरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतिनाथ के धर्मचक्र को, 'चक्रायुध' गुरु धारें।
छत्तिस गणपतियों ने अपने, कर्म चक्र परिहारे॥ चौदह..॥16॥

ॐ ह्रीं ह्रवीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झौं झौं नमः श्री शांतिनाथस्य 'चक्रायुधादि' षट्त्रिंशत् गणधरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कुंथुनाथ की अमृतवाणी, 'अमृतसेन' धरे हैं।
उन युत पैंतिस गणधर स्वामी, अमृत पान करें हैं॥ चौदह..॥17॥

ॐ ह्रीं ह्रवीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झौं झौं नमः श्री कुंथुनाथस्य 'अमृतसेनादि' पंचत्रिंशत् गणधरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अरहनाथ की वृष श्रेणी पर, 'श्री सुषेण' ले जायें।
तीस गणीन्द्रों को नित ध्याकर, हम भी वह सुख पायें॥ चौदह..॥18॥

ॐ ह्रीं ह्रवीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झौं झौं नमः श्री अरहनाथस्य 'कुंथ्वादि' त्रिंशत् गणधरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मल्लिनाथ के शिष्य 'विशाखा', कर्म मल्ल को मारें।
अट्ठाइस गुरुओं के सम्मुख, कर्म शत्रु खुद हारे॥ चौदह..॥19॥

ॐ ह्रीं ह्रवीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झौं झौं नमः श्री मल्लिनाथस्य 'विशाखाचार्यादि' अष्टाविंशति गणधरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मुनिसुव्रत से दिव्य महाव्रत, 'धारिण' गुरु ने धारा।
ऋद्धि प्रदाता अठदस गुरु ने, उसको ही स्वीकारा॥
चौदह सौ बावन गणधर की, भक्ति आपदा नाशे।
ऋद्धि-सिद्धि वा सौख्य दिलाये, केवलज्ञान विकासे॥20॥

ॐ ह्रीं इ्वीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झौं झौं नमः श्री मुनिसुव्रतनाथस्य 'धारिणादि' अष्टादश गणधरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नमि जिनवर की धर्म सुधा को, 'सोमादि' गुरु पीते।
उसको पीकर सतरह गुरु भी, यम वैरी को जीते॥ चौदह..॥21॥

ॐ ह्रीं इ्वीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झौं झौं नमः श्री नमिनाथस्य 'सोमादि' सप्तदश गणधरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नेमीनाथ की धर्म धुरा को, धारें 'वरदत्तादी'।
सिद्धी विधाता ग्यारह गुरु भी, हरते आधि उपाधी॥ चौदह..॥22॥

ॐ ह्रीं इ्वीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झौं झौं नमः श्री नेमीनाथस्य 'वरदत्तादि' एकादश गणधरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'स्वयंभवादि' पार्श्वनाथ संग, स्वयं सिद्ध पद पायें।
उन युत दस गुरु विघ्न विनायक, प्रभु को शीथ नवायें॥ चौदह..॥23॥

ॐ ह्रीं इ्वीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झौं झौं नमः श्री पार्श्वनाथस्य 'स्वयंभवादि' दश गणधरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'इन्द्रभूति' जिन इन्द्र युक्ति से, वीर शरण में आये।
ग्यारह गणधर परम पुण्य से, वीर वचन अपनायें॥ चौदह..॥24॥

ॐ ह्रीं इ्वीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झौं झौं नमः श्री महावीरनाथस्य 'इन्द्रभूत्यादि' एकादश गणधरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्यं (नरेन्द्र छंद)

आदिनाथ से महावीर तक तीर्थंकर सुखकारी।
उनके चौदह सौ बावन हैं, गणधर ज्ञान प्रचारी॥
वृषभसेन से इन्द्रभूति तक, सब गणधर को ध्यायें।
मनहर अर्घ चढ़ाकर हम सब, रत्नत्रय गुण पायें॥

ॐ ह्रीं इ्वीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झौं झौं नमः श्री चतुर्विंशति तीर्थंकराणां श्री वृषभसेनादि एक सहस्र चतुर्शतक द्विर्पचाशत गणधरेभ्यो पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा- क्षीरोदक ले कलश में, गुरु पद धारा देय।
पुष्पाञ्जलि अर्पित करें, रत्नत्रय गुण लेय॥

शांतये शांतिधारा.... दिव्य पुष्पांजलि क्षिपेत्।

जाप्यमंत्र : ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्रेभ्यो नमः।

जयमाला

दोहा- ऋद्धि-सिद्धि दातार हैं, श्री गणधर भगवान।
उनकी जय गुण मालिका, करें स्वपर उत्थान॥

(शंभु छंद)

जय-जय गणधर गुणमणि आकर, तुम तीर्थंकर पथधारी हो।
चौंसठ सुऋद्धि के धारक तुम, द्वादश अंगों के धारी हो॥
निज-निज तीर्थंकर जिन सम्मुख, तुमने मुनि पद को पाया है।
तप त्याग विशुद्ध भावना से, सब ऋद्धि-सिद्धि को पाया है॥1॥

पूर्वार्जित निज अति सुकृत से, तुम मुनि गण के आचार्य बने।
जिन रवि किरणों के धारक हो, गुरु सर्वोत्तम श्रमणार्य बने॥
गणधर-गणीन्द्र-गण के नायक, मुनि गणपति-विघ्न विनायक हो।
अघ रोग-शोक संकटहर्त्ता, भव्यों के भाग्य विधायक हो॥2॥

तीर्थंकर जिन की धर्मसभा, द्वादश कोठों में भाजित है।
उसमें मुनिगण के कोठे में, गणनायक नित्य विराजित हैं॥
तीर्थंकर दिव्य वचन पावन, ओंकार रूप में आते हैं।
दिनकर की किरणों के जैसे, गणधर में आन समाते हैं॥3॥

जिन वचन महोदधि गूढ़ सरस, शत इन्द्र समझ नहीं पाते हैं।
द्वादश अंगों व पूर्वों में, गणि उनको सुमन बनाते हैं।।
गणधर गुंथित जिन आगम ही, बहु प्रज्ञादीप जलाता है।
निज-निज भवांत कर भवि प्राणी, इससे रत्नत्रय पाता है।।4।।

फिर कर्म नशा गणधर स्वामी, अरिहंत सिद्ध पद पाते हैं।
तब त्रिभुवन वासी उत्सव से, अतिशायी भक्ति रचाते हैं।।
हे जिन यती ! 'गुप्तिनंदी' भी, तव गुण में ध्यान लगाता है।
शिव राज आप सम पाने को, उत्तम जयमाला गाता है।।5।।

ॐ ह्रीं ह्र्वीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झ्रौं झ्रौं नमः सर्व गणधर परमेष्ठिभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(गीता छन्द)

जिनभक्त निर्मल भाव से यह 'रत्नत्रय पूजन' करें।
त्रैलोक्य सुख पा जाये वो सुर-नर उसे वन्दन करें।।
फिर धर क्षमादिक् धर्म को शिवराज वे पा जायेंगे।
त्रय 'गुप्ति' व्रत को धारकर भवदुःख कभी ना पायेंगे।।

इत्याशीर्वादः दिव्य पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

श्री उपाध्याय परमेष्ठी पूजा

(शंभु छन्द)

हे ऋषि पाठक ! यति अध्यापक, मुनि शिक्षक ज्ञान प्रदाता हो।
हे ज्ञानमूर्ति ! हे वागेश्वर !, रत्नत्रय मार्ग प्रदाता हो।।
श्रुत रूप आप मुनिभूप आप, हम द्वार तिहारे आये हैं।
आह्वानन थापन सन्निधि हित, बहु सुमन पुँज भी लाये हैं।।

ॐ ह्रीं णमो उवज्झायाणं श्री उपाध्याय परमेष्ठि समूह ! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननम्। अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः-ठः स्थापनम्। अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्।

(बसंततिलका छंद)

ये नीर के घट लिये तुम पास आये, रोगादि को क्षय करें शिववास पायें।
हे पूज्य पाठक ! सदा हम शीश नायें[1], पूजा करें तम हरें सद्ज्ञान पायें।।1।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री णमो उवज्झायाणं उपाध्याय परमेष्ठिने जलं निर्वपामीति स्वाहा।

लाये सुचन्दन विभो मम आत्म राजो।
संताप हारक प्रभो भव ताप नाशो। हे पूज्य पाठक !.....।।2।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री णमो उवज्झायाणं उपाध्याय परमेष्ठिने चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

थाली जिनाक्षत भरी हम आज लाये।
तेरे पुनीत वर से निज राज पायें।। हे पूज्य पाठक !.....।।3।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री णमो उवज्झायाणं उपाध्याय परमेष्ठिने अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

बेला गुलाब वसु ले गुरुपाद पूजें।
कामादि को हम हरें सन्मार्ग सूझे। हे पूज्य पाठक !.....।।4।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री णमो उवज्झायाणं उपाध्याय परमेष्ठिने पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

पेड़ादि नेवज भरे बहु थाल लायें।
पीड़ा क्षुधा क्षय करें जग भाल पायें। हे पूज्य पाठक !.....।।5।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री णमो उवज्झायाणं उपाध्याय परमेष्ठिने नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नाना सुरत्न घृत के बहुदीप लाये।
ले आरती हम करें तम को नशायें। हे पूज्य पाठक !.....।।5।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री णमो उवज्झायाणं उपाध्याय परमेष्ठिने दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

हे नाथ ! धूप घट ले हमने चढ़ाये।
नाशें अशेष अघ को तव रूप ध्यायें। हे पूज्य पाठक !...।।7।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री णमो उवज्झायाणं उपाध्याय परमेष्ठिने धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

केला अनार फल की हम लाय थाली।
पायें कृपा तव सदा सद्भाग्यशाली। हे पूज्य पाठक !.....।।8।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री णमो उवज्झायाणं उपाध्याय परमेष्ठिने फलं निर्वपामीति स्वाहा।

1. झुकायें।

नीरादि द्रव्य गुरु को हमने चढ़ाया, पायें अनर्घ्य पद को यह भाव आया।
हे पूज्य पाठक ! सदा हम शीश नायें, पूजा करें तम हरें सद्ज्ञान पायें॥9॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री णमो उवज्झायाणं उपाध्याय परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पच्चीस मूलगुणधारी उपाध्याय परमेष्ठी के अर्घ

अथ मंडलस्योपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

(काव्य छंद)

श्रमणों का आचार, 'आचारांग' बताये।
श्रमण सिद्धि का सार, सहज सरल समझाये॥
ऋषि पाठक जग पूज्य, द्वादशांग के धारी।
अर्घ सजाकर आज, पूजें सब नर-नारी॥1॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री आचारांग ज्ञानधारकोपाध्याय परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

स्वपर समय का ज्ञान, 'सूत्र कृतांग' करायें।
उपाध्याय मुनिराज, इसका बोध करायें॥ ऋषि पाठक.....॥2॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सूत्रकृतांग ज्ञानधारकोपाध्याय परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जड़ चेतन का रूप, नाना भेद प्रमाणा।
आगम श्री 'ठाणांग', उसका भेद बखाना॥ ऋषि पाठक.....॥3॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री स्थानांग ज्ञानधारकोपाध्याय परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

द्रव्यादिक् चतु:भेद, उसमें समता लेखें।
'समवायांग' महान, समीचीन उल्लेखें॥ ऋषि पाठक.....॥4॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री समवायांग ज्ञानधारकोपाध्याय परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जीव अस्ति वा नास्ति, भेद अनेक प्रमाणे।
श्री 'व्याख्याप्रज्ञप्ति', सम्यक् रूप बखाने॥ ऋषि पाठक.....॥5॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री व्याख्याप्रज्ञप्ति अंगज्ञानधारकोपाध्याय परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तीर्थंकर चारित्र, सम्यक्विध दर्शावे।
'ज्ञातृधर्मकथांग', आगम निधि कहलावे॥ ऋषि पाठक.....॥6॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री ज्ञातृधर्मकथांग ज्ञानधारकोपाध्याय परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पाक्षिक नैष्ठिक आदि, श्रावक विविध प्रकारा।
'उपासकाध्ययनांग', कहे सूत्र अनुसारा॥
ऋषि पाठक जग पूज्य, द्वादशांग के धारी।
अर्घ सजाकर आज, पूजें सब नर-नारी॥7॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री उपासकाध्ययनांग ज्ञानधारकोपाध्याय परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हर तीर्थंकर काल, दश अंतकृत ज्ञाता।
'अंत:कृत दश अंग', उनकी कथा बताता॥ ऋषि पाठक.....॥8॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अंतकृद्दशांग ज्ञानधारकोपाध्याय परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा- दश यति हर तीर्थेश के स्वर्ग अनुत्तर पाय।
'अनुत्तरोपपादिक' महा उनका त्याग सुनाय॥
यति शिक्षक जग पूज्य हैं धारें द्वादश अंग।
हम उनकी पूजा करें पायें ज्ञान अभंग॥9॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अनुत्तरोपपादिक दशांग ज्ञानधारकोपाध्याय परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आक्षेपिणी आदि कथा, कहे 'प्रश्न व्याकर्ण'।
संवेगादिक् के लिये, लहे जिनागम शर्ण॥ यति शिक्षक...॥10॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री प्रश्नव्याकरणांग ज्ञानधारकोपाध्याय परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री 'विपाक सूत्रांग' में, कर्म दशा उल्लेख।
उसको सम्यक् जानकर, निज आतम को देख॥ यति शिक्षक...॥11॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री विपाकसूत्रांग ज्ञानधारकोपाध्याय परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

त्रय शत त्रेसठ अन्य मत, उनका पूर्ण बखान।
समीचीन वर्णन करे, 'दृष्टि प्रवाद' महान्॥ यति शिक्षक...॥12॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री दृष्टिप्रवादांग ज्ञानधारकोपाध्याय परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दृष्टिवाद है पंचविध, प्रथम भेद 'परिकर्म'।
सूत्र प्रथम अनुयोग गत, पूर्व चूलिका मर्म[1]॥ यति शिक्षक...॥13॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री परिकर्मदृष्टिवाद ज्ञानधारकोपाध्याय परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. रहस्य।

पाँच भेद परिकर्म के 'चन्द्र प्रज्ञप्ति' आदि।
उसके सम्यग्ज्ञान से हरें जगत् की व्याधि॥
यति शिक्षक जग पूज्य हैं धारें द्वादश अंग।
हम उनकी पूजा करें पायें ज्ञान अभंग॥14॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री चन्द्रप्रज्ञप्ति ज्ञानधारकोपाध्याय परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भास्करेन्द्र के पूर्ण गुण, गमन ऋद्धि परिवार।
'सूर्य प्रज्ञप्ति' में मिले, वर्णन सर्व प्रकार॥ यति शिक्षक...॥15॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सूर्यप्रज्ञप्ति ज्ञानधारकोपाध्याय परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'जम्बूद्वीप प्रज्ञप्ति' से, जम्बूद्वीप का ज्ञान।
इसके सम्यक् बोध से, मिटे लोभ वा मान॥ यति शिक्षक...॥16॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री जम्बूद्वीप प्रज्ञप्ति ज्ञानधारकोपाध्याय परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'द्वीप सिंधु प्रज्ञप्ति' से, द्वीपोदधि का बोध।
इसके ज्ञाता श्रमण गण, करें कर्म का रोध॥ यति शिक्षक...॥17॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री द्वीपसमुद्रप्रज्ञप्ति ज्ञानधारकोपाध्याय परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गुण पर्यायों द्रव्य का जिसमें हो प्रतिरूप।
वह 'व्याख्याप्रज्ञप्ति' है, वर्णन करे अनूप॥ यति शिक्षक...॥18॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री व्याख्याप्रज्ञप्ति ज्ञानधारकोपाध्याय परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(चौपाई)

दृष्टिवाद का भेद कहाया, 'सूत्र' नाम आगम में आया।
सिद्ध जीव का रूप बताये, इसको ऋषि पाठक गुरु पायें॥19॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सूत्र दृष्टिवाद ज्ञानधारकोपाध्याय परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पुरुष शलाका त्रेसठ होते, पुण्य-पाप की बगिया बोतें।
उसे प्रथम अनुयोग बतायें, यति पाठक हमको समझायें॥20॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री प्रथमानुयोग दृष्टिवाद ज्ञानधारकोपाध्याय परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूरबगत जिन सूत्र निराला, दृष्टिवाद का भेद विशाला।
श्रुत 'उत्पाद पूर्व' मनहारी, त्रय पर्याय कहें मनहारी॥21॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री उत्पादपूर्व ज्ञानधारकोपाध्याय परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नय दुर्नय षट् द्रव्य बताये, 'अग्रायणीय पूर्व' कहलाये।
उपाध्याय गुरु इसके ज्ञाता, उन्हें विनय से अर्घ चढ़ाता॥22॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अग्रायणीय पूर्वज्ञानधारकोपाध्याय परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आत्म स्वपर तप वीर्य बखाना, 'वीर्यप्रवाद' ग्रंथ सरधाना।
अध्यापक यति उसको बूझें[1], हम उनके चरणों को पूजें॥23॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री वीर्यानुप्रवाद पूर्वज्ञानधारकोपाध्याय परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'आस्ति नास्ति' मय द्रव्य सभी हैं, इस प्रवाद में बात यही है।
जो गुरु इसको पढ़ें पढ़ावें, उपाध्याय जग में कहलावें॥24॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अस्तिनास्तिप्रवाद पूर्वज्ञानधारकोपाध्याय परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ज्ञान पंच विध जग में होता, 'ज्ञानवाद' है इसका स्रोता।
ऋषि पाठक हैं इसके ज्ञानी, भव्य जगत उनका श्रद्धानी॥25॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री ज्ञानप्रवाद पूर्वज्ञानधारकोपाध्याय परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सप्त भंग का भान कराता, सत्य तथ्य शिव मग बतलाता।
ऐसे 'सत्यवाद' को धारें, यति पाठक जग वंद्य हमारे॥26॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सत्यप्रवाद पूर्वज्ञानधारकोपाध्याय परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शुद्ध अशुद्ध सिद्ध संसारी, जीव विचित्र गुणों का धारी।
'आत्म प्रवाद' उसे बतलावें, यति शिक्षक हमको समझावें॥27॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री आत्मप्रवाद पूर्वज्ञानधारकोपाध्याय परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्मों की अलबेली माया, 'कर्म प्रवाद' पूर्व में आया।
इसको मुनि अध्यापक जाने, हम आये उनके गुण गाने॥28॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री कर्मप्रवाद पूर्वज्ञानधारकोपाध्याय परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सोरठा- 'प्रत्याख्यान प्रवाद', त्याग क्रिया बतलावता।
मुनि शिक्षक जग वंद्य, उसको धारें चित्त में॥29॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री प्रत्याख्यान पूर्वज्ञानधारकोपाध्याय परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. जाने।

श्रुत 'विद्यानुप्रवाद', विद्या मंत्रों से भरा।
उसको जाने पूर्ण, ऋषि अध्यापक पूज्य हैं॥30॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री विद्यानुवाद पूर्वज्ञानधारकोपाध्याय परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गुरु 'कल्याण प्रवाद', इक क्षण में वाचन करें।
जो अष्टांग निमित्त, नवग्रह गति फल से भरा॥31॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री कल्याणप्रवाद पूर्वज्ञानधारकोपाध्याय परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'प्राणावाय प्रवाद', आयुष की चर्चा करें।
आयुर्वेद प्रवीण, मुनि अध्यापक लोक में॥32॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री प्राणावाय पूर्वज्ञानधारकोपाध्याय परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूरब 'क्रिया विशाल', छन्द शास्त्र व्याकर्णमय।
श्रुत केवलि भगवान, निश्चय से इसके धनी॥33॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री क्रियाविशाल पूर्वज्ञानधारकोपाध्याय परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'लोक बिन्दु श्रुतसार', लोककरण व्याख्या करें।
इसके ज्ञाता संत, यति अध्येता श्रेष्ठ हैं॥34॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री लोकबिन्दुसार पूर्वज्ञानधारकोपाध्याय परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नीर यंत्र गति मंत्र, कहती 'जलगत चूलिका'।
दृष्टिवाद का भेद, पल में गुरु वाचन करें॥35॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री जलगताचूलिका धारकोपाध्याय परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मेरु कुलाचल वर्ष, वर्णे 'थलगत चूलिका'।
इनके वाचक मंत्र, ऋषि पाठक को कण्ठगत॥36॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री स्थलगताचूलिका धारकोपाध्याय परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इन्द्रजाल के मंत्र, धर 'मायागत चूलिका'।
इसके धारक श्रेष्ठ, शिक्षक मुनि श्रुत के धनी॥37॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री मायागताचूलिका धारकोपाध्याय परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नर गज आदिक रूप, तप मंत्रों से शक्य है।
'रूपगता' श्रुत पूर्ण, यति पाठक उसको धरें॥38॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री रूपगताचूलिका धारकोपाध्याय परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नभ गमनादिक मंत्र, वर्णे 'नभगत चूलिका'।
पाठक ऋषिवर पूज्य, क्षणभर में पाठन करें॥39॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री आकाशगताचूलिका धारकोपाध्याय परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(सखी छंद)

समता स्तुति वंदन वर्णे, चौदह प्रकीर्ण अवतर्णे।
वह अंग बाह्य कहलावें, ऋषि पाठक पठन करावें॥40॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सामायिकादि चतुर्दश प्रकीर्णक स्वरूप अंगबाह्येभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य (शंभु छंद)

हम द्वादशांग चौदह पूरब, सम्पूर्ण शास्त्र को नित वन्दे।
परिकर्म सूत्र प्रथमानुयोग, चूलिका पूर्वगत अभिनन्दे॥
इसके धारक ऋषि अध्यापक, करुणाकर मम अज्ञान हरें।
हम अर्घ मनोज्ञ चढ़ाते हैं, वे निर्मल ज्ञान प्रदान करें॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पंचविंशति गुणसहितोपाध्याय परमेष्ठिने पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा– **तीन धार कर नीर की, मेटूँ निज भव पीर।**
पुष्पांजलि की भेंट दे, नशूँ काम के तीर॥

शांतये शांतिधारा.....दिव्य पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

जाप्य मंत्र : ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सम्यग्दर्शन–ज्ञान–चारित्रेभ्यो नमः।

जयमाला

दोहा : **द्वादश अंग प्रवीण हैं, उपाध्याय गुरुदेव।**
उनकी जय गुणमाल पढ़, कीर्तन करूँ सदैव॥

(पंच चामर छन्द)

जयो–जयो मुनीश आप द्वादशांग धारते।
जयो सुयोग्य शिल्पकार शिष्य को सुधारते॥

नयो-प्रमाण भंग में प्रवीण आप संत हो।
मुनीश आप शर्ण में ममात्म मोह अंत हो॥1॥

ऋषीश अंग बाह्य वा प्रविष्ट में प्रवीण हैं।
अशेष द्रव्य नौ पदार्थ शोध में सुलीन हैं।
गवेषणा[1] करें जिनेश सप्त तत्त्व की सदा।
विशोधना करें विशेष आत्म तत्त्व की मुदा॥2॥

विशुद्ध चित्त आप मात भारती सुपुत्र हो।
प्रकाण्ड ज्ञान वान मान हीन हो पवित्र हो।
जिनेन्द्र का विशाल ज्ञान आप में सुशोभता।
अभव्य के अगम्य सर्व जीव चित्त लोभता॥3॥

मुनीश आप भक्त पूर्ण अर्घ थाल ला रहा।
अशुद्ध आत्म शोधने सुभक्ति गान गा रहा॥
दया करो दया करो, सुशिष्य पे दया करो।
त्रिलोक अग्रवास हेतु, 'गुप्ति' पे दया करो॥4॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री णमो उवज्झायाणं उपाध्यायपरमेष्ठिने जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(गीता छन्द)

जिनभक्त निर्मल भाव से यह 'रत्नत्रय पूजन' करें।
त्रैलोक्य सुख पा जाये वो सुर-नर उसे वन्दन करें॥
फिर धर क्षमादिक् धर्म को शिवराज वे पा जायेंगे।
त्रय 'गुप्ति' व्रत को धारकर भवदुःख कभी ना पायेंगे॥

इत्याशीर्वादः दिव्य पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

श्री साधु परमेष्ठी पूजा

(शंभु छन्द)

जो रत्नत्रय संस्कारों से, आत्मिक विकार परिहार करें।
श्रमणोक्त शील शुचि चर्या से, शुद्धात्म भाव साकार करें॥
अठबीस मूलगुण के धारी, आह्वान तुम्हारा करता हूँ।
सुमनावली से थापन कर मैं, तुम सम रत्नत्रय वरता हूँ॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री णमो लोए सव्वसाहूणं सर्वसाधु परमेष्ठि समूह ! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननम्। अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः-ठः स्थापनम्। अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्।

(शेर छन्द)

मैं नीर कुंभ ले प्रभु के पाद धुलाऊँ।
गुरु पाद धुला करके रोग तीन नशाऊँ॥
ये ज्ञान-ध्यान लीन साधुओं की अर्चना।
शिवपद प्रदान करती हरके कर्म वंचना॥1॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री णमो लोए सव्वसाहूणं सर्वसाधु परमेष्ठिभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

मैं चंदनादि लाय साधु चर्ण चर्चता।
संतप्त चित्त शांति हेतु नित्य अर्चता॥ ये ज्ञान...॥2॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री णमो लोए सव्वसाहूणं सर्वसाधु परमेष्ठिभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

उज्ज्वल सुअक्षतों के पुँज तीन मैं धरूँ।
अक्षय अखण्ड सिद्धियों के सौख्य को वरूँ॥ ये ज्ञान...॥3॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री णमो लोए सव्वसाहूणं सर्वसाधु परमेष्ठिभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

ले केवड़ादि गंधवान पुष्प चढ़ाऊँ।
मन्मथ नशूँ त्रियोग साधना को बढ़ाऊँ॥ ये ज्ञान...॥4॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री णमो लोए सव्वसाहूणं सर्वसाधु परमेष्ठिभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

ताजे सुपक्व मिष्ट नेवजों की थाल ले।
हे नाथ ! आप संग पहुँचूँ, लोक भाल पे॥ ये ज्ञान...॥5॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री णमो लोए सव्वसाहूणं सर्वसाधु परमेष्ठिभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

घृत रत्न दीप लेय मैं, सजाऊँ आरती।
मोहान्ध नाश मैं लहूँ, सुज्ञान भारती॥
ये ज्ञान-ध्यान लीन साधुओं की अर्चना।
शिवपद प्रदान करती हरके कर्म वंचना॥6॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री णमो लोए सव्वसाहूणं सर्वसाधु परमेष्ठिभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

सुरभित पुनीत धूप खेऊँ अग्निपात्र में।
आठों करम विनाश पाऊँ ज्ञान गात्र[1] में॥ ये ज्ञान...॥7॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री णमो लोए सव्वसाहूणं सर्वसाधु परमेष्ठिभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

केला अनार आदि फल के ढेर चढ़ाऊँ।
मैं मोक्ष फल के लाभ योग्य भाव बढ़ाऊँ॥ ये ज्ञान...॥8॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री णमो लोए सव्वसाहूणं सर्वसाधु परमेष्ठिभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल-गंध आदि द्रव्य लेय अर्घ बनाया।
पाने अनर्घ सौख्य आज भक्ति से लाया॥ ये ज्ञान...॥9॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री णमो लोए सव्वसाहूणं सर्वसाधु परमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चतुर्विध-उपसर्ग जेता साधु के अर्घ

अथ मंडलस्योपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

(गीता छंद)

विकराल सुर वेताल बन, उपसर्ग मुनिवर पर करे।
उसको श्रमण समभाव से, सहकर सहज शिवसुख वरें॥
मुनि चार विध उपसर्ग सह, निज कर्म बंधन तोड़ते।
हम अर्घ अर्पण कर उन्हें, निज आत्म कड़ियाँ जोड़ते॥1॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री देवकृत उपसर्गजेता सर्वसाधु परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तिर्यंच कृत उपसर्ग से बाधित, श्रमण जब हो कभी।
उसको सहें समभाव धर, त्रुटियाँ नशें निज की सभी॥ मुनि..॥2॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री तिर्यंचकृत उपसर्गजेता सर्वसाधु परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. शरीर।

मुनिराज पर नर-नार कृत, उपसर्ग जब होवें महा।
वे लीन तब शुचि ध्यान में, सब पर क्षमा धरते अहा॥
मुनि चार विध उपसर्ग सह, निज कर्म बंधन तोड़ते।
हम अर्घ अर्पण कर उन्हें, निज आत्म कड़ियाँ जोड़ते॥3॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री मनुष्यकृत उपसर्गजेता सर्वसाधु परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नैसर्ग कृत उपसर्ग से, मरणांत जब पीड़ा मिले।
तन से तजें मुनि मोह त्वर[1], तब ज्ञान रवि तत्क्षण खिले॥ मुनि..॥4॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री प्राकृतिक उपसर्गजेता सर्वसाधु परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य (गीता छंद)

उपसर्ग चउ विध सहन कर, उपसर्ग जेता बन गये।
ये श्रमण शम दम भाव से, शिव पथिक नेता बन गये॥
मुनि चार विध उपसर्ग सह, निज कर्म बंधन तोड़ते।
हम अर्घ अर्पण कर उन्हें, निज आत्म कड़ियाँ जोड़ते॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री चतुर्विध उपसर्गजेता सर्वसाधु परमेष्ठिभ्यो पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पंचविध चारित्रधारी साधुओं के अर्घ

अथ मंडलस्योपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

(शंभु छंद)

मुनिवर जिस क्षण मुनिव्रत धारें, सामायिक संयम को पायें।
गुणथान सातवें से नौ तक, समता सुख में रमते जायें॥
पाँचों चरित्र धारी मुनिवर, क्रम से पंचम गति को पायें।
हम उनकी अर्चा भव्य रचा, अविराम श्रमण व्रत अपनायें॥1॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सामायिकचारित्रसंपन्न सर्वसाधु परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सामायिक व्रत से च्युत होकर, छेदोपस्थापन व्रत पायें।
दीक्षा-शिक्षा-व्रत-यात्रा से, निज कर्म दोष मुनि विनशायें॥ पाँचों..॥2॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री छेदोपस्थापनाचारित्रसंपन्न सर्वसाधु परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. शीघ्र।

अत्यंत प्राणिवध तज योगी, परिहार विशुद्धि चरित्र वरें।
षष्ठम सप्तम गुणथान रहें, अपरम्[1] निज आत्म पवित्र करें॥
पाँचों चरित्र धारी मुनिवर, क्रम से पंचम गति को पायें।
हम उनकी अर्चा भव्य रचा, अविराम श्रमण व्रत अपनायें॥3॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री परिहारविशुद्धिचारित्रसंपन्न सर्वसाधु परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

यति गुणस्थान दशवें चढ़कर, निज लोभ सूक्ष्मतम कर देते।
वे सूक्ष्म साम्परायी योगी, बहुकर्म कृष्टियाँ[2] कर लेते॥ पाँचों.॥4॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सूक्ष्मसांपरायचारित्रसंपन्न सर्वसाधु परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

निज कर्म शमन वा क्षयकर ऋषि, व्रत यथाख्यात में रूढ़ हुए।
ग्यारह से चौदह तक योगी, सर्वोच्च ध्यान आरूढ़ हुए॥ पाँचों.॥5॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री यथाख्यातचारित्रसंपन्न सर्वसाधु परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य (शंभु छंद)

सामायिक से ले यथाख्यात मुनिवर चरित्र युत होते हैं।
त्रय रत्न हीन पामर[3] प्राणी संयम बिन जीवन खोते हैं॥
चारित्र शून्य सम्यक्त्व व्यर्थ कर्मों का पिण्ड जलाने में।
मम चित्त लीन चारित्रवान, मुनिराजों के गुण गाने में॥1॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सामायिकादि पंचविध चारित्रसंपन्न सर्वसाधु परमेष्ठिभ्यो पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पुलकादि पंचविध मुनियों के अर्घ

अथ मंडलस्योपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

(शंभु छंद)

उत्तर गुणहीन मुनीश्वर जब मलयुक्त मूलगुण को साधें।
आगम इनको कहता 'पुलाक' श्रावक-सुर-नर-मिल आराधें॥
पहले वा दूजे संयम धर, वे भावलिंग युत कहलाते।
रत्नत्रय निधियाँ पाने हम, वसु मंगल द्रव्य लिए आते॥1॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री संयमसम्पन्नभावलिंगी पुलाक साधु परमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. आगे, 2. क्षीण, 3. पापी।

उपकरण बकुश संस्कार बकुश, द्वय मुनि भी आगम वर्णित हैं।
प्रभु भावलिंग कहते इनमें, ये मुनि सुर-नर से अर्चित हैं॥
सामायिक छेदोपस्थापन, द्वय में से इक संयम पालें।
हम उनको पावन अर्घ चढ़ा, निज का भव परिवर्तन टालें॥2॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री संयमसम्पन्नभावलिंगी बकुश साधु परमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री प्रतिसेवना वा कषाय, मुनिवर कुशील के भेद कहें।
अग्रिम चतु संयमधर मुनिवर, निज जड़-चेतन को भेद रहें॥
इनके भी भावलिंग होता, ये उत्तम शिवसुख पाते हैं।
हम इन सम संयम व्रत पाने, बहु मंगल अर्घ चढ़ाते हैं॥3॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री संयमसम्पन्नभावलिंगी कुशील साधु परमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

निज कर्मोदय अप्रकट होय, अग्रिम पल केवलज्ञान वरें।
केवल दर्शन पाने वाले, व्रत यथाख्यात में रमण करें॥
उत्कृष्ट चतुर्दश पूरबधर, निर्ग्रन्थ श्रमण पद पाते हैं।
निर्ग्रंथ महापद को पाने, हम उनको अर्घ चढ़ाते हैं॥4॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री संयमसम्पन्नभावलिंगी निर्ग्रन्थ साधु परमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चउघाति कर्म हरने वाले, अर्हत् स्नातक कहलाते।
अविचार ज्ञान गंगाजल से, वे भव्यन् पातक[1] हर जाते॥
त्रिभुवन आकर उनको पूजें, जयघोष नृत्य गुणगान करें।
हम अर्चन-वंदन-पूजन कर, उन सम वह केवलज्ञान वरें॥5॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री संयमसम्पन्नभावलिंगी स्नातक साधु परमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य (शंभु छंद)

ऋषिवर पुलाक निर्ग्रन्थादिक्, जिन आगम में माने जाते।
पाँचों ही भावलिंग धारी, निज कर्म शत्रु नशते जाते॥
सब तीर्थंकर के तीर्थकाल, सब मुनियों का सद्भाव रहे।
हम उनको अर्घ पुनीत चढ़ा, निज शाश्वत शुद्ध स्वभाव लहें॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री संयमसम्पन्नभावलिंगी पुलाकादि पंचविध साधु परमेष्ठिभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. पाप।

चौबीस तीर्थंकर संबंधी सात मुनिगणों के अर्घ

अथ मंडलस्योपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

(अडिल्ल छंद)

चौदह पूर्व धरें मुनि पूरब धर बने।
जिन तीर्थंकर के पद में निज अघ हने॥
तीर्थंकरों के सप्तगणों की अर्चना।
मुक्ति प्रदाता नाशें कर्म प्रवंचना॥1॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री वृषभादिवीरांत चतुर्विंशति तीर्थंकर संबंधी सर्व पूर्वधर श्रमणेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भव्य प्रसार करें 'शिक्षक' जिन धर्म का।
उनका सेवक अधिकारी शिवशर्म[1] का॥ तीर्थंकरों..॥2॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री वृषभादिवीरांत चतुर्विंशति तीर्थंकर संबंधी सर्व शिक्षक श्रमणेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देशावधि परमावधि सर्वावधि बने।
अवधिज्ञान धारी गुरु मिथ्यामत हने॥ तीर्थंकरों..॥3॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री वृषभादिवीरांत चतुर्विंशति तीर्थंकर संबंधी सर्व अवधिज्ञानी श्रमणेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिनपद पूजक केवलज्ञानी बन गये।
समवशरण से शिवसुख रानी वर गये॥ तीर्थंकरों..॥4॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री वृषभादिवीरांत चतुर्विंशति तीर्थंकर संबंधी सर्व केवलज्ञानी महाश्रमणेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विक्रिय बलधारी भी हो जिन तीर्थ में।
कर्म काट बस जाते वे शिव तीर्थ में॥ तीर्थंकरों..॥5॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री वृषभादिवीरांत चतुर्विंशति तीर्थंकर संबंधी सर्व विक्रिया ऋद्धिधारी श्रमणेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विपुलमति धारी तीर्थंकर पद भजें।
तद्भव में ही निश्चय वे शिवसुख जजें॥ तीर्थंकरों..॥6॥

1. मोक्षसुख।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री वृषभादिवीरांत चतुर्विंशति तीर्थंकर संबंधी सर्व विपुलमति मनःपर्यय ज्ञानधारी श्रमणेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

निर्विवाद वादी मुनि जग में श्रेष्ठ हैं।
वे बतलाते जिन शासन जग ज्येष्ठ हैं॥
तीर्थंकरों के सप्तगणों की अर्चना।
मुक्ति प्रदाता नाशें कर्म प्रवंचना॥7॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री वृषभादिवीरांत चतुर्विंशति तीर्थंकर संबंधी सर्व वादी मुनिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्यं (अडिल्ल छंद)

तीर्थंकर के श्रमण गणों के सात गण।
जिन्हें पूजते त्रिभुवन के सब जीव गण॥
पूर्ण अर्घ ले हम भी गुरु अर्चा करें।
रत्नत्रय पाने नित गुण चर्चा करें॥8॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री वृषभादिवीरांत चतुर्विंशति तीर्थंकर संबंधी पूर्वधरादि सप्त गणेभ्यो पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तपस्वी शैक्ष्य आदि दशविध मुनियों के अर्घ

अथ मंडलस्योपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

(अडिल्ल छंद)

पंचाचारी गुरु 'आचार्य' महान हैं।
श्रमण संघ अधिनायक धर्म प्रमाण हैं॥
दशविध श्रमणों की करते हम वंदना।
अष्ट द्रव्य से करें गुरु की अर्चना॥1॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री आचार्य साधु परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'पाठक' ऋषिवर पठनादिक में रत रहें।
जिनके पद में श्रमणों के शिर नत रहें॥ दशविध..॥2॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री उपाध्याय साधु परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रत्नत्रय वर्द्धन हित सम्यक् 'तप' करें।
पक्ष मास उपवास योग आतप धरें॥
दशविध श्रमणों की करते हम वंदना।
अष्ट द्रव्य से करें गुरु की अर्चना॥3॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री तपस्वी साधु परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'शैक्ष्य' श्रमण जिनश्रुत विद्या अर्जन करें।
ज्ञान सुधा में आतम का मंजन करें॥ दशविध..॥4॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री शैक्ष्य साधु परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्म असाता ग्रस्त श्रमण ही 'ग्लान' हैं।
किन्तु नहीं वे निज चर्या में म्लान[1] हैं॥ दशविध..॥5॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री ग्लान साधु परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

स्थविर श्रमण की संतति 'गण' संज्ञा धरें।
इनके सेवक तप अनुभव प्रज्ञा वरें॥ दशविध..॥6॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री गण साधु परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कहलाता 'कुल' दीक्षित गुरु का शिष्य मत।
कर्म विलय का साधन है श्री सिद्धवत्॥ दशविध..॥7॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री कुल साधु परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्रमणादिक चऊ वर्ण मिले तब 'संघ' हो।
गुरु संगति की भरते पूर्ण तरंग वो॥ दशविध..॥8॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री संघ साधु परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दीर्घप्रवर्जित[2] साधु जगत में धन्य हैं।
इनके सेवक निश्चय से जग वंद्य हैं॥ दशविध..॥9॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री साधु साधु परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

लोकमान्य मुनिवर 'मनोज्ञ' कहला रहे।
जिनवाणी चर्या से धर्म बढ़ा रहे॥ दशविध..॥10॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री मनोज्ञ साधु परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. कमजोर, 2. दीर्घ दीक्षित।

पूर्णार्घ्य (अडिल्ल छंद)

दश मुनियों की सेवा वैयावृत्त से।
पुण्य सृजन हो और कर्म आतप नशे॥
उन मुनियों की हम पूजन वंदन करें।
रत्नत्रय निधि पायें सम्यक् तप वरें॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री आचार्यादि दशविध श्रमणेभ्यो पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

द्वादश अनुप्रेक्षा सम्पन्न श्रमणों के अर्घ

अथ मंडलस्योपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

(कुसुमलता छंद)

यह संसार अनित्य चलाचल, शुद्धातम को शाश्वत जान।
क्षण भंगुर विषयों को तजकर, मुनिवर पायें सम्यक् ज्ञान॥
द्वादश अनुप्रेक्षायें भाकर[1], गुरु करते कर्मों की हान।
गीत नृत्य युत अर्घ चढ़ाकर, हम पायें उन जैसा ज्ञान॥1॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अनित्यानुप्रेक्षा विभूषित श्रमणेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अशरण जग में शरण प्रदाता, हुआ न होगा निश्चय जान।
पंच परम परमेष्ठी पद का, शरणागत बनता भगवान॥ द्वादश..॥2॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अशरणानुप्रेक्षा विभूषित श्रमणेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चारों गति में छल प्रपंच अघ, राग-द्वेष पूरित संसार।
जग निस्सार तजो तप धारो, यह सच्चा जिन आगम सार॥ द्वादश..॥3॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री संसारानुप्रेक्षा विभूषित श्रमणेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

एक अकेला जीव जगत में, सुख-दुःख संकट पीड़ा पाय।
शुक्ल ध्यान धर एकाकी मुनि, स्वयं शिवालय में बस जाय॥ द्वादश..॥4॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री एकत्वानुप्रेक्षा विभूषित श्रमणेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पुद्गल चेतन[2] भिन्न-भिन्न हैं, जीव-जीव से होता भिन्न।
मुनि अन्यत्व भावना भाकर हो जाते निश्चय गत खिन्न[3]॥ द्वादश..॥5॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अन्यत्वानुप्रेक्षा विभूषित श्रमणेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. भावनाएँ, 2.जीव, 3. खिन्न।

अस्थि चर्म युत यह तन चेतन, अशुचि अपावन कष्टद होय।
जड़-चेतन शोधक मुनि ध्यानी, व्यर्थ न इसमें जीवन खोय॥
द्वादश अनुप्रेक्षायें भाकर, गुरु करते कर्मों की हान।
गीत नृत्य युत अर्घ चढ़ाकर, हम पायें उन जैसा ज्ञान॥6॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अशुचित्वानुप्रेक्षा विभूषित श्रमणेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मन-वच-काय परिस्पंदन से, जीव शुभाशुभ आस्रव पाय।
राग-द्वेष मिथ्यादि पंच तज, श्रमण निराश्रव भाव उपाय॥ द्वादश..॥7॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री आश्रवानुप्रेक्षा विभूषित श्रमणेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समिति-गुप्ति-व्रत-त्याग-तपस्या, संवर का शुभ साधन मान।
इनको धर मुनि कर्म निरोधें, करें सकल कर्मों की हान॥ द्वादश..॥8॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री संवरानुप्रेक्षा विभूषित श्रमणेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

संवर के जो हेतु बताये, वही निर्जरा के भी होय।
कर्म निर्जरा करने मुनिवर, ध्यान श्रेणि पर आरूढ़ होय॥ द्वादश..॥9॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री निर्जरानुप्रेक्षा विभूषित श्रमणेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मानव तन सम तीन लोक का, चौदह राजू है आयाम।
इनको तज मुनि धर्म शुक्ल द्वय, ध्यान धरें पायें शिवधाम॥ द्वादश..॥10॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री लोकत्वानुप्रेक्षा विभूषित श्रमणेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दुर्लभ नरतन दुर्लभ जिनकुल, दुर्लभ सम्यक् संयम त्याग।
इन सब में भी बोधि सुदुर्लभ, इसे वरें मुनिवर गत राग॥ द्वादश..॥11॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री बोधिदुर्लभानुप्रेक्षा विभूषित श्रमणेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अनेकांत रत्नत्रय दाता, जैनधर्म ही सच्चा मार्ग।
इसे पूर्ण विध पालें मुनिवर, बतलायें सबको सन्मार्ग॥ द्वादश..॥12॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री धर्मानुप्रेक्षा विभूषित श्रमणेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य (कुसुमलता छंद)

जब श्रमणों पर घोर उपद्रव, परिषह आदिक हो चहुँ ओर।
तब द्वादश अनुप्रेक्षाओं का, चिंतन करते हैं मुनि घोर॥

इसके बल वे सब अघ जीते, पायें दर्शन केवलज्ञान।
उनको निर्मल अर्घ चढ़ा हम, पायें परमातम श्रद्धान॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अनित्यादि द्वादशानुप्रेक्षा विभूषित श्रमणेभ्यो पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

षोडश कारण भावना सम्पन्न मुनियों के अर्घ

अथ मंडलस्योपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

(चौपाई)

दर्शविशुद्धि भाव बनाये, अक्षय सम्यग्दर्शन पायें।
मुनि षोडश कारण व्रत धारें, अर्घ लिए हम चरण पखारें॥1॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री दर्शनविशुद्धिभावना सम्पन्न महामुनिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्रमण पंचविध विनय धरें हैं, सर्व सिद्धी शिव सौख्य वरें हैं॥ मुनि.॥2॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री विनयसंपन्नताभावना सम्पन्न महामुनिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

निरतिचार व्रत शील धरें जो, निर्मल आत्म स्वभाव वरें वो॥ मुनि.॥3॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री शीलव्रतेष्वनतिचारभावना सम्पन्न महामुनिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

साधु अभीक्ष्ण ज्ञान गुण साधें, जैनागम को नित आराधें॥ मुनि.॥4॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अभीक्ष्णज्ञानोपयोगभावना सम्पन्न महामुनिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हैं संवेग जगत् दुःख भीति,उसे धार मुनि तजें अनीति॥ मुनि.॥5॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री संवेगभावना सम्पन्न महामुनिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शक्ति योग्य मुनि त्याग करें हैं, देह[1] जन्य दुःख राग हरे हैं॥ मुनि.॥6॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री शक्तितस्त्यागभावना सम्पन्न महामुनिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

निज समता से करें तपस्या, जिसकी सुरगण करें विवक्षा॥ मुनि.॥7॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री शक्तितस्तपभावना सम्पन्न महामुनिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उत्तम साधु समाधि करावें, साधु समाधि स्वयं भी पावें॥ मुनि.॥8॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री साधुसमाधिभावना सम्पन्न महामुनिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उत्तम तन शुचि भाव वरे हैं, निशदिन वैयावृत्य करे हैं॥ मुनि.॥9॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री वैयावृत्यभावना सम्पन्न महामुनिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. शरीर।

इसविध करते अर्हत् अर्चा, युग युगांत हो जिसकी चर्चा।
मुनि षोडश कारण व्रत धारें, अर्घ लिए हम चरण पखारें॥10॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अर्हत्भक्तिभावना सम्पन्न महामुनिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आचार्यों की कर वे पूजा, बन आचारज पाते पूजा॥ मुनि.॥11॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री आचार्यभक्तिभावना सम्पन्न महामुनिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

बहुश्रुत भक्ति प्रभाव बनाये, द्वादशांग का ज्ञान उपायें॥ मुनि.॥12॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री बहुश्रुतभक्तिभावना सम्पन्न महामुनिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रवचन भक्ति करें मुनि ध्यानी, जिससे बनते केवलज्ञानी॥ मुनि.॥13॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री प्रवचनभक्तिभावना सम्पन्न महामुनिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

षट् आवश्यक निशदिन पालें, अष्ट करम का बंधन टालें॥ मुनि.॥14॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री आवश्यकापरिहाणीभावना सम्पन्न महामुनिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मंत्र साध जिन भक्ति रचावें, जग में धर्म प्रभाव दिखावें॥ मुनि.॥15॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री मार्गप्रभावनाभावना सम्पन्न महामुनिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

धर्मी और धर्म से नेहा[1], करके मुनि वरते शिवगेहा[2]॥ मुनि.॥16॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री प्रवचनवात्सल्यभावना सम्पन्न महामुनिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्यं (शंभु छंद)

केवलि श्रुत केवलि के शरणे, जो षोडश कारण भाते हैं।
पुनि जीव मात्र के मंगल की, उत्कर्ष भावना भाते हैं॥
वे पुण्यवान तीर्थंकर बन, पाँचों कल्याणक पाते हैं।
हम उन सम निज अघ नाशन हित, यह पूरण अर्घ चढ़ाते हैं॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री दर्शनविशुद्धयादिषोडशकारणभावना सम्पन्न महामुनिभ्यो पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

बाईस परिषह जेता साधुओं के अर्घ

अथ मंडलस्योपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

(काव्य छंद)

क्षुत् परिषह बलवान, तन में दाह लगावें।
उसको जीते साधु, आत्म सुखामृत पावें॥

1. स्नेह (वात्सल्य), 2. मोक्षमहल।

बाईस परिषह जीत, मुनिवर कर्म नशावें।
रत्नत्रय निधि हेत, भविजन अर्घ चढ़ावें॥1॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री क्षुधापरिषह जेता साधु परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तृषा जलावे देह, प्राण कण्ठ तक आवें।
मुनिवर हो निर्मोह, उसे जीत सुख पावें॥ बाईस..॥2॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री तृषापरिषह जेता साधु परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चलती झंझावात, हिम[1] तुषार[2] तन गाले[3]।
शीत परिषह जीत, मुनिवर निज अघ टालें॥ बाईस..॥3॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री शीतपरिषह जेता साधु परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उष्ण समीर[4] प्रचण्ड, तन-मन को झुलसाता।
उसे जीत मुनिराज, नाशें कर्म असाता॥ बाईस..॥4॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री उष्णपरिषह जेता साधु परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दंश मशक के दंश, चूसें मुनि की काया।
परिषह जेता साधु, उनमें चित्त समाया॥ बाईस..॥5॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री दंशमशक परिषह जेता साधु परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वस्त्राभूषण त्याग, नग्न रूप मुनि धारें।
मुनि की समता देख, छठवा परिषह हारे॥ बाईस..॥6॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री नाग्न्यपरिषह जेता साधु परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कर एकांत निवास, मुनि समता रस पीते।
कामरोग कर नाश, अरति परिषह जीते॥ बाईस..॥7॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अरतिपरिषह जेता साधु परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विकृत प्रमदा[5] आय, तन यौवन दर्शावे।
उनसे पूर्ण विरक्त, मुनिवर धर्म दिपावें॥ बाईस..॥8॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री स्त्रीपरिषह जेता साधु परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. बर्फ, 2. ओस, 3. गलावे, 4. हवा, 5. स्त्री।

कर चर्या निर्दोष, मुनिवर पाप नशावें।
चर्या परिषह जीत, चिदानंद को पावें॥
बाईस परिषह जीत, मुनिवर कर्म नशावें।
रत्नत्रय निधि हेत, भविजन अर्घ चढ़ावें॥9॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री चर्यापरिषह जेता साधु परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रह मसान[1] उद्यान, दृढ़ दीर्घासन धारें।
परिषह जीत निषद्य, सिद्धासन स्वीकारें॥ बाईस..॥10॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री निषद्यापरिषह जेता साधु परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

निद्रा समय मुनीश, जीव दया चित धारें।
शय्या परिषह जीत, इह परलोक सुधारें॥ बाईस..॥11॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री शय्यापरिषह जेता साधु परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुन अति वचन कठोर, रंच न द्वेष विचारें।
जीते मुनि आक्रोश, त्रिभुवन चरण पखारे॥ बाईस..॥12॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री आक्रोशपरिषह जेता साधु परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शस्त्रादिक ले दुष्ट, मुनि के तन को भेदें।
वध परिषह जय नाथ, कर्म जाल को छेदें॥ बाईस..॥13॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री वधपरिषह जेता साधु परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

करें न याञ्चा[2] लेश, औषध-जल-भोजन की।
याञ्चा परिषह जीत, राह वरें सिद्धन् की ॥ बाईस..॥14॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री याचना परिषह जेता साधु परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

यदि न होवे लाभ, योग्य शिष्य आदिक् का।
परिषह जीत अलाभ, दोष हरें कर्मन का ॥ बाईस..॥15॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अलाभ परिषह जेता साधु परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मुनि तन में बहु रोग, प्राण घातने आवे।
धन्य-धन्य मुनिराज, साम्यभाव दर्शावे ॥ बाईस..॥16॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री रोग परिषह जेता साधु परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. श्मशान, 2. माँगना।

तृण कंकण वा शूल, बींधे तन आदिक को।
परिषह तृण-स्पर्श, जीतें मुनि व्याधि को॥
बाईस परिषह जीत, मुनिवर कर्म नशावें।
रत्नत्रय निधि हेत, भविजन अर्घ चढ़ावें॥17॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री तृणस्पर्शपरिषह जेता साधु परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रज[1] आतप[2] वा स्वेद[3], तन में मल उपजावें।
तप जल से मुनिराज, आत्म मैल विनशावें॥ बाईस..॥18॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री मलपरिषह जेता साधु परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तप व्रत कला प्रवीण, जिनमत ध्वज फहरावें।
मिले न जब सत्कार, गुरु समता उपजावें॥ बाईस..॥19॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सत्कारपुरस्कार परिषह जेता साधु परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रज्ञावान मुनीश जब सत्कार न पावें।
प्रज्ञा परिषह जीत, व्यर्थ मान विनशावें॥ बाईस..॥20॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री प्रज्ञापरिषह जेता साधु परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अल्प बुद्धि मुनिराज, नहीं जिनागम ज्ञाता।
ये परिषह अज्ञान, सहते मुनि जग त्राता॥ बाईस..॥21॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अज्ञानपरिषह जेता साधु परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दिखे न तप का लाभ, तब मुनि शल्य न धारें।
दर्श विशुद्धि सम्हार, तीर्थ पुण्य स्वीकारें॥ बाईस..॥22॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अदर्शनपरिषह जेता साधु परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य (हरिगीता छंद)

बाईस परिषह जीत मुनिवर, काटते भव श्रृंखला।
हो लीन निज शुद्धात्म में वे, पा रहे गुण श्रृंखला॥
ऐसे महा मुनिराज की हम, भक्ति से अर्चा करें।
वसु द्रव्य श्रद्धा से चढ़ा भवि, नित्य अभ्यर्चा करें॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री क्षुधादि द्वाविंशति परिषह जेता साधु परमेष्ठिभ्यो पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. धूल, 2. धूप, 3. पसीना।

अट्ठाइस मूलगुणधारी साधुओं के अर्घ

अथ मंडलस्योपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

(शंभु छंद)

षट्काय जीव रक्षा करने, मुनि पूर्ण अहिंसा व्रत धारें।
निज चर्या में मन-वच-तन से, परिपूर्ण प्राणि वध परिहारें॥
जो आठ बीस गुण के धारी, कर्मांत करें शिव सुख पावें।
ऐसे मुनिवर की अर्चा कर, हम भी उन सम व्रत अपनावें॥1॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अहिंसा महाव्रत धारक साधु परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिन आगम को ही नयन बना, श्रुत सिद्ध वाक्य ऋषिवर बोलें।
सुन सत्य महाव्रत युत वाणी, श्रावक मन शिवपथ पर दौड़े॥ जो..॥2॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सत्य महाव्रत धारक साधु परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पर द्रव्य हरण का चिन्तन भी, जिनको ना रंच सुहाता है।
वे मुनि अचौर्य व्रत के धारी, उनको मन शीश झुकाता है॥ जो..॥3॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अचौर्य महाव्रत धारक साधु परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पर द्रव्य मात्र का रमण तजें, निज आत्म रमण में तन्मय हो।
चौरासी लख व्रत शील भजें, मुनिराज ध्यान में तन्मय हो॥ जो आठ..॥4॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री ब्रह्मचर्य महाव्रत धारक साधु परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

निज देह तीन उपकरण सिवा, अन्तर बहि परिग्रह छोड़ दिया।
घर शुक्ल ध्यान श्रेणी मांडे, निज मन को जग से मोड़ लिया॥ जो आठ..॥5॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अपरिग्रह महाव्रत धारक साधु परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गुरु दर्शन तीर्थाटन आदिक्, शुभ हेतुक श्रमण विहार करें।
तब ईर्या पथ से चल यतिवर, प्राणीवध का परिहार करें॥ जो आठ... ॥6॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री ईर्यासमितिधारक साधु परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उपदेश पठन पाठन के हित, निर्ग्रन्थ वचन व्यवहार करें।
तब हितमित भाषा समिती से, हर प्राणी का उद्धार करें॥ जो आठ...॥7॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री भाषासमितिधारक साधु परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रत्नत्रय धर्माराधन हित, अनगार शुद्ध आहार करें।
तब समिति ऐषणा को पालें, दाता का भी उद्धार करें॥
जो आठ बीस गुण के धारी, कर्मांत करें शिवसुख पावें।
ऐसे मुनिवर की अर्चा कर, हम भी उन सम व्रत अपनावें॥8॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री ऐषणासमितिधारक साधु परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उपकरण उठाने रखने में, षट्काय जीव हिंसा टालें।
गुरु आज्ञा व निर्देशन में, वे मुनिवर पाँच समिति पालें॥ जो आठ... ॥9॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री आदान निक्षेपण समितिधारक साधु परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मलमूत्र विसर्जन आदिक् में, व्युत्सर्ग समिती अघहारी।
रवि आगम नयन त्रियोगों से, ऋषिवर पालें व्रत सुखकारी॥ जो आठ...॥10॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री व्युत्सर्गसमितिधारक साधु परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

काया इन्द्रिय से प्रेरित सब, विषयाशा मुनिवर ने त्यागी।
कच्छप[1] सम इन्द्रिय संकोचें, शुद्धात्म शील जिन गतरागी॥ जो आठ..॥11॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री स्पर्शनेन्द्रिय निरोध व्रत धारक साधु परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

षट्रस में जो रसना माँगे, निस्पृह यति उसके ही त्यागी।
रसनेन्द्रिय का करते निरोध, ऋषिराज आत्म सुख के भागी॥ जो आठ..॥12॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री रसनेन्द्रिय निरोध व्रत धारक साधु परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

घ्राणेन्द्रिय की विषयाशा को, संयमचित् यतिवर ने रोका।
अति दुष्कर श्रमण साधना में, निज तन मन आतम को झोंका॥ जो आठ..॥13॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री घ्राणेन्द्रिय निरोध व्रत धारक साधु परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नैना चाहे जग का विलास, पर नेत्र पटल मुनि बन्द करें।
निज ही निज में निज के द्वारा, चैतन्य जन्य पीयूष वरें॥ जो आठ...॥14॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री चक्षुरेन्द्रिय निरोध व्रत धारक साधु परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

यतिवर प्रज्ञा छैनी लेकर, इन्द्रिय वांछा का अंत करें।
श्रवणेन्द्रिय की भौतिक कांक्षा, उपदेशामृत से शांत करें॥ जो आठ... ॥15॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री कर्णेन्द्रिय निरोध-व्रतधारक साधु परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. कछुआ।

सुख-दुःख आदिक सब बेला में, समताधर समता भाव धरें।
त्रय संध्या में शुचि ध्यान धरें, निश्चल होकर समभाव वरें॥
जो आठ बीस गुण के धारी, कर्मांत करें शिवसुख पावें।
ऐसे मुनिवर की अर्चा कर, हम भी उन सम व्रत अपनावें॥16॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री समता आवश्यकधारक साधु परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मुनि चौबीसों तीर्थेश्वर की, सिद्धान्त पूर्ण अर्चा करते।
लय ताल छंद युत प्रस्तुति की, भवि जीव सदा चर्चा करते॥ जो आठ...॥17॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री स्तव आवश्यकधारक साधु परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पाँचों परमेष्ठी या इक को, वन्दन कर पुण्य कमाते हैं।
सर्वार्थ भरी रचना सुनकर, मुनि चरणों में सब आते हैं॥ जो आठ...॥18॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री वंदना आवश्यकधारक साधु परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

साधक निशदिन प्रतिक्रमण करें, निज पापों का निष्क्रमण करें।
परमार्थ लीन निर्मल योगी, परमात्म सूत्र में रमण करें॥ जो आठ...॥19॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री प्रतिक्रमण आवश्यकधारक साधु परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिन शास्त्र कथित प्रत्याख्यानी, संवर करते निज कर्मों का।
शुभ योग लीन वे श्रमण सदा, संचय करते दश धर्मों का॥ जो आठ...॥20॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री प्रत्याख्यान आवश्यकधारक साधु परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिन मुनि ने काय ममत्व तजा, कायोत्सर्गासन को धारा।
उपसर्ग और परिषह जयकर, षट् आवश्यक व्रत स्वीकारा॥ जो आठ...॥21॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री कायोत्सर्ग आवश्यकधारक साधु परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मध्योत्तम जघन् त्रिकालों में, गुरु लोंच करे निज केशों का।
निर्ग्रंथ श्रमण पद के धारी, परित्याग करें सब क्लेशों का॥ जो आठ...॥22॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री केशलोचन विशेषगुणधारक साधु परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आभूषण केश वसन गृह तज, मुनि नग्न दिगम्बर वेष धरें।
सब द्रव्यभाव परिग्रह तजकर, जिनआगम का उपदेश करें॥ जो आठ.॥23॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अचेल गुणधारक साधु परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अस्नान महागुणधर मुनिवर, मंत्रों से शुचिता करते हैं।
निज आत्म रमण में रत रहकर, पतितों को पावन करते हैं॥
जो आठ बीस गुण के धारी, कर्मांत करें शिवसुख पावें।
ऐसे मुनिवर की अर्चा कर, हम भी उन सम व्रत अपनावें॥24॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अस्नान गुणधारक साधु परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुरभित मखमल शयनासन तज, निरवद्य[1] धरा पर शयन करें।
अत्यल्प काल निद्रा लेकर, अवशेष समय श्रुत रमण करें॥ जो आठ...॥25॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री क्षिति शयन गुणधारक साधु परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ऋषिवर अदन्त धावन व्रत ले, तन की सुन्दरता नष्ट करें।
तप तेज पुञ्ज ध्यानानल में, दुःख नष्ट करें भव कष्ट हरें॥ जो आठ...॥26॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अदन्तधावन गुणधारक साधु परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

यति ग्लान वृद्ध बालक शिक्षक, इक बार खड़े आहार करें।
निज पद युग संबल[2] नशते ही, जल भोजन का परिहार करें॥ जो आठ...॥27॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री स्थिति भोजन गुणधारक साधु परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आजन्म एक भुक्ति व्रत ले, इन्द्रिय तन मन का शमन करें।
इस विध मुनि अट्ठाइस व्रत से, आठों कर्मों का दमन करें॥ जो आठ...॥28॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री एकभुक्ति गुणधारक साधु परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य (शंभु छंद)

धर पंच महाव्रत समिति पंच, मुनि पञ्चेन्द्रिय रोधन करते।
षट् आवश्यक गुण सात वरें, निज आतम का शोधन करते॥
छठवे से चौदह गुणस्थान, मुनिराजों के बतलायें हैं।
उन सम रत्नत्रय गुण पाने, हम अर्घ समुच्चय लाये हैं॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अष्टाविंशति मूलगुणधारक साधु परमेष्ठिभ्यो पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. निर्दोष, 2. पैरों की शक्ति।

चौंसठ ऋद्धि सम्पन्न ऋषियों के अर्घ

अथ मंडलस्योपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

(चौपाई आँचली बद्ध)

बुद्धि ऋद्धि के अठदस भेद, अवधिज्ञान है पहला भेद।
वरें मुनिराय, मन हर्षे ऋषि के गुण गाय।।
चौंसठ ऋद्धि धरें मुनिराज, उनको पूजें भव्य समाज।
भजो मुनिराय, मन हर्षे ऋषि के गुण गाय।।1।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अवधिज्ञान बुद्धि ऋद्धिधारक परम ऋषिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मनःपर्यय अति सूक्षमज्ञेय, इसके मूर्तिक द्रव्य प्रमेय।
वरें मुनिराय, मन हर्षे ऋषि के गुण गाय।। चौंसठ...।।2।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री मनःपर्ययज्ञान बुद्धि ऋद्धिधारक परम ऋषिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सब ज्ञेयों का युगपत् ज्ञान, करें मात्र इक केवलज्ञान।
वरें मुनिराय, मन हर्षे ऋषि के गुण गाय।। चौंसठ...।।3।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री केवलज्ञान बुद्धि ऋद्धिधारक परम ऋषिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

संख्य शब्द के अर्थ अनंत, बीज पदों सह लिंग अनंत।
वरें मुनिराय, मन हर्षे ऋषि के गुण गाय।। चौंसठ...।।4।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री बीज बुद्धि ऋद्धिधारक परम ऋषिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कोष्ठ बुद्धि की महिमा भिन्न, मिश्रण बिन जाने गत खिन्न।
वरें मुनिराय, मन हर्षे ऋषि के गुण गाय।। चौंसठ...।।5।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री कोष्ठ बुद्धि ऋद्धिधारक परम ऋषिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इक पद सुन पावें सब ज्ञान, पदानुसारिणि बुद्धि महान।
वरें मुनिराय, मन हर्षे ऋषि के गुण गाय।। चौंसठ...।।6।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पदानुसारिणी बुद्धि ऋद्धिधारक परम ऋषिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

संभिन्न श्रोतृत्व बुद्धि महान, योगी जन का यह वरदान।
वरें मुनिराय, मन हर्षे ऋषि के गुण गाय।। चौंसठ...।।7।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री संभिन्न श्रोतृत्व बुद्धि ऋद्धिधारक परम ऋषिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(चौपाई)

कायेन्द्रिय की सीमा आगे, दूरस्पर्श ऋद्धिधर लांघें।
उन मुनियों को अर्घ चढ़ायें, ऋषि पूजाकर ऋषिगुण पायें।।8।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री दूरस्पर्शित्व ऋद्धिधारक परम ऋषिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रसनेन्द्रिय का क्षेत्र अपारा, दूरास्वादी उसके पारा।
नाना रस स्वादों को जाने, ऐसे गुरु को हम श्रद्धानें।।9।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री दूरास्वादित्व ऋद्धिधारक परम ऋषिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

घ्राणेन्द्रिय का विषय विशाला, दूर घ्राण ने उसे संभाला।
दूरघ्राण ऋद्धिधर पूजें, भव-भव के अघ से हम छूटें।।10।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री दूरघ्राणत्व ऋद्धिधारक परम ऋषिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

निज दर्शन से कर्म नशाया, दूरदर्शी ऋद्धि को पाया।
ऐसे गुरु को अर्घ चढ़ायें, उन सम रत्नत्रय गुण पायें।।11।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री दूरदर्शित्व ऋद्धिधारक परम ऋषिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दूर श्रवण ऋद्धि जब आये, असंख्य योजन पार सुनाये।
नर पशु खग[1] आदिक की वाणी, जाने ऋषिवर आतम ध्यानी।।12।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री दूरश्रवणत्व ऋद्धिधारक परम ऋषिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दश पूर्वित्व ऋद्धि जब आये, सब विद्यायें आ ललचायें।
पर जिन गुरु को लोभ न आवे, उनको हम सब अर्घ चढ़ावें।।13।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री दश पूर्वित्व ऋद्धिधारक परम ऋषिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ज्ञानी गुरु की सेवा पायी, चौदह पूर्व ऋद्धि विकसायी।
द्वादशांग सर्वागम जाना, उन ऋषिवर को अर्घ चढ़ाना।।14।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री चतुर्दश पूर्वित्व ऋद्धिधारक परम ऋषिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ज्योतिष सामुद्रिक शकुनादी, जानें ऋषि जिन आगमवादी।
महा अष्टांग निमित्त के ज्ञाता, हरें भक्त की सर्व असाता।।15।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अष्टांग महानिमित्त ऋद्धिधारक परम ऋषिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. पक्षी।

(काव्य छंद)

बिन आगम अभ्यास, द्वादशांग गुरु जाने।
कर निज कर्म विनाश, चौदह पूर्व बखाने॥
प्रज्ञाश्रमण सुऋद्धि, ऐसे ऋषिवर पावें।
उनका चिन्तन मात्र, ज्ञानावरण नशावें॥16॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री प्रज्ञाश्रमण ऋद्धिधारक परम ऋषिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

बिन गुरु के उपदेश, क्षयोपशम तप बल से।
ऋद्धि बुद्धि प्रत्येक, परम श्रमण के विकसे॥
ऋषि इसका उपयोग, आत्मध्यान में करते।
हम इनके पद पूज, निज भव वर्तन हरते॥17॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री प्रत्येक बुद्धि ऋद्धिधारक परम ऋषिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

त्रय शत त्रैसठ पंथ, आदि अनेक प्रवादी।
वाद कुशल मुनिराज, हरते इनकी व्याधी॥
पर मत के गुण दोष, आप निमिष में जाने।
हम इनके पद पूज, तत्त्व कुतत्त्व पिछाने॥18॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री वादित्व ऋद्धिधारक परम ऋषिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

परम सूक्ष्म अणु छिद्र, उसमें श्रमण प्रविष्टे।
करें विक्रिया आप, सब भवि के मन तिष्ठे॥
अणिमा ऋद्धि महान, तप बल से ऋषि धारें।
उनको पूजें भव्य, निज भव भ्रमण निवारें॥19॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अणिमा ऋद्धिधारक परम ऋषिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मेरु तुल्य ऋषिकाय, महिमा ऋद्धि करावें।
विष्णु मुनीश समान, धर्म प्रभाव बढ़ावे॥
महिमा ऋद्धि महान्, तप बल से ऋषि धारें।
उनको पूजें भव्य, निज भव भ्रमण निवारें॥20॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री महिमा विक्रिया ऋद्धिधारक परम ऋषिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वायु से लघु देह, लघिमा धर कर लेते।
करके सद्उपयोग, कर्म भार हर लेते॥
लघिमा ऋद्धि महान्, तब बल से ऋषि धारें।
उनको पूजें भव्य, निज भव भ्रमण निवारें॥21॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री लघिमा विक्रिया ऋद्धिधारक परम ऋषिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मेरू तुल्य बहु भार, श्रमण करें निज तन का।
कर्म शैल[1] को चूर, रूप बढ़े आतम का॥
गरिमा ऋद्धि महान्, तप बल से ऋषि धारें।
उनको पूजें भव्य, निज भव भ्रमण निवारें॥22॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री गरिमा विक्रिया ऋद्धिधारक परम ऋषिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भूमिस्थित ऋषिराज, शशि[2] दिनकर[3] को पावें।
कर अंगुलि विस्तार, मेरु चूल[4] पर जावें॥
प्राप्ति विक्रिया ऋद्धि, तप बल से ऋषि धारें।
उनको पूजें भव्य, निज भव भ्रमण निवारें॥23॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री प्राप्तिविक्रिया ऋद्धिधारक परम ऋषिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जल सम पृथ्वी बीच, डुबकी श्रमण लगावें।
भू सम जल के बीच, सहज गमन कर जावें॥
यह ऋद्धि प्राकाम्य, तप बल से ऋषि धारें।
उनको पूजें भव्य, निज भव भ्रमण निवारें॥24॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री प्राकाम्य विक्रिया ऋद्धिधारक परम ऋषिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जग पर अमिट प्रभुत्व, गुण ईशत्व कराता।
श्रेष्ठ ऋद्धि ईशत्व, वरें श्रमण सुख दाता॥
महा ऋद्धि ईशत्व, तप बल से ऋषि धारें।
पूजा करते भव्य, निज भव भ्रमण निवारें॥25॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री ईशत्व विक्रिया ऋद्धिधारक परम ऋषिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. पहाड़, 2. चन्द्रमा, 3. सूर्य, 4. पहाड़ की चोटी।

वश में हो त्रयलोक, गुरु के तप गुण गावे।
कर गुरु का जयघोष, परम पुण्य उपजावे॥
ऋद्धि वशित्व महान, तप बल से ऋषि धारें।
पूजा करते भव्य, निज भव भ्रमण निवारें॥26॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री वशित्व विक्रिया ऋद्धिधारक परम ऋषिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वज्र-पटल-शिल[1]-शैल, वृक्षादिक पर चलते।
छेदन प्राणविघात, किये बिना अघ टलते॥
ऋद्धि अप्रतिघात, तप बल से ऋषि धारें।
पूजा करते भव्य, निज भव भ्रमण निवारें॥27॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अप्रतिघात विक्रिया ऋद्धिधारक परम ऋषिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हो ऋषि अंतर्धान, धर्म प्रभाव बढ़ावें।
रह सब जग के बीच, सबको ना दिख पावें॥
ऋद्धि अंतर्धान, तप बल से ऋषि धारें।
पूजा करते भव्य, निज भव भ्रमण निवारें॥28॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अंतर्धान विक्रिया ऋद्धिधारक परम ऋषिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इक क्षण में बहु रूप, प्रकट करे अभिरामा[2]।
अनुपम रूप निहार[3], हारे मन्मथ[4] रामा[5]॥
काम रूप शुचि ऋद्धि, तप बल से ऋषि धारें।
पूजा करते भव्य, निज भव भ्रमण निवारें॥29॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री कामरूप विक्रिया ऋद्धिधारक परम ऋषिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(नरेन्द्र छंद)

नभ तल गामी चारण ऋद्धी, तप बल से ऋषिवर धारें।
बैठे या खड्गासन विचरें, रागद्वेष दुःख परिहारें॥
परम शुद्ध निर्ग्रन्थ श्रमण को, नभ चारण ऋद्धी होवे।
उन ऋषियों को अर्घ चढ़ा हम, सर्व कर्म बंधन खोवें॥30॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री नभस्तल गामित्व चारण ऋद्धिधारक परम ऋषिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. चट्टान, 2. सुन्दर, 3. देखकर, 4. कामदेव, 5. स्त्री।

जल में चले धरावत मुनिवर, जल जीवों का घात न हो।
जल जीवों से ऋषिवर का भी, किंचित् प्रत्याघात न हो॥
परम शुद्ध निर्ग्रन्थ श्रमण को, जल चारण ऋद्धी होवे।
उन ऋषियों को अर्घ चढ़ा हम, सर्व कर्म बंधन खोवें॥31॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री जलचारण ऋद्धिधारक परम ऋषिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पृथ्वी से चतुरंगुल ऊपर, नभ तल में गुरु अधर चले।
जंघा पर द्वय हाथ रखे वे, निराघात निर्बाध चले॥
परम शुद्ध निर्ग्रन्थ श्रमण को, ऋद्धि जानु चारण होवे।
उन ऋषियों को अर्घ चढ़ा हम, सर्व कर्म बंधन खोवें॥32॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री जंघाचारण ऋद्धिधारक परम ऋषिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वनस्पति फल फूल पत्र पे, पदयुग धर गुरुदेव चलें।
जीव घात पर रंच न होवे, दयामूर्ति निजकर्म दलें॥
पत्र-पुष्प-फल-चारण ऋद्धि, महाश्रमण को ही होवे।
उन ऋषियों को अर्घ चढ़ा हम, सर्व कर्म बंधन खोवें॥33॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री फल-पुष्प-पत्र चारण ऋद्धिधारक परम ऋषिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अग्निशिखा पर चले श्रमण जब, रंच जीव बाधा ना हो।
धूम[1]श्रेणी पर श्रमण गमन लख, जग जीवों को अचरज हो॥
अग्नि-धूम चारण यह ऋद्धि, श्रमण मात्र को ही होवे।
उन ऋषियों को अर्घ चढ़ा हम, सर्व कर्म बंधन खोवें॥34॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अग्निधूम चारण ऋद्धिधारक परम ऋषिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मेघ[2]पटल पर चले श्रमण वर, जल कायिक हिंसा ना हो।
कोई नीर[3] धार पे चलते, फिर भी पूर्ण अहिंसा हो॥
मेघचरण-धारा-चारण यह, ऋद्धि श्रमण को ही होवे।
उन ऋषियों को अर्घ चढ़ा हम, सर्व कर्म बंधन खोवें॥35॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री मेघचारण ऋद्धिधारक परम ऋषिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. धुआँ, 2. बादल, 3. बारिस की धार।

मकड़जाल हल्के तंतु पर, सरल सहज गुरु गमन करें।
जिनकी निर्मल चर्या लखकर, जीव मोह का वमन करें॥
शुद्ध पुण्य निर्ग्रन्थ श्रमण को, ऋद्धि तंतु चारण होवे।
उन ऋषियों को अर्घ चढ़ा हम, सर्व कर्म बंधन खोवें॥36॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री तंतुचारण ऋद्धिधारक परम ऋषिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रवि-शशि आदिक की किरणों के, आश्रय श्री मुनिराज चलें।
उसमें रंच न जीव घात हो, जिससे वे निज कर्म दलें।
ज्योतिश्चारण ऋद्धि पुण्य से, तपनिधि श्रमणों को होवे।
उन ऋषियों को अर्घ चढ़ा हम, सर्व कर्म बंधन खोवें॥37॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री ज्योतिश्चारण ऋद्धिधारक परम ऋषिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मारुत्चारण वायुश्रेणि पर, सुन्दर रीत विहार करें।
रंच न वायुकायिक घाते, सर्व पाप परिहार करें॥
मारुत चारण पूत[1] ऋद्धि भी, तप निधि श्रमणों को होवे।
उन ऋषियों को अर्घ चढ़ा हम, सर्व कर्म बंधन खोवें॥38॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री मरुच्चारण ऋद्धिधारक परम ऋषिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(कुसुमलता छन्द)

सप्त भेदयुत तपऋद्धि में, पहला उग्र तपस्या जान।
व्रत उपवास आदि से भूषित, करें सर्व पापों की हान॥
ऋद्धि उग्र तपधर हम पूजें, विनशे कर्मज सर्व विकार।
सर्वश्रमण का आराधन कर, पायें रत्नत्रय संस्कार॥39॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री उग्रतप ऋद्धिधारक परम ऋषिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

बहु विध उपवासों के बल से, ऋद्धि दीप्त तप का हो लाभ।
निराहार बल तेज वृद्धि नित, क्षुत तृष्णा कृत नहिं संताप॥
ऋद्धि दीप्त तपधर हम पूजें, विनशे कर्मज सर्व विकार।
सर्वश्रमण का आराधन कर, पायें रत्नत्रय संस्कार॥40॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री दीप्ततप ऋद्धिधारक परम ऋषिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. पवित्र।

तप्त लोह पर नीर विलय सम, हो अहार पर नहीं निहार।
सप्त धातु भी बढ़े न जिससे, विकसे तप बल वीर्य अपार॥
ऋद्धि तप्त तपधर हम पूजें, विनशे कर्मज सर्व विकार।
सर्वश्रमण का आराधन कर, पायें रत्नत्रय संस्कार॥41॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री तप्ततप ऋद्धिधारक परम ऋषिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अणिमादिक चारण ऋद्धी युत, करते नानाविध उपवास।
चार ज्ञान के धारी होंवे, करें निरन्तर आत्म प्रवास॥
ऋद्धि महा तपधर हम पूजें, विनशे कर्मज सर्व विकार।
सर्वश्रमण का आराधन कर, पायें रत्नत्रय संस्कार॥42॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री महातप ऋद्धिधारक परम ऋषिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उग्र-उग्र तप में तत्पर हो, धरें भयानक वन में योग।
व्याधि ग्रस्त तन से निर्मोही, करें वृक्षमूलादिक योग॥
ऋद्धि घोर तपधर हम पूजें, विनशे कर्मज सर्व विकार।
सर्वश्रमण का आराधन कर, पायें रत्नत्रय संस्कार॥43॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री घोरतप ऋद्धिधारक परम ऋषिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिस ऋद्धि से लोक दहन, सागर शोषण में पूर्ण समर्थ।
परम दया धर निर्मल साधक, किन्तु न करते यह दुष्कृत्य॥
घोर पराक्रम तपधर पूजें, विनशे कर्मज सर्व विकार।
सर्वश्रमण का आराधन कर, पायें रत्नत्रय संस्कार॥44॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री घोर पराक्रम तप ऋद्धिधारक परम ऋषिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांत श्रमण जो समिति गुप्तिधर, पंच व्रतों का कर प्रतिपाल।
कलह रोग दुर्भिक्ष नशायें, आत्म ब्रह्म में करें विहार॥
ऋद्धि अघोर ब्रह्मचारी को, पूजें विनशे कर्म विकार।
सर्वश्रमण का आराधन कर, पायें रत्नत्रय संस्कार॥45॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अघोर ब्रह्मचारित्व तप ऋद्धिधारक परम ऋषिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(गीता छंद)

बल ऋद्धि के त्रय भेद हैं, उसमें प्रथम मनबल बना।
अन्तर्मुहूरत में करें सम्पूर्ण श्रुत की वाचना।।
बलऋद्धि धर ऋषिराज को पूजें यहाँ हम भाव से।
त्रय रत्न के शुभ लाभ हित हम भक्ति करते चाव से।।46।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री मनोबल ऋद्धिधारक परम ऋषिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

घटिका युगल में जो श्रमण सम्पूर्ण श्रुत उच्चारते।
द्वादश जिनागम ज्ञान को निर्दोष वे आचारते।।
वचऋद्धि धर ऋषिराज को पूजें यहाँ हम भाव से।
त्रय रत्न के शुभ लाभ हित हम भक्ति करते चाव से।।47।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री वचनबल ऋद्धिधारक परम ऋषिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ऋतु मास वा इक वर्ष तक दुर्धर विषम आसन धरें।
तन से जगत कम्पा सके किन्तु परम करुणा धरें।।
तनऋद्धि बल निर्मद वरें ऋषिवर निराकुल भाव से।
त्रय रत्न के शुभ लाभ हित हम भक्ति करते चाव से।।48।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री कायबल ऋद्धिधारक परम ऋषिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अठ भेद औषधि ऋद्धि के आमर्श औषधि आदि हैं।
मुनि तन विसर्जित आम भी हरती जगत की व्याधि है।।
आमर्श औषधि ऋद्धिधर को अर्चते अघ शांत हो।
सब व्याधियाँ क्षण में नशें मम वास फिर लोकांत हो।।49।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री आमर्शौषधि ऋद्धिधारक परम ऋषिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ऋषिराज के तप तेज से कफ क्ष्वेल औषधि बन गये।
सर्वांग के दुःखद भयानक रोग संकट हन गये।।
श्री क्ष्वेलऔषधि ऋद्धिधर को अर्चते अघ शांत हो।
सब व्याधियाँ क्षण में नशें मम वास फिर लोकांत हो।।50।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री क्ष्वेलौषधि ऋद्धिधारक परम ऋषिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तन स्वेद जल्लौषध बने ऋषि की तपस्या त्याग से।
सब व्याधि दारुण नाश हो ऋषि के चरण अनुराग से।।
ऋद्धीश श्री जल्लौषधि को अर्चते अघ शांत हो।
सब व्याधियाँ क्षण में नशें मम वास फिर लोकांत हो।।51।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री जल्लौषधि ऋद्धिधारक परम ऋषिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिन साधु के कर्णादि के मल औषधि बन शोभते।
आरोग्य या रोगार्त जन द्वय विध जगत को लोभते।।
मलौषधि ऋद्धीश ऋषि को अर्चते अघ शांत हो।
सब व्याधियाँ क्षण में नशें मम वास फिर लोकांत हो।।52।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री मलौषधि ऋद्धिधारक परम ऋषिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिस ऋद्धिबल से श्रमण के मलमूत्र औषध हो गये।
जिसको लगे शुचि वायु कण भी रोग संकट नश गये।।
विड् औषधि ऋद्धीश ऋषि को अर्चते अघ शांत हो।
सब व्याधियाँ क्षण में नशें मम वास फिर लोकांत हो।।53।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री विडौषधि ऋद्धिधारक परम ऋषिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिन साधु को छूकर चली वह वायु औषधि रूप हो।
ऐसे श्रमण को पूजकर भवि कामदेव स्वरूप हो।।
सर्वौषधि ऋद्धीश ऋषि को अर्चते अघ शांत हो।
सब व्याधियाँ क्षण में नशें मम वास फिर लोकांत हो।।54।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सर्वौषधि ऋद्धिधारक परम ऋषिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिनके वचन आशीष से सब द्रव्य निर्विषता धरें।
सब रोग पीड़ित जीव को वे पूर्णतम निर्विष करें।।
आशीषनिर्विष ऋद्धिधर को पूजते अघ शांत हो।
सब व्याधियाँ क्षण में नशें मम वास फिर लोकांत हो।।55।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री मुख निर्विष ऋद्धिधारक परम ऋषिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ऋषि के नयनगोचर हुए सब जीव निर्विष स्वस्थ हो।
विष युक्त मारी भी नशे सब व्याधि संकट अस्त हो॥
श्री दृष्टिनिर्विष ऋद्धिधर को पूजते अघ शांत हो।
सब व्याधियाँ क्षण में नशें मम वास फिर लोकांत हो॥56॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री दृष्टिनिर्विष ऋद्धिधारक परम ऋषिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(अडिल्ल छंद)

आशीर्विष ऋद्धीश मरो यदि वच कहें।
साधु वचन से जीवों की आयु दहे॥
किन्तु कभी ना ऋषि मारक वच बोलते।
उनको पूजत हम भी शिवपट खोलते॥57॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री आशीर्विष ऋद्धिधारक परम ऋषिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दृष्टिविष ऋद्धीश कुपित हो देख लें।
सर्व जीव आयु तज पर भव को चलें॥
किन्तु श्रमण ना ऐसी दुर्जनता करें।
उनको पूजें हम निज आतम सुख वरें॥58॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री दृष्टिविष ऋद्धिधारक परम ऋषिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्रमण हस्तगत रुक्ष[1] विरस आहार हो।
ऋद्धि पुण्य से शीघ्र क्षीर[2]रस युक्त हो॥
इस विध क्षीरस्रावी मुनि जगख्यात हो।
हम भी उनको पूजें तप निष्णात हों॥59॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री क्षीरस्रावी ऋद्धिधारक परम ऋषिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ऋषि की अंजलिपुट में रूखा भोज्य हो।
ऋद्धि तेज से मिष्ट मधुरतम योग्य हो॥
मधुस्रावी धर मुनि के वचन सुहावने।
उनको पूजत यह जीवन उन सम बने॥60॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री मधुस्रावी ऋद्धिधारक परम ऋषिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. रूखा, 2. दूध।

ऋषि के करपुट में विष मिश्रित अन्न हो।
ऋद्धि तेज से वह अमृत बन धन्य हो॥
अमृतस्रावी ऋषिवच अमृत रूप हो।
उनको पूजें पायें आत्म स्वरूप को॥61॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अमृतस्रावी ऋद्धिधारक परम ऋषिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नीरस भोजन यति के कर पुट में रखा।
सर्पिषस्रावी ने उसको घृत[1]मय भखा[2]॥
सर्पिष[3]मय श्रुतसार युक्त उनके वचन।
उनको पूजें पायें उन सम आचरण॥62॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सर्पिषस्रावी ऋद्धिधारक परम ऋषिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मुनि अक्षीण महानस[4] जहाँ आहार लें।
चक्रि सैन्य व अन्य मनुज तहँ जीमलें॥
संध्या पूर्व वहाँ ना अन्नाभाव हो।
उनको पूजत नहि दुष्काल प्रभाव हो॥63॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अक्षीण महानस ऋद्धिधारक परम ऋषिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अक्षीणालय ऋषि के पड़ें जहाँ चरण।
तहँ निर्बाध रहें सुर चक्रि सैन्य नर॥
अल्प क्षेत्र में जीव असंख्यों तिष्ठते।
उनको पूजत हम भी शिवपुर तिष्ठते॥64॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अक्षीण आलय ऋद्धिधारक परम ऋषिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य (शंभु छंद)

बुध्यादिक् चौंसठ ऋद्धीधर, मुनि तीर्थद गणधर होते हैं।
कुछ और श्रमण सब ऋद्धी में, कुछ-कुछ ऋद्धीधर होते हैं॥
हम उनके तप गुण मन में रख, पूर्णार्घ पवित्र चढ़ाते हैं।
त्रय रत्न श्रमण सम धारण कर, शिवपथ पर कदम बढ़ाते हैं॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री चतुःषष्टि ऋद्धिधारक परम ऋषिभ्यो पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. घी सहित, 2. खाया, 3. घी सहित, 4. अक्षय रसोई।

श्री तीन कम नवकोटि मुनिराज पूजा

(नवगीता छन्द)

सुन्दर अढाई द्वीप में पन्द्रह करम भू सौख्यदा।
जहँ न्यूनत्रय नवकोटि मुनि होते अधिकतम सर्वदा॥
त्रय रत्न भूषित भावलिंगी पंचविध संयम धरें।
मन में विराजो आज मम आह्वान मुनिवर हम करें॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री द्वयार्द्ध द्वीपस्थ न्यून त्रय नवकोटि श्रमण समूह ! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननम्। अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः-ठः स्थापनम्। अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्।

(शंभु छंद)

कंचन कलशों में जल ले हम गुरु पद प्रक्षालन करते हैं।
त्रय दोष हरें त्रय रत्न वरें नवविध आराधन करते हैं॥
नव कोटि न्यून त्रय मुनियों को हम वंदन बारम्बार करें।
बन जायें मुनि मन सम निर्मल यह शुद्ध भावना हृदय धरें॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री द्वयार्द्ध द्वीपस्थ न्यून त्रय नवकोटि श्रमणेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा॥1॥

शशिकर सम शीतल शांत श्रमण भव-भव संताप मिटाते हैं।
भवताप नशे तुम चरण बसे हम चंदन चरण चढ़ाते हैं॥ नव.....

ॐ ह्रीं अर्हं श्री .....संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा॥2॥

मुक्ताफल[1] अक्षत श्वेत धवल धवलात्म श्रमण को अर्पित है।
तुम सम अक्षय तप साधन हित मम जीवन पूर्ण समर्पित है॥ नव.....

ॐ ह्रीं अर्हं श्री .....अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा॥3॥

मचकुन्द मालती मरुवादिक मन्मथ मर्दन हित मँगवाये।
मदनारि जयी ऋषि के सेवक निज जीवन बगिया महकाये॥ नव.....

ॐ ह्रीं अर्हं श्री .....कामबाणविनाशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा॥4॥

1. मोती

बहु पाप स्रोत क्षुत्[1] डाकिन है इसको यतिवर ही विनशायें।
उनको बहु व्यंजन थाल-चढ़ा हम चैत्य सुखामृत को पायें॥
नव कोटि न्यून त्रय मुनियों को हम वंदन बारम्बार करें।
बन जायें मुनि मन सम निर्मल यह शुद्ध भावना हृदय धरें॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री .....क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा॥5॥

अर्हंत वचन के चिंतक वे श्रुतज्ञान दीप प्रगटाते हैं।
श्रुत प्रज्ञापुंज श्रमण सन्मुख हम मंगलदीप जलाते हैं॥ नव.....

ॐ ह्रीं अर्हं श्री .....मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा॥6॥

मुनि धर्मशुक्ल ध्यानाग्नि में वसु कर्म काष्ठ का दहन करें।
उनको पावक में धूप चढ़ा हम भी कर्मों का हनन करें॥ नव.....

ॐ ह्रीं अर्हं श्री .....अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा॥7॥

षट्आवश्यक को साध श्रमण संयम का फल शिवफल पायें।
उनको षट्ऋतु के फल भेंटें हम निजभव सफल बना पायें॥ नव.....

ॐ ह्रीं अर्हं श्री .....महामोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा॥8॥

जल-चंदन-अक्षत-दीप-धूप नैवेद्य हरित फल लाये हैं।
अन्तर में भक्तिभाव लिये ऋषिराज शरण में आये हैं॥ नव.....

ॐ ह्रीं अर्हं श्री .....अनर्घपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥9॥

तीन कम नौ कोटि मुनियों के अर्घ

अथ मंडलस्योपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

(शंभु छंद)

षट् लख सत्रह शत चऊ नवति से हीन कोटि षट् मुनिवर हैं।
वे सब प्रमत्त संयत योगी, चारित्र निष्ठ आगमधर हैं॥
वे शांत संत निर्ग्रंथ श्रमण सुर असुरों से पूजे जाते।
नव कोटि न्यून त्रय ऋषि की हम अर्चा कर मुनि सम व्रत पाते॥1॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पंचकोटि नवति त्रयलक्षाः नवतिअष्टसहस्रा द्वयशतषष्ठ प्रमत्त विरत श्रमणेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. भूख

त्रय कोटी में त्रय लक्ष श्रमण शत अष्ट सप्त नव कम होते।
मुनि अप्रमत संयत नामा कैवल्य बीज अंकुर बोते।।
वे शांत संत निर्ग्रंथ श्रमण सुर असुरों से पूजे जाते।
नव कोटि न्यून त्रय ऋषि की हम अर्चा कर मुनि सम व्रत पाते।।2।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री द्वयकोटिनवतिषटलक्षाः नवतिनवसहस्र शत त्रय अप्रमत्तविरत श्रमणेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गुणथान अपूर्वकरण[1] वर्ती द्वय शत निन्यानव होते हैं।
वे उपशम श्रेणी में चढ़कर शिवसुख अंकुर नव बोते हैं।। वे..।।3।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अपूर्वकरण गुणस्थानवर्ती द्वयशत नव नवति उपशमक श्रमणेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अनिवृत्तिकरण वर्ती मुनिवर द्वय शत निन्यानव बतलाये।
निज कर्मों का उपशम कर वे शुद्धात्म योग में रम जायें।। वे..।।4।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अनिवृत्तिकरण गुणस्थानवर्ती द्वयशतनवनवति उपशमक श्रमणेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मुनि सूक्ष्म सांपरायी द्वयशत निन्यानव उपशम श्रेणी में।
निज कर्म मैल का शमन करें चढ़ शुक्लध्यान की श्रेणी में।। वे..।।5।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सूक्ष्मसांपराय गुणस्थानवर्ती द्वयशतनवनवति उपशमक श्रमणेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

द्वयशत निन्यानव आगम में उपशांत मोह बतलाये हैं।
उन सम शुचि रत्नत्रय पाने भव्यों ने अर्घ सजाये हैं।। वे..।।6।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री उपशांतमोह गुणस्थानवर्ती द्वयशतनवनवति उपशमक श्रमणेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शत पंच अठानव क्षपक श्रमण गुणथान अपूर्वकरण वरते।
धर निर्विकल्प शुद्धोपयोग प्रतिपल निज शुद्धकरण करते।। वे..।।7।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अपूर्वकरण गुणस्थानवर्ती पंचशतअष्टानवति क्षपक श्रमणेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. परिणाम।

शत पंच अठानव क्षपक श्रमण अनिवृत्तिकरण वर्ती होवें।
धारण कर निश्चल शुक्ल ध्यान चंचल कर्मज वृत्ति खोवें।।
वे शांत संत निर्ग्रंथ श्रमण सुर असुरों से पूजे जाते।
नव कोटि न्यून त्रय ऋषि की हम अर्चा कर मुनि सम व्रत पाते।।8।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अनिवृत्तिकरण गुणस्थानवर्ती पंचशतअष्टानवति क्षपक श्रमणेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मुनिराज पाँच सौ अंठानव हैं सूक्ष्म सांपरायी योगी।
निर्लोभ निराकुल निर्विकार निर्मल निज चिन्मय उपयोगी।। वे..।।9।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सूक्ष्मसांपराय गुणस्थानवर्ती पंचशतअष्टानवति क्षपक श्रमणेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ऋषि पाँच शतक अंठानव ही, छद्मस्थ वीतरागी होवें।
चऊ घाति घात वे क्षीण मोह कैवल्य बोध भागी होवें।। वे..।।10।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री क्षीणमोह गुणस्थानवर्ती पंचशतअष्टानवति क्षपक श्रमणेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अठ लक्ष अठानव सहस पाँच शत युग्म केवली जिननायक।
हित देशक सकल शरीरी जिन सन्मार्ग प्रखर प्रज्ञादायक।। वे..।।11।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अष्टालक्ष अष्टानवति सहस्र पंचशतद्वय सयोग केवलीजिनेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मुनि पाँच शतक अंठानव ही गत योग केवली परमातम।
अत्यल्प काल में कर्म नशा वे बनते सिद्ध प्रबुद्धातम।। वे..।।12।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पंचशतअष्टानवति अयोगकेवली जिनेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य (शंभु छंद)

जो द्रव्य-भाव द्वयलिंगों सह निर्ग्रंथ श्रमण पद को धारें।
शुभयोग तथा शुद्धोपयोग धारण कर सब अघ परिहारें।।
जीतें परिषह उपसर्ग सदा वे ध्यान अनुप्रेक्षा द्वारा।
कर परम भेद विज्ञान ध्यान बन सिद्ध वरें शिवपुर द्वारा।।

नव कोटि न्यून त्रय सब मुनि को हम वंदन बारम्बार करें।
पूर्णार्घ्य चढ़ा मुनि व्रत धारें उन सम हम शिवपुर द्वार वरें॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री द्वयार्द्ध द्वीपस्थ न्यून त्रय नवकोटि श्रमणेभ्यो पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा : शांतिधार त्रय बार कर, सांत श्रमण को आज।
सुमनावलि अर्पण करें, पायें मोक्ष सुराज॥

शांतये शांतिधारा.... दिव्य पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

जाप्य मंत्र : ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्रेभ्यो नमः।

जयमाला

दोहा- ज्ञान ध्यान तप में लगे, विषय विरक्त महंत।
कर्म काटकर ये मुनि, बन जाते भगवंत॥

(पद्धरि छन्द)

जय-जय निर्ग्रन्थ मंहत संत, जय करने आठों कर्म अन्त।
जय श्रमण धर्म पालें महान, प्रगटावें निज में आत्मध्यान॥1॥

यति गुण धारें शुचि आठबीस, ध्यावें तीर्थंकर चारबीस।
सुर-नर-पशु कृत उपसर्ग घोर, चौथा निसर्ग उपसर्ग और॥2॥

इस बेला में धर साम्यभाव, वे करने निज अघ का अभाव।
संयम के होवें पाँच भेद मुनिवर उसको पालें अखेद[1]॥3॥

द्वादश तप पालें निर्विकार, द्वादश अनुप्रेक्षायें विचार।
श्रुत द्वादश अंग प्रमाण रूप, मुनि पारायण करते अनूप॥4॥

शिक्षण-अध्यापन[2] लीन आप, शरणागत को करते विपाप।
केवली श्रुतकेवली पाद पाय, मुनि षोडशकारण भाव भाय॥5॥

जिससे धारें वे धर्मचक्र, नाशें निज का भव भ्रमणचक्र।
जीतें बाईस परिषह विशेष, जिससे पालें मुनि सिद्धवेश॥6॥

1. दुःखरहित, 2. पढ़ाता, 3. पाप रहित।

चौसठ ऋद्धी धारें मुनीश, पायें निश्चय लोकाग्र शीश।
कुल नौ करोड़ में न्यून तीन, मुनिवर होते परमात्म लीन॥7॥

वे धर्म-शुक्ल दो ध्यान ध्याय, वे सिद्ध बनें या स्वर्ग जाय।
जिनको शनि की बाधा सताय, वह श्रमण संघ की शरण आय॥8॥

हो राहू-केतू के कष्ट और, तब जपो श्रमण का नाम घोर।
देवो मुनि को आहार दान, हो जाये तब सब कष्ट म्लान॥9॥

वे मुनिवर हमको लेय शर्ण, नाशें दुःखदायक जन्म-मर्ण।
हम 'गुप्ति' व्रतों को पूर्ण पाल, काटें अपना भव भ्रमण जाल॥10॥

ॐ ह्रीं श्री णमो लोए सव्वसाहूणं सर्वसाधु परमेष्ठिभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(गीता छन्द)

जिनभक्त निर्मल भाव से यह 'रत्नत्रय पूजन' करें।
त्रैलोक्य सुख पा जाये वो सुर-नर उसे वन्दन करें॥
फिर धर क्षमादिक् धर्म को शिवराज वे पा जायेंगे।
त्रय 'गुप्ति' व्रत को धारकर भवदुःख कभी ना पायेंगे॥

इत्याशीर्वादः दिव्य पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

तीर्थंकर समवशरण स्थित आर्यिका पूजा

रचियित्री : ग. आर्यिका राजश्री माताजी

(तर्ज- हे दीनबन्धु...)

जिनराज के समोशरण में अम्ब शोभतीं।
उपचार महाव्रत को धार पाप मेटतीं॥
इन आर्यिकाओं की शरण को आज पाऊँगा।
आह्वान करूँगा मैं बोधिलाभ पाऊँगा॥

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति तीर्थंकर समवशरण स्थित गणिनी आदि सर्वार्यिका समूह ! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननम्। अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः-ठः स्थापनम्। अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्।

(अवतार छंद)

पावन जल चरण चढ़ाय, शुचिता माँग रहा।
त्रय रत्न मुझे मिल जाय, तव गुण गाय रहा॥
श्री मात श्रेष्ठ गुणखान, अर्चा सुखकारी।
गुरु माँ की शरण महान, भव भंजन हारी॥

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति तीर्थंकर समवशरण स्थित गणिनी आदि सर्वार्यिका चरणेभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा॥1॥

चंदन सम शीतल आप, शीतल गुण धारी।
चंदन अर्चा सब पाप, मोहतिमिर हारी॥ श्री मात.....॥

ॐ ह्रीं श्री ..... चंदनं निर्वपामीति स्वाहा॥2॥

मनहर अक्षत को लाय, अर्चा करता हूँ।
श्रावक गुरु भक्ति रचाय, तुम गुण वरता हूँ॥ श्री मात.....॥

ॐ ह्रीं श्री ..... अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा॥3॥

सुरभित सुमनों की थाल, चरण चढ़ाता हूँ।
चरणों में रख यह भाल, मदन भगाता हूँ॥ श्री मात.....॥

ॐ ह्रीं श्री ..... पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा॥4॥

षट्रस व्यंजन के थाल, तुमको अर्पित हो।
छूटे करमन का जाल, कष्ट विसर्जित हो॥
श्री मात श्रेष्ठ गुणखान, अर्चा सुखकारी।
गुरु माँ की शरण महान, भव भंजन हारी॥

ॐ ह्रीं श्री ..... नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा॥5॥

यह जगमग दीप महान, तम का नाश करे।
दीपक अर्चा अघ हान, ज्ञान प्रकाश करे॥ श्री मात.....॥

ॐ ह्रीं श्री ..... दीपं निर्वपामीति स्वाहा॥6॥

मैं अगर-तगर की धूप, पूजन हित लाया।
छूटे मेरा भव कूप, भाव हृदय आया॥ श्री मात.....॥

ॐ ह्रीं श्री ..... धूपं निर्वपामीति स्वाहा॥7॥

केला अंगूर अनार, आम चढ़ाता हूँ।
माँ मुझको भव से तार, शीश झुकाता हूँ॥ श्री मात.....॥

ॐ ह्रीं श्री ..... फलं निर्वपामीति स्वाहा॥8॥

जल चंदन आदि लाय, अर्घ बनाता हूँ।
ये मात शरण मिल जाय, अर्घ चढ़ाता हूँ॥ श्री मात.....॥

ॐ ह्रीं श्री ..... अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥9॥

अथ प्रत्येक अर्घ

सोरठा- पाने मुक्ति द्वार, भक्ति माँ गुण की करूँ।
मंडल पर मैं आज पुष्पाञ्जलि क्षेपण करूँ॥

अथ मंडलस्योपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

(शंभु छंद)

जो धर्म सभा में राज रहे, उन आदिप्रभु को नमन करूँ।
गणिनी 'ब्राह्मी' के अर्चन से, मैं पाप ताप का वमन करूँ॥
सब आर्या[1] माँ कुल तीन लाख, पच्चास हजार तपोधारी।
गुण मंडित आत्म बिहारी ये, उपचार महाव्रत की धारी॥1॥

1. आर्यिका।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री ऋषभदेवस्य 'ब्राह्मी' आदि त्रयलक्ष पंचाशत् सहस्र आर्यिकाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री अजितनाथ के सन्निध में गणिनी माँ श्रेष्ठ प्रकुब्जा हैं।
सब आर्या माता धर्म रूप, उनकी मणि मात प्रकुब्जा हैं॥
निर्दोष अहार विहार करें, शिवराह गमन का चयन करें।
इनकी अर्चा करके हम भी, रत्नत्रय पथ में गमन करें॥2॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अजितनाथस्य 'प्रकुब्जा' आदि त्रयलक्षविंशति सहस्र आर्यिकाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गणिनी माँ 'धर्मश्री' चलती, संभव प्रभु के निर्देशन में।
उपदेश करें सब धर्म करो, तीर्थंकर के दिग्दर्शन में॥
भव बंधन जिनको ना भाया, वैराग्य भाव मन में आया।
ऐसी सब जिनकन्याओं[1] की, अर्चा का भाव उमड़ आया॥3॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री संभवनाथस्य 'धर्मश्री' आदि त्रयलक्ष त्रिंशत् सहस्र आर्यिकाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अभिनंदन प्रभु को वंदन है, जिनकी यह धर्म सभा न्यारी।
त्रय लाख व तीस हजार पूज्य, छह सौ आर्यायें हितकारी॥
इन सब पर 'मेरुषेणा' माँ, गणिनी अनुशासन करती हैं।
इनकी अर्चा कर भवि राशि, शिवपुर का शासन वरती है॥4॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अभिनंदननाथस्य 'मेरूषेणा' आदि त्रयलक्षत्रिंशत्सहस्रषट् शतक आर्यिकाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री सुमतिनाथ की धर्म-सभा, जहँ मात 'अनंता' ज्येष्ठ कहीं।
वे सब गुण मंडित आर्या श्री, कुल तीन लाख त्रय सहस कहीं॥
रत्नत्रय धारी सब माता, प्रभु गुण कीर्त्तन में लीन रहें।
इनको वसु अर्घ चढ़ा करके, हम अर्चा में तल्लीन रहें॥5॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सुमतिनाथस्य 'अनंता' आदि त्रयलक्षत्रिंशत् सहस्र आर्यिकाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. भगवान की शिष्याऐं।

रतिबाणों का छेदन करती, 'रतिषेणा' माँ गणिनी[1] ज्ञानी।
कुल आर्या चऊ लख बीस सहस, उनकी पूजा सब सुखदानी॥
षट् काय जीव रक्षा करके, षट् आवश्यक पालन करती।
श्री पद्मनाथ तीर्थंकर के, अर्चन से वे शिवसुख वरती॥6॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पद्मप्रभनाथस्य 'रतिषेणा' आदि चतुर्लक्षविंशति सहस्र आर्यिकाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(नरेन्द्र छंद)

श्री सुपार्श्व की धर्म सभा में, सुर नर पशु गण आते हैं।
गणिनी माँ 'मीना' की पूजा, करके सब हर्षाते हैं॥
तीन लाख अरु तीस सहस, शिष्यायें दशविध धर्म धरें।
इनकी अर्चा आत्म शक्ति दे, ज्ञान ज्योति का पुंज करें॥7॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सुपार्श्वनाथस्य 'मीना' आदि त्रयलक्ष त्रिंशत्सहस्र आर्यिकाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चंदाप्रभु के समोशरण में, गणिनी माता 'वरुणा' हैं।
सब जीवों के हेतु हृदय में, धारण करती करुणा हैं॥
तीन लाख अस्सी हजार वे, आर्या माता सुखकारी।
अष्ट द्रव्य से पूजन करते, भक्ति विनय से नर-नारी॥8॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री चन्द्रप्रभनाथस्य 'वरुणा' आदि त्रयलक्ष अशीति सहस्र आर्यिकाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समोशरण में सुविधिनाथ को, नित वंदन करती माता।
गणिनी 'घोषा' जिनवर जी से, माँग रही शिवसुख साता॥
आठ लाख अस्सी हजार सब, श्री आर्यायें व्रतधारी।
पाप कर्म का शमन करायें, इनकी पूजा हितकारी॥9॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पुष्पदंतनाथस्य 'घोषा' आदि अष्टलक्ष अशीतिसहस्र आर्यिकाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. आचार्य के समान।

शीतल प्रभु का धर्मतीर्थ भी, समता निधि का झरना है।
क्षमा दया करुणा गुणभूषित, गणिनी माता 'धरणा' हैं॥
तीन लाख अस्सी हजार श्री, अम्बा पुण्य कमाती हैं।
आगम विधि से अर्चा इनकी, अपयश दूर भगाती हैं॥10॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री शीतलनाथस्य 'धरणा' आदि त्रयलक्षअशीति सहस्र आर्यिकाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्रेयनाथ की धर्मसभा में, श्रेय देशना देती हैं।
अम्ब 'धारणी' भक्तजनों के, सब संकट हर लेती हैं॥
तीन लाख अरु तीस सहस, शिष्यायें शुभ्र[1] वस्त्र धारें।
इनका कीर्तन वंदन पूजन, भविजन का अघ परिहारे॥11॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री श्रेयांसनाथस्य 'धारणी' आदि त्रयलक्षत्रिंशत्सहस्र आर्यिकाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समोशरण में वासुपूज्य जिन, व्रत देते भवि जीवों को।
माँ 'वरसेना' की चर्या भी, संदेशा देती जग को॥
एक लाख छह सहस दीक्षिता, निकट बैठ दीक्षा लेती।
इनकी अर्चा भक्त जनों को, ज्ञानामृत शिक्षा देती॥12॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री वासुपूज्यनाथस्य 'वरसेना' आदि एकलक्षषट्सहस्र आर्यिकाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(नव गीता छंद)

हम वीतरागी विमल प्रभु की शरण में नित आ रहे।
अनगारिणी[2] 'पदमा' तुम्हें हम अर्घ दे हर्षा रहे॥
त्रय लाख तीन हजार आर्या, लीन प्रभु के ध्यान में।
आराधना इनकी करें नित मग्न हो गुणगान में॥13॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री विमलनाथस्य 'पद्मा' आदि त्रयलक्ष त्रयसहस्र आर्यिकाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. सफेद, 2. आर्यिका

चउ घाति नाश अनंत जिन पथ मोक्ष का दर्शा रहे।
माँ 'सर्वश्री' गणिनी विदुषी[1] सुजन तव गुण गा रहे॥
इक लाख आठ हजार आर्या नित्य तप द्वादश तपे।
निज शीश चरणों में रखे माँ नाम माला हम जपें॥14॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अनंतनाथस्य 'सर्वश्री' आदि एकलक्ष अष्ट सहस्र आर्यिकाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री धर्म प्रभु दश धर्म की नित देशना देते यहाँ।
माँ 'सुव्रता' गणिनी अवश जग मोहतम हरती यहाँ॥
बासठ सहस वा चार शत आर्या निरन्तर श्रम करें।
वह साधना से साध्य को पा भव्य का भ्रमतम हरें॥15॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री धर्मनाथस्य 'सुव्रता' आदि द्विषष्टिसहस्रचतुःशतम् आर्यिकाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री शांतिजिन शांति प्रदाता शांति मुझको दीजिए।
माता 'हरिषेणा' सदा हमको शरण में लीजिए॥
प्रभु तीर्थ की सब आर्यिका माँ आत्म अन्वेषण करें।
उनके चरण को पूज कर सुर पुष्प का क्षेपण करें॥16॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री शांतिनाथस्य 'हरिषेणा' आदि षष्टि सहस्रत्रयशत आर्यिकाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सर्वज्ञ कुंथु जिनेश का हम भक्ति से अर्चन करें।
माँ 'भाविता' गणिनी चरण में भाव से वंदन करें॥
छह दश शतक त्रय शत पचासहि अम्ब प्रभु गुणलीन हैं।
इनके गुणों के लाभ हित हम भक्ति से लवलीन हैं॥17॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री कुंथुनाथस्य 'भाविता' आदि षष्टिसहस्र त्रयशत् पंचाशत आर्यिकाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री अरह धर्म सभा सुखद है पुण्य कमल विकासिनी।
माँ 'कुंथुसेना' अम्ब ईशा सर्व कर्म निरोधिनी॥

1. ज्ञानी।

परिव्राजिका[1] षष्टि सहस्र तप वज्र सा पालन करें।
अनुशरण कर हम आपका माँ धर्मपथ धारण करें॥18॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अरहनानाथस्य 'कुंथुसेना' आदि षष्टि सहस्र आर्यिकाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(अडिल्ल छंद)

मल्लिनाथ की यशगाथा हम गा रहे।
'बंधुसेना' गणिनी को हम ध्या रहे॥
सहस्र पचपन अम्ब जगत दुःखहारिणी।
मात शरण है तुष्टि-पुष्टि सुखदायिनी॥19॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री मल्लिनाथस्य 'बंधुसेना' आदि पंच पंचाशत् सहस्र आर्यिकाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मुनिसुव्रत को नमन करें हम भक्ति से।
मात 'पुष्पदत्ता' व्रत करती शक्ति से॥
कुल पचास हजार आर्यिका तीर्थ की।
गान नृत्य कर पूजा करते मात की॥20॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री मुनिसुव्रतनाथस्य 'पुष्पदत्ता' आदि पंचाशत् सहस्र आर्यिकाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नमिजिनेश की धर्मसभा मंगल करे।
अम्ब 'मार्गिणी' भक्तों के संकट हरे॥
पैंतालीस हजार श्रेष्ठ अनगारिणी।
इनकी अर्चा भव-भव दुःख से तारिणी॥21॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री नमिनाथस्य 'मार्गिणी' आदि पंच चत्वारिंशत् सहस्र आर्यिकाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नेमिनाथ की जय-जय सब मिल बोलिए।
माँ 'राजुल' से निज चर्या को तोलिए॥

1. आर्यिका।

ये चालीस हजार आर्यिका वंद्य हैं।
इनकी अर्चा से बनते जगवंद्य हैं॥22॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री नेमिनाथस्य 'राजमति' आदि चत्वारिंशत् सहस्र आर्यिकाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पारस की भक्ति रस से अर्चा करें।
माँ 'सुलोचना' के व्रत की चर्चा करें॥
हम अड़तीस हजार अम्ब को ध्या रहे।
नृत्य गीत युत मनहर अर्घ चढ़ा रहे॥23॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पार्श्वनाथस्य 'सुलोचना' आदि अष्टत्रिंशत् सहस्र आर्यिकाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वीर प्रभु की सभा हृदय उज्ज्वल करें।
मात 'चंदना' चंदन सम शीतल करे॥
अन्तेवासिनी[1] ये छत्तीस हजार हैं।
तव चरणों में हम नमते बहु बार हैं॥24॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री महावीरजिनेन्द्रस्य 'चंदना' आदि षट्त्रिंशत् सहस्र आर्यिकाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

(दोहा)

समोशरण के ईश को झुक-झुक करें प्रणाम।
वहाँ विराजित अम्ब का रटते हरदम नाम॥
सर्व आर्यिकायें सदा, करती धर्म प्रकाश।
इनकी अर्चा से हटे भव-भव के दुःख त्रास॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री चतुर्विंशति तीर्थंकर समवशरण स्थित ब्राह्मी आदि चन्दनपर्यंत चतुःपंचाशल्लक्ष अष्ट सहस्र पंचाशत अधिक शतक आर्यिकाभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. आर्यिका।

दोहा : महिमा अगम अपार है, मात शरण सुखकार।
शांतिधार हम कर रहे, पुष्पांजलि हितकार॥

शांतये शांतिधारा., दिव्य पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

जाप्य मंत्र : ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्रेभ्यो नमः।

जयमाला

दोहा : सर्व आर्यिका मात का, सरल धवल आचार।
जयमाला इनकी पढ़ें, पायें धवल विचार॥

(शंभु छंद)

श्री आदिनाथ से सन्मति का, है समोशरण अतिशयकारी।
सब जीव परस्पर वैर छोड़, बन जाते सम्यक् व्रतधारी॥
माँ गणिनी ब्राह्मी से लेकर, चन्दनबाला जग ख्यात हुईं।
वे छेदन करके नारी वेद, इन्द्रादिक पद को प्राप्त हुईं॥1॥

इसमें जितनी अम्बायें हैं, उनको वंदन सद्भावों से।
मिटता भव-भव का क्रंदन है, इनके वंदन के भावों से॥
सम्यक्त्व गुणों की धारी माँ, अठबीस मूलगुण धारी हो।
सागार भाव के तजने से, शिवपथ गामी अनगारी हो॥2॥

उपचार महाव्रत धारण कर, उपसर्ग परीषह जय करतीं।
मुनिसम चर्या पालन करके, निज कर्म आपदा को हरतीं॥
माता 'ब्राह्मी' गणिनी आर्या, दूजी श्री अम्ब 'प्रकुब्जा' हैं।
ये मात 'धर्मश्री' धर्म कहे, भक्तों ने इनको पूजा है॥3॥

चौथी गणिनी 'मेरुषेणा', फिर मात 'अनंता' पंचम हैं।
'रतिषेणां' 'मीना' 'वरुणा' वा, 'घोषा' 'धरणा' सर्वोत्तम हैं॥
हे अम्ब ! 'धारणी' 'वरसेना', 'पद्मा' व 'सर्वश्री' माता।
जगमात 'सुव्रता' 'हरिषेणा', जगदम्ब 'भाविता' दे साता॥4॥

'कुन्थुसेना' बन्धुसेना श्री मात, 'पुष्पदत्ता' प्यारी।
श्रीमात 'मार्गिणी' 'राजमति', गणिनी सुलोचना सुखकारी॥
श्री वीर प्रभु का समोशरण, उसकी गणिनी चंदनबाला।
चौबीसों गणिनी माता की, सब अर्चा कर फेरों माला॥5॥

यतिनी-श्रमणी-अम्बा-अज्जा, साध्वी-आर्या-त्यागिन माता।
भिक्षुणी-तापसी-तपस्विनी, इत्यादिक तुम संज्ञा माता॥
तव नाम अनेक कहें ज्ञानी, हे ज्ञान प्रचारक शिवगामी।
सुज्ञान दीप का दान करो, हे तमहर ! सुखकर अभिरामी॥6॥

जयघोष करें जयमाल पढ़ें, कर्मों पर जय पाने हेतू।
माँ आप दर्श समझाता है, संयम पथ ही सबका सेतू॥
हे माता ! तेरी पूजन से, हम निज स्वरूप को पायेंगे।
वंदन कीर्त्तन अर्चन करके, शिव 'राज' पथिक बन जायेंगे॥7॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री चतुर्विंशति तीर्थंकर समवशरण स्थित सर्वार्यिका चरणेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(गीता छन्द)

जिनभक्त निर्मल भाव से यह 'रत्नत्रय पूजन' करें।
त्रैलोक्य सुख पा जाये वो सुर-नर उसे वन्दन करें॥
फिर धर क्षमादिक् धर्म को शिवराज वे पा जायेंगे।
त्रय 'गुप्ति' व्रत को धारकर भवदुःख कभी ना पायेंगे॥

इत्याशीर्वादः दिव्य पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

जाप्य मंत्र : ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्रेभ्यो नमः।

वृहद् जयमाला

दोहा : रत्नत्रय सन्मार्ग पर, कर श्रद्धा सत्ज्ञान।
तन्मय निर्मल आचरण, करे आत्म उत्थान॥

(शंभु छंद)

जय-जय श्री रत्नत्रय पथ वा, जय-जय रत्नत्रय धारी की।
जय पंच परम परमेष्ठी की, जय मोक्ष महल अधिकारी की॥
इस रत्नत्रय से आत्म दीप, प्रगटाने के शुचि भाव किये।
अतएव सकल जगफन्दों के, संकल्प विकल्प अभाव किये॥1॥

सम्यग्दर्शन और ज्ञान चरण, ये तीन रत्न उपकारी हैं।
इनके शरणागत प्राणी के, छूटे कल्मष सब भारी हैं॥
इस सम्यक् निधि को पा करके, भवि भव का भ्रमण मिटाते हैं।
वे अर्द्ध परावर्तन में ही, निश्चय शाश्वत सुख पाते हैं॥2॥

जो इकपल भी शुचिदर्शन[1] का, निज दीप हृदय में प्रगटायें।
वह क्षुद्र पशु तन पाकर भी, सुर गण द्वारा पूजा जाये॥
दर्शन से भ्रष्ट पतित प्राणी, निर्वाण बोधि को ना पाता।
तपभ्रष्ट पुनः तप सिद्ध बने, सम्यक्त्व हीन ना बन पाता॥3॥

सर्वज्ञ देव उनकी वाणी, निर्ग्रन्थ गुरु तद् अनुगामी।
उन पर श्रद्धान अटल रखकर, भविजन बन जाते शिवगामी॥
सम्यक् रुचि के पच्चीस दोष, इनको त्यागें दृढ़ श्रद्धानी।
गुण आठ अंग से शोभित हो, तत्क्षण बनते सम्यक्ज्ञानी॥4॥

सद् ज्ञानप्रभा से दीप्त जीव, अष्टांग युक्त श्रुत अभ्यासें।
नहि हीनाधिक तत्त्वानुरूप, अविरुद्ध निशंकित श्रुत भाषें॥
अनगिन अनंत भव का तप भी, प्रज्ञा बिन जग में भटकाये।
सद्ज्ञान बिना वह खोटा तप, नाना योनी में अटकाये॥5॥

1. सम्यक्दर्शन।

नाना नय भंग मयी आरे, सद्ज्ञान चक्र को तीक्ष्ण करें।
दुर्नय दुर्मत दुर्भंगवाद, जिन सन्मुख तड़-तड़ टूट पड़े॥
स्याद्वाद अमोघ सुदृढ़ लांछन, इस अनेकांत मत में शोभे।
वादीभकेसरी आदिक् को, जिसका चिंतन पलपल लोभे॥6॥

नय निश्चय वा व्यवहार बीच, निर्मल जिन श्रुत सरिता बहती।
इसमें तिर भवि वह धाम वरें, जिस थल में शिव वनिता रहती॥
अज्ञानी सम्यक् ज्ञान बिना, मिथ्या तप कर दुःख पाते हैं।
पर ज्ञानी मुनि त्रय गुप्तिधार, क्षण में वसु कर्म नशाते हैं॥7॥

सम्यक् ज्ञानी दृढ़ श्रद्धानी, अविरत सम्यक्त्वी कहलायें
नारक पशु देव मनुज भव में, अविरत हैं आगम बतलाये॥
जो आठ कषायें क्षय उपशम, कर देशव्रती बन जाते हैं।
वे श्रावक निर्मल व्रत धारी, सोलह स्वर्गों तक जाते हैं॥8॥

पुण्यात्म मनुज तिर्यंच जीव, अणुव्रत धारण कर पाते हैं।
इनके अत्यन्त विशुद्ध भाव, सुरपति को भी ललचाते हैं॥
पाँचों हिंसा का पूर्ण त्याग, निश्चय से मुनियों के होवे।
छठवें से चौदह गुणस्थान, मुनियों के क्रम-क्रम से होवे॥9॥

इस विध रत्नत्रय पूर्ण साध, यति पति शिव सदन निवास करें।
वंदन कीर्त्तन कर अर्घ चढ़ा, हम उनके सन्निध वास करें॥
रत्नत्रय धारक तीर्थंकर, अरहंत सिद्ध आचार्य श्रमण।
उनकी अक्षय गुणनिधियों में, करता भव्यों का चित्त रमण॥10॥

रत्नत्रय भवदधि में सेतू[1], दुर्गति का भ्रमण मिटाता है।
त्रय रोग विघ्न सब संकट हर, दिव आत्म सुखों का दाता है॥
बुद्धि विहीन प्रज्ञाधर हो, निर्धन नव निधियाँ चक्र वरें।
फिर धर्म चक्र धर तीर्थद् हो, जिनकी सेवा सुर शक्र करें॥11॥

1. पुल।

त्रय रत्न पुंज प्रगटाने के, उत्कर्ष भाव मन में आये।
इस कारण नृत्य गीत लय में, त्रय गुण की महिमा हम गायें॥
जय नादों से जिनमत यश को, तीनों लोकों में गुंजायें।
कर निर्मल तप जिन सूत्रों से, पतितों को शिवपथ में लाये॥12॥
इन त्रय रत्नों की पूजन से, हम रत्नत्रय पथ अपनायें।
इस मोक्ष मार्ग पर चलकर हम, शिवरानी के वर बन जाये॥
त्रय गुप्ति साध धर शुक्लध्यान, निज कर्म पिंड को विनशायें।
यह 'गुप्तिनंदी' शुद्धात्म होय, लोकाग्र क्षेत्र में बस जाये॥13॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सम्यक् रत्नत्रयेभ्यो तद्वंत पंच परमेष्ठिभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(गीता छंद)

जिनभक्त निर्मल भाव से यह 'रत्नत्रय' पूजन करें।
त्रैलोक्य सुख पा जाये वो सुर नर उन्हें वंदन करें॥
फिर धर क्षमादिक धर्म को शिवराज वे पा जायेंगे।
त्रय 'गुप्ति' का व्रत पूर्ण कर भव दुःख कभी ना पायेंगे॥

इत्याशीर्वादः दिव्य पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

श्री दिव्यध्वनि जिनवाणी पूजा

(गीता छन्द)

हे दिव्यध्वनि वागेश्वरी[1], आये शरण में हम सदा।
आह्वान अम्बे हम करें, तव नाम हरता आपदा॥
जिनदेव के मुख से खिरी, ओंकार वाणी रूप में।
मन कमल में कर थापना, पाऊँ निजातम रूप में॥

ॐ ह्रीं ऐं श्री जिनमुखोद्भव सरस्वती वाग्वादिनि ! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननम्।
ॐ ह्रीं ऐं श्री जिनमुखोद्भव सरस्वती वाग्वादिनि ! अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः-ठः स्थापनम्।
ॐ ह्रीं ऐं श्री जिनमुखोद्भव सरस्वती वाग्वादिनि ! अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्।

(चामर छन्द)

नीर क्षीर सिंधु का सुताप हारि ले लिया।
पूज ज्ञान मात को विशेष ज्ञान पा लिया॥
दिव्य देशना महान है जिनेश आपकी।
मात अर्चना हरे प्रवंचना विभाव की॥1॥

ॐ ह्रीं ऐं श्री जिनमुखोद्भवदिव्यध्वनिवाग्वादिन्यै जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

गंधयुक्त चंदनादि ले पुनीत[2] हाथ में।
मात अर्चना करें सुभक्ति भाव साथ में॥ दिव्य देशना...॥2॥

ॐ ह्रीं ऐं श्री जिनमुखोद्भवदिव्यध्वनिवाग्वादिन्यै संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

खण्डहीन गंधवान शालिपुंज[3] को लिया।
आपको चढ़ा अखण्ड सौख्यवान हो लिया॥ दिव्य देशना...॥3॥

ॐ ह्रीं ऐं श्री जिनमुखोद्भवदिव्यध्वनिवाग्वादिन्यै अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

1. जिनवाणी (सरस्वती), 2. पवित्र, 3. चावल के पुंज।

मोगरा गुलाब चम्प भेंट आप चर्ण में।
काम को विनाश मात धार आत्म शर्म मैं।
दिव्य देशना महान है जिनेश आपकी।
मात अर्चना हरे प्रवंचना विभाव की॥4॥

ॐ ह्रीं ऐं श्री जिनमुखोद्भवदिव्यध्वनिवाग्वादिन्यै कामबाणविनाशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्ण मिष्ठ वा नवीन व्यंजनादि ला रहे।
आप गान लीन मोह कर्म को नशा रहे॥ दिव्य देशना...॥5॥

ॐ ह्रीं ऐं श्री जिनमुखोद्भवदिव्यध्वनिवाग्वादिन्यै क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तेजवान दीप लेय आरती उतारते।
आपके समीप मात मोह को निवारते॥ दिव्य देशना...॥6॥

ॐ ह्रीं ऐं श्री जिनमुखोद्भवदिव्यध्वनिवाग्वादिन्यै मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

धूप अग्नि में चढ़ाय मात आप आंगना।
अष्टकर्म के विनाश की करूँ प्रभावना॥ दिव्य देशना...॥7॥

ॐ ह्रीं ऐं श्री जिनमुखोद्भवदिव्यध्वनिवाग्वादिन्यै अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

संतरा बदाम आम श्री फलादि थाल ले।
भक्ति से चढ़ा वरूँ विमुक्ति भू विशाल मैं॥ दिव्य देशना...॥8॥

ॐ ह्रीं ऐं श्री जिनमुखोद्भवदिव्यध्वनिवाग्वादिन्यै महामोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

नीर गंध वस्त्र आदि अर्घ भाव से लिया।
आपका विधान मात भक्ति से किया॥ दिव्य देशना...॥9॥

ॐ ह्रीं ऐं श्री जिनमुखोद्भवदिव्यध्वनिवाग्वादिन्यै अनर्घपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सोरठा- दिव्यध्वनि जगमात, त्रय लोकों में सर्वदा।
करता हूँ जलधार, पुष्पाञ्जलि ले पूजहूँ॥

शांतये शांतिधारा....दिव्य पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

जाप्य मंत्र-ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्रेभ्यो नमः।

जयमाला

दोहा- जिनवाणी की शरण में, कटे कर्म का जाल।
ध्यान शारदे का करें, गायें अब जयमाल॥

(शेर छंद)

माँ शारदे की शरण में आया हूँ आज मैं।
चारों गति के पाप से घबरा गया हूँ मैं॥
अत्यन्त पाप कर्म से निगोद में गया।
इक श्वास में अठारह बार जन्म ले मरा॥1॥

यों जन्म-मरण का अनेक काल दुःख सहा।
महान् पुण्य योग से वहाँ से च्युत हुआ॥
तिर्यंच गति के दुःखों को क्या कहूँ तुम्हें।
जिसका विचार मात्र भी दुःखी करें हमें॥2॥

त्रस थावरादि योनियों में घूमता रहा।
अनेकों पाप कर्म से मैं जूझता रहा॥
प्रथमादि सात नर्क में अपार दुःख सहा।
उत्तम जघन्य मध्य काल पाप रत रहा॥3॥

वहाँ क्षुधा तृषा मिली औ गर्मी ठण्ड भी।
निज पूर्व वैर से लड़ाये दुष्ट देव भी॥
मनुज गति में गर्भवास की व्यथा सही।
यह बाल वय जवानी सारी मोह में बही॥4॥

अम्बे अकाम निर्जरा से देव पद मिला।
वहाँ भी लोभ मान से अपार दुःख मिला।
सम्यक्त्व के बिना अनेक योनि में गया।
जिनेन्द्र धर्म छोड़ भव समुद्र में बहा॥5॥

पायी अपार पुण्य से जिनेन्द्र देशना।
है जिनके पास रंचमात्र मोह द्वेष ना॥
जो सप्तभंग नय प्रमाण को बखानती।
नाना सुनाम धारती है मात भारती॥6॥

तुमको नमन त्रियोग से, त्रिकाल बार-बार।
महिमा तुम्हारी भक्ति से, गायें अनेक बार॥
हे मात् ! मुझको तीन रत्न दान दीजिए।
मम 'गुप्ति' व्रत की पूर्णता प्रदान कीजिए॥7॥

ॐ ह्रीं ऐं श्री जिनमुखनिर्गतसरस्वती वाग्वादिनी महादेव्यै जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(गीता छंद)

जिन भक्त निर्मल भाव से यह 'रत्नत्रय पूजन' करें।
त्रैलोक्य सुख पावें सदा सुर-नर उसे वंदन करें॥
फिर धर क्षमादिक धर्म को शिवराज वे पा जायेंगे।
त्रय 'गुप्ति' व्रत को धारकर भवदुःख कभी ना पायेंगे॥

इत्याशीर्वादः दिव्य पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

प्रशस्ति

(नरेन्द्र छंद)

आदिनाथ से सन्मति जिन तक, सब जिनवर को वंदन है।
वर्द्धमान जिन शासन नायक, हरते भव का क्रंदन हैं॥
अर्हत् सिद्ध सूरि पाठक वा, सर्व श्रमण को नमन करें।
इनके गुण आराधन से हम, मोक्ष महल में गमन करें॥1॥

वृषभसेन आदिक चौदह सौ, बावन गणधर को ध्यावें।
जिनवाणी की अर्चा कर हम, श्रुत सागर में रम जावें॥
मूलसंघ की सूर्यावलि[1] में, कुन्द-कुन्द जग सिद्ध हुए।
उनके अनुगामी गणनायक, श्रुत लेखक तप सिद्ध हुए॥2॥

आदि सिन्धु आचार्य महाना, इस अक्षय क्रम में आवें।
वे अपने तप बल की महिमा, मुख्य शिष्य में विकसावें॥
श्री महावीर कीर्ति सूरि ने, उनसे संयम को धारा।
जिनका निर्मल मंत्र तपोबल, लोक सिद्ध देवों द्वारा॥3॥

इनके शिष्य कुन्थु ऋषिनायक, जिनके श्रमण शताधिक हैं।
वे मेरे मुनि दीक्षा दाता, करुणाधर धर्माधिप हैं॥
पच्चिस सौ सत्रह वीराब्दे[2], रोहतक में मुनि दीक्षा दी।
गुरु आचार्य कनकनंदी ने, जिन आगम की शिक्षा दी॥4॥

पच्चिस सौ सतबिस वीराब्दे[3], मध्यदेश इन्दौर तिलक।
धनतेरस को सूरी पद[4] का, गुरुवर ने भेजा पत्रक॥
निजानंद शांती सीमंधर, गोम्मट्गिरी बहु ऋषि आयें।
मुनि कविन्द्र कुलपुत्रनंदी, औ क्षमा[5] व आस्था[6] हर्षायें॥5॥

1. आचार्य परम्परा, 2. 22-7-1991 ईस्वी सत्, 3. ईस्वी संवत्-2000, 4. आचार्य पद, 5. आर्यिका क्षमाश्री, 6. आर्यिका आस्थाश्री।

पच्चिस सौ अठबिस वीराब्दे[1], रवि पुष्यामृत श्रुत पंचम।
मंगल ध्वनि में यति श्रावक मिल, सबने दिया यतीश्वर धर्म॥
वीर मुक्ति संवत पच्चिस सौ, चौबिस पंचम माघ सुदी[2]।
रत्नत्रय सुविधान सृजूँ मैं, प्रज्ञा जागी पुण्यवती॥6॥

तभी वृहद् गणधर मंडल के, सम्पादन का पुण्य मिला।
गणिनी राजश्री आर्या से, गणधर पूजा पद्म खिला॥
बड़नगरी इन्दौरादिक में, इसकी हुई महा अर्चा।
जिसके अतिशय महिमा फल की, सर्व लोक में है चर्चा॥7॥

वीर वर्ष पच्चिस सौ अठबिस, माघ सुदी पंचम आयी[3]।
रत्नत्रय पूजा पूरी कर, मेरे मन खुशियाँ छायीं॥
गणिनी राजश्री माता ने, सम्पादन अनुरूप किया।
छन्द शास्त्र रस के पोषण से, भक्ति काव्य का रूप दिया॥8॥

मुनि कवीन्द्रनंदी ने इसके, संशोधन में योग दिया।
आर्या क्षमा व आस्था ने भी, लेखन में सहयोग दिया॥
सब यति अम्बा के सुयोग से, इस विधान को पूर्ण करा।
अक्षय निर्मल श्रुत गंगा से, अपना आतम कुंभ भरा॥9॥

इस पूजा के फल से पूजक, रत्नत्रय पा पूज्य बने।
इह पर लौकिक सब निधियाँ पा, तीर्थंकर पद योग्य बने॥
अल्प बुद्धि मैं आगम विद् ना, किन्तु भक्तिमय काव्य लिखा।
इस पूजा फल से रत्नत्रय, होवे मेरा आत्म सखा॥10॥

दोहा– यह विधान रचना करी, आगम युत सब जान।
इसकी महिमा अगम है, सुख निधियों की खान॥
जब तक रवि शशि लोक में, होता रहे विधान।
'गुप्तिनंदी' की भूल को, शोध पढ़ें विद्वान॥

1. 22-5-2001 ईस्वी संवत्, 2. 1-2-1998 ईस्वीं संवत् (सागवाड़ा, राजस्थान)

अर्घावली

(1) आचार्य श्री महावीरकीर्ति गुरुदेव का अर्घ

(शंभु छंद)

जल चंदन शालि पुष्पों का मैं सुन्दर थाल सजाता हूँ।
निज भाव मिला वसु द्रव्यों में अर्घों की माल चढ़ाता हूँ॥
समता सागर आचार्य प्रवर महावीरकीर्ति को वंदन है।
उन सम गुणशाली बनने को उनके गुण का अभिनंदन है॥

ॐ ह्रीं श्री समाधि सम्राट आचार्य महावीरकीर्ति गुरुदेव चरणेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(2) ग. गणधराचार्य श्री कुन्थुसागरजी

(शेर छंद)

आचार्य कुंथु सिंधु हैं वात्सल्य दिवाकर।
हम धन्य-धन्य आज उनको अर्घ चढ़ाकर॥
जिनधर्म का डंका बजाना जिनका है धरम।
भक्ति से भक्त बोलो वंदे कुंथुसागरम्॥

ॐ ह्रीं गणाधिपति गणधराचार्य श्री कुन्थुसागर गुरुदेव चरणेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(3) आचार्य श्री कनकनंदीजी

(अडिल्ल छंद)

वैज्ञानिक आचार्य गुरु की वन्दना।
अष्ट द्रव्य से भक्त करें नित अर्चना॥
ज्ञान दिवाकर कनकनंदी कविराज हो।
कोटि अनंतों नमन करें गुरुराज को॥

ॐ ह्रीं वैज्ञानिक धर्माचार्य श्री कनकनंदी गुरुदेव चरणेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(4) प्रज्ञायोगी आचार्य श्री गुप्तिनंदीजी

(तर्ज-मेरे सर पे...)

हे प्रज्ञायोगी गुरुवर दो प्रज्ञा का वरदान।
गुरुवर गुप्तिनंदी को बारम्बार प्रणाम-2
अष्ट द्रव्य से सजी धजी ये सुन्दर थाल निराली है।
गुरुवर तुमको अर्घ चढ़ाकर मिल जाती खुशहाली है॥
हे कुंथु गुरु के नंदन, हे धर्मतीर्थ की शान।
गुरुवर गुप्तिनंदी को बारम्बार प्रणाम-2

ॐ ह्रीं प्रज्ञायोगी आचार्य श्री गुप्तिनंदी गुरुदेव चरणेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प.पू. कविहृदय, आर्षमार्ग संरक्षक, ज्ञानदिवाकर, प्रज्ञायोगी

आचार्यश्री गुप्तिनंदी गुरुदेव की पूजा

रचियित्री : ग. आर्यिका क्षमाश्री माताजी

(शंभु छंद)

हे पंचमहाव्रत ! के धारी, हे बालयोगी ! मुनि को वन्दन।
हम हृदयकमल में बुला रहे, करने भावों से स्थापन॥
हो सौम्य शांत प्रतिभाधारी, गुण गाते हैं सब नर-नारी।
सन्निकट हमारे सदा रहें, बन जायें तुम सम अविकारी॥1॥

ॐ ह्रीं आचार्य श्री गुप्तिनंदी गुरुदेव ! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननम्। अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः ठः स्थापनं। अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्॥

निर्मल मन के धारी गुरु को, निर्मल जल चरण चढ़ाते हैं।
भावों की शुचिता पाने को, गुणगान तिहारा गाते हैं॥
गुरुवर की आरती पूजन से, मन में शांति हो जाती है।
गुरु गुप्तिनंदी की शरणा पा, जीवन में क्रांति आती है॥

ॐ ह्रीं आचार्यश्री गुप्तिनंदी गुरुदेव चरणेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा॥1॥

शीतल स्वभाव के धारी मुनि, हम चंदन से अर्चा करते।
संसार ताप से बचने को, गुरु शरण धर्म चर्चा करते॥
गुरुवर की आरती पूजन से, मन में शांति हो जाती है।
गुरु गुप्तिनंदी की शरणा पा, जीवन में क्रांति आती है॥

ॐ ह्रीं.....संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा॥2॥

रत्नत्रय धारी हैं गुरुवर, अक्षय पद को पाने वाले।
शुभ अक्षत चरण चढ़ाते हैं, बनकर तेरे हम मतवाले॥ गुरुवर.....॥

ॐ ह्रीं.....अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा॥3॥

पुष्पों से कोमल हे गुरुवर !, दुर्लभ संयम अपनाया है।
इस काम अरि से बचने को, चरणों में पुष्प चढ़ाया है॥ गुरुवर.....॥

ॐ ह्रीं.....कामबाणविनाशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा॥4॥

वश करने क्षुधावेदनी को, कर पात्र एक भुक्ती करते।
ऐसे गुरुवर के चरणों में, नैवेद्य चढ़ा दु:ख से बचते॥ गुरुवर.....॥

ॐ ह्रीं..... क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा॥5॥

अज्ञान अँधेरे में भटके, प्राणी को ज्ञान बताया है।
हम दीप चढ़ाते चरणों में, हमने ज्ञानी गुरु पाया है॥ गुरुवर.....॥

ॐ ह्रीं.....मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा॥6॥

आठों कर्मों से लड़ने को, असिव्रत तुमने है धार लिया।
यह धूप धूपायन में खेकर, हमने तेरा यशगान किया॥ गुरुवर.....॥

ॐ ह्रीं..... अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा॥7॥

अनुपम फल को पाने वाले, शिवपुर के राही हे गुरुवर।
हम सुफल चढ़ाकर पूज रहे, पाने मुक्ति पथ की ये डगर॥ गुरुवर.....॥

ॐ ह्रीं.....महामोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा॥8॥

गुप्तिनंदी गुप्तिधारी, हो मोक्षपुरी के अधिकारी।
हम अष्टद्रव्य का अर्घ चढ़ा, बन जायें संयम के धारी॥ गुरुवर.....॥

ॐ ह्रीं.....अनर्घपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥9॥

दोहा : गुरुवर के श्री चरण में, पावन जल की धार।
रंग-बिरंगे पुष्प के, अर्पित सुंदर हार॥

शांतये शांतिधारा... दिव्य पुष्पांजलिं क्षिपेत्

जाप्य मंत्र : ॐ ह्रीं गुप्तिनंदी सूरिभ्यो नमः। (9, 27 या 108 बार जाप करें)

जयमाला

दोहा : गुप्तिनंदी गुरुदेव जी, करते निज कल्याण।
जयमाला पढ़कर करें, गुरुवर का गुणगान॥

(तर्ज : झीनी-झीनी उड़ी रे गुलाल, चालो रे मंदरिया में..)

माँ त्रिवेणी के भाग्य जगे थे, कोमलचन्द घर वाद्य बजे थे।
खुशियाँ अपरम्पार॥ चालो रे...॥1॥

एक अगस्त उन्नीस सौ बहत्तर, गुरुवर तुमने जन्म लिया था।
हो गया मंगलकार॥ चालो रे...॥2॥

नगर भोपाल से चमका सितारा, छोड़ दिया गुरु ने घर बारा।
मच गया हाहाकार॥ चालो रे...॥3॥

वर्ष अठारह की लघुवय में, मुनिव्रत धार लिया गुरुवर ने।
हो गई जय-जयकार॥ चालो रे...॥4॥

सूरीपद गोम्मटगिरि पाया, भक्तों ने जयकार लगाया।
बने स्व पर सुखकार॥ चालो रे...॥5॥

छत्तिस गुण को पालन करते, निर्भय हो परिषह भी सहते।
करते पाप निवार॥ चालो रे...॥6॥

विविध कलायें इनको आती, जो जन-जन के मन को लुभाती।
हो जग के मनहार॥ चालो रे...॥7॥

काव्य रचा जिनभक्ति बनाते, प्रवचन से सबको हर्षाते।
करते जग उद्धार॥ चालो रे...॥8॥

नहीं किसी से मोहित होते, किन्तु सबका मन हर लेते।
हो जन मन आधार॥ चालो रे...॥9॥

हे गुरुवर ! हम तव गुण गायें, भव दु:खों से हैं घबराये।
कर दो बेड़ा पार॥ चालो रे...॥10॥

शरण आपकी हम नित पायें, अपना जीवन धन्य बनावें।
पावें मुक्तिद्वार॥ चालो रे...॥11॥

ॐ ह्रीं परम पूज्य आचार्यश्री गुप्तिनंदी गुरुदेव चरणेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा : अल्प बुद्धि मैं हूँ गुरु, 'क्षमा' करें गुरुराज।
शक्ति हीन हूँ हे गुरु !, दे दो शरणा आज॥

इत्याशीर्वादः दिव्य पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

समुच्चय अर्घ

(शेर छंद)

मैं पूजता अरिहंत सिद्ध सूरि को सदा।
उवज्झाय सर्व साधु और शारदा मुदा।।
गणधर गुरु चरण की नित्य अर्चना करूँ।
दश धर्म सोलह भावना की अर्चना करूँ।।1।।

अरहंत भाषितार्थ दया धर्म को भजूँ।
श्री तीन रत्न रूप मोक्ष धर्म को जजूँ।।
त्रैलोक्य के कृत्रिम-अकृत्रिम चैत्य को ध्याऊँ।
चैत्यालयों का ध्यान लगा अर्घ चढ़ाऊँ।।2।।

सब सिद्ध क्षेत्र तीर्थ क्षेत्र को भजूँ सदा।
औ तीन लोक के समस्त तीर्थ सर्वदा।।
चौबीस जिनवरों व बीस नाथ को ध्याऊँ।
जल आदि अष्ट द्रव्य ले पूर्णार्घ चढ़ाऊँ।।3।।

दोहा : जल आदिक वसु द्रव्य की, लेकर आये थाल।
महाअर्घ अर्पण करें, प्रभु को नमें त्रिकाल।।

ॐ ह्रीं द्रव्य सहित भावपूजा भाववंदना त्रिकाल पूजा त्रिकाल वंदना करे करावै भावना भावै श्री अरहंतसिद्ध आचार्य उपाध्यायसर्वसाधु पंच परमेष्ठिभ्यो नमः। प्रथमानुयोग करणानुयोग चरणानुयोग द्रव्यानुयोगेभ्यो नमः। उत्तमक्षमादि दशलाक्षणिकधर्मेभ्यो नमः। दर्शनविशुद्धयादि षोडशकारणेभ्यो नमः। सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्रेभ्यो नमः। विदेह क्षेत्रस्थ विंशति तीर्थंकरेभ्यो नमः। जल, थल, आकाश, गुफा, पहाड़, सरोवर, नगर-नगरी, ऊर्ध्वलोक, मध्यलोक, अधोलोक स्थित कृत्रिम-अकृत्रिम जिनचैत्यालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो नमः। पाँच भरत पाँच ऐरावत संबंधी तीस चौबीसी के सात सौ बीस जिनराजेभ्यो नमः। नंदीश्वर द्वीप संबंधी बावन जिनचैत्यालयेभ्यो नमः। पंचमेरू संबंधी अस्सी जिनचैत्यालयेभ्यो नमः। सम्मेदशिखर, कैलाशगिरी, चंपापुर, पावापुर, गिरनार, सोनागिर, मथुरा, गजपंथा, मांगीतुंगी,

तपोभूमि आदि सिद्धक्षेत्रेभ्यो नमः। जैनबद्री, मूढ़बद्री, देवगढ़, चंदेरी, पपौरा, हस्तिनापुर, अयोध्या, कुंथुगिरी, पुष्पगिरी, अंजनगिरी, धर्मतीर्थ, वरूर,राजगृही, तारंगा, चमत्कार, महावीरजी, पदमपुरा, तिजारा, अहिच्क्षेत्र, कचनेर, जटवाड़ा, पैठण, गोम्मटेश्वर, चंवलेश्वर, बिजौलिया, चांदखेड़ी, पाटन, कुण्डलपुर, अणिन्दा वृषभदेव णमोकार ऋषि तीर्थ आदि अतिशय क्षेत्रेभ्यो नमः। श्री चारण ऋद्धिधारी सप्त परमर्षिभ्यो नमः। भूत-भविष्यत-वर्तमान काल संबंधी चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो नमः।

ॐ ह्रीं श्रीमंतं भगवंतं कृपावंतं श्री वृषभादि महावीरपर्यंतं चतुर्विंशति तीर्थंकर परमदेवं आद्यानां आद्ये जम्बूद्वीपे भरत क्षेत्रे आर्यखण्डे भारत देशे..... प्रान्ते-नगरे.....मासानांमासे..... मासे.....पक्षे.....तिथौ.....वासरे मुनि आर्यिकाणां श्रावक श्राविकाणां, क्षुल्लक, क्षुल्लिकानां, सकल कर्मक्षयार्थं (जलधारा) जलादि महार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

(27 श्वासोच्छवास में 9 बार णमोकार मंत्र पढ़ें।)

शांतिपाठ (हिन्दी)

चौपाई

(शांतिपाठ बोलते समय पुष्पाञ्जलि क्षेपण करते रहें)

शशि सम निर्मल जिन मुखधारी, शील सहस्र गुणों के धारी।
लक्षण वसु शत त्रयपदधारी, कमल नयन शांति सुखकारी।।1।।

(नोट-यहाँ शांतिधारा करें।)

शांतिनाथ पंचम चक्रीश्वर, पूजें तुमको इन्द्र मुनीश्वर।
शांति करो हे शांति ! जिनेश्वर, जगत् शांतिहित नमते गणधर।।2।।

आठों प्रातिहार्य मनहारी, ये जिन वैभव हैं सुखकारी।
तरु अशोक पुष्पों की वर्षा, दिव्य ध्वनि सिंहासन रवि सा।।3।।

छत्र चँवर भामंडल चम-चम, देव-दुंदुभि बजती दुम-दुम।
शांति करो त्रय जग में स्वामी, शीश झुकाता तुमको स्वामी।।4।।

आप अनंत चतुष्टय धारी, मंगल द्रव्य आठ अघहारी।

सर्व विघ्न प्रभु आप नशाओं, हे शांति प्रभु ! शांति दिलाओ ॥5॥
पूजक राजा शांति पायें, मुनि तपस्वी शांति पायें।
राष्ट्र नगर में शांति छाये, शांति जगत् में हे जिन ! आये ॥6॥

पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् (9 बार णमोकार मंत्र का जाप करें।)

(दोनों हाथ में चावल या पुष्प लेकर करबद्ध हो विसर्जन पाठ पढ़ें मंत्र के साथ पुष्पाञ्जलि करें)

विसर्जन पाठ

(दोहा)

जाने अनजाने हुई, प्रभु पूजा में चूक।
मैं अज्ञान अबोध हूँ, क्षमा करो सब चूक ॥1॥
जानूँ नहीं आह्वान मैं, पूजा से अनजान।
ज्ञान विसर्जन का नहीं, क्षमा करो भगवान ॥2॥
अक्षर पद और मात्रा, व्यंजनादि सब शब्द।
कम ज्यादा कुछ कह दिया, छूट गये हों शब्द ॥3॥
मिथ्या हो सब दोष मम, शरण रखो भगवान।
तव पूजा करके प्रभु, बन जाऊँ भगवान ॥4॥

ॐ आं क्रौं ह्रीं अस्मिन् नित्य पूजाभिषेक विधाने आगच्छत सर्वे देवाः स्वस्थाने गच्छतः-3ज:-3स्वाहा।

इत्याशीर्वादः दिव्य पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

(9 बार णमोकार का जाप करें।)

(नोट-दीपक लेकर श्रीजी की मंगल आरती करें।)

(यह दोहा बोलते हुए आशिका ग्रहण करें)

दोहा : गंध पुष्प प्रभु रज यही, इसको शीश झुकाय।
पुष्प लिये आह्वान के, अपने शीश लगाय॥

(तुभ्यम् नमस्त्रि बोलते हुये भगवान को गुरु को नमस्कार करें।)

***

आरती

1. (तर्ज : मन डोले मेरा तन डोले...)

आरती कर लो रत्नत्रय की, सब पाओ मोक्ष महान् रे।
हम आरती गायें दीपक ले।

रत्नत्रय निधी के स्वामी हो तीर्थंकर पद दानी।
मोह तिमिर को हरने वाले नव लब्धि के खानी- हो प्रभु जी नव-2
केवलज्ञानी, अर्न्तध्यानी, सम्यग्दर्शन दातार रे॥ हम आरती...।

सम्यग्ज्ञान ज्ञानधर यति की मनहर भक्ति रचायें।
उनकी केवलज्ञान ज्योति से प्रज्ञादीप जलायें- हो प्रभु जी प्रज्ञा-2
जिनगुण ध्यायें, आरती गायें, ले मंगल वाद्य अपार रे॥ हम आरती...।

सम्यक् संयम तप व्रत गुण को श्रद्धा से अपनायें।
'गुप्तिनंदी' रत्नत्रय पाकर भवसागर तिर जाये- हो प्रभु जी भव-2
शिवराह चलें, शिवराज करें, हम पायें शिवपुर द्वार रे॥ हम आरती...।

2. (तर्ज : माईन-माईन...)

रत्नत्रय की आरती करने, हम सब मिलकर आये।
दर्शन ज्ञान चरण के द्वारा, मोक्ष महल पा जायें॥ भगवन होऽऽ-2
वीतराग सर्वज्ञ हितैषी, हो प्रभु केवलज्ञानी।
भव्यों को सन्मार्ग दिखाते, समोशरण के स्वामी॥
ज्ञाता दृष्टा सिद्ध प्रभु की, आरती हम करते हैं।
जिनगुण के अनुरागी बनकर, इनके गुण यजते हैं॥ भगवन होऽऽ-2
मोक्ष महल की पहली सीढ़ी, सम्यग्दर्शन धारें।
अष्ट अंग युत इनसे अपने, दुःख दोष परिहारें॥

देव-गुरु-आगम की भक्ति, भव बंधन छुड़वाये।
इनकी शरणा पाकर हम सब, क्षायिक पद पा जायें॥ भगवन होऽऽ-2

ज्ञान बिना इस जग में हमने, गोते खूब लगायें।
जगमग दीपों की थाली ले, ज्ञान गीत हम गायें॥
स्वपर प्रकाशी दीपक लेकर, केवल ज्योति जलायें।
द्वादशांग की आरति करके, भवसागर तिर जायें॥ भगवन होऽऽ-2

राग द्वेष को दूर भगाने, संयम धर को ध्यायें।
तेरह विध संयम को पाले, आतम गुण प्रगटायें॥
नर तन रतन अमोल मिला है, इसे न व्यर्थ गंवाये।
'राजश्री' चरणों में आकर, रत्नत्रय निधि पायें॥ भगवन होऽऽ-2

आचार्य श्री गुप्तिनंदी गुरुदेव

(तर्ज : इंजन की सीटी में...)

सगला चालो रे भाया मंदिर होले होले,
गुरुवर की भक्ति में म्हारो-मन डोले-2

बाल ब्रह्मचारी हैं गुरुवर, सौम्यमूर्ति के धारी।
इनके दर्शन करने आवे, मिल के सब नर-नारी॥ सगला.....

बाल वय में दीक्षा धारी, वरने मुक्ती नारी।
सकल परिग्रह त्याग बने, जो वेष दिगम्बर धारी॥ सगला.....

ज्ञान-ध्यान में रत जो रहते, परिषह को भी सहते।
कर्म विजेता बनने को जो, उपसर्गों को सहते॥ सगला.....

बाल-युवा इनके मन भावें, शिक्षा इनसे पावें।
धर्मनीति की शिक्षा देकर, जन-मन को हर्षावे॥ सगला.....

भक्तियोग के रस में रमते, औरों को रमवाते।
भौतिक रस के दीवानों को, आतमरस पिलवाते॥ सगला.....

नहीं किसी से पक्षपात है, समता रस के धारी।
'क्षमा' करो सब दोष हमारे, आये शरण तिहारी॥ सगला.....

(तर्ज : मैं तो भूल...)

हम तो आरती उतारे गुरु राज हमें मुक्ति द्वारा मिले।
पाया हमनेऽऽऽ-2 गुरु का साथ हमें मुक्ति द्वारा मिले॥

कुन्थु गुरु से मुनि पद को धारा।
कनकनंदी से ज्ञान विस्तारा॥ हो-ऽऽ
तुमने छोड़ाऽऽऽ-2 परिग्रह पाप॥ हमें मुक्ति....

काव्य रचाते हो पूजा बनाते।
धर्मोपदेश से मन को लुभाते॥ हो-ऽऽ
करे मुनिवरऽऽऽ-2 जगत उद्धार॥ हमें मुक्ति....

जिनवाणी माता का संदेश न्यारा।
करते हैं गुरुवर उसका प्रचारा॥ हो-ऽऽ
करें जग में-2 धरम का प्रचार॥ हमें मुक्ति....

सुबह-शाम गुरुवर की आरती कीजे।
यश कीर्ति सुख और आनन्द लीजे॥ हो-ऽऽ
पाये 'राजश्री'ऽऽऽ-2 मुक्ति का द्वार॥ हमें मुक्ति....

***

रत्नत्रय विधान मंडल

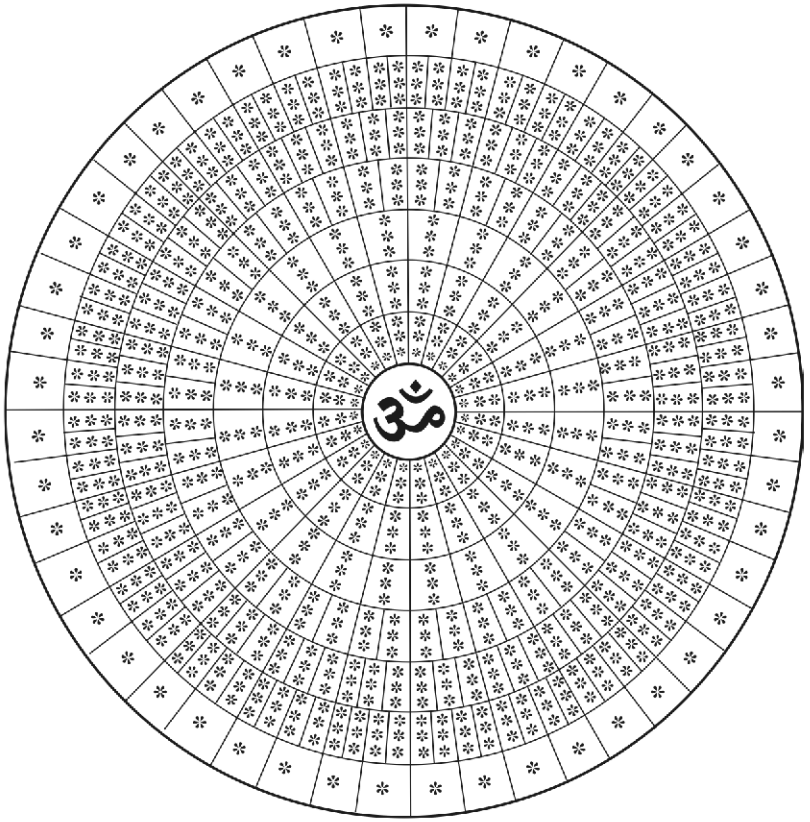

इसमें 7 वलय हैं रत्नत्रय के सम्पूर्ण 917 अर्घों में से 1 वलय में 24 अर्घ चढ़ाना है।

श्री धर्मतीर्थ प्रकाशन

अतिशय क्षेत्र धर्मतीर्थ, जिला औरंगाबाद (महाराष्ट्र) द्वारा

आर्ष मार्ष संरक्षक, कवि हृदय, प्रज्ञायोगी, दिगम्बर जैनाचार्य

श्री गुप्तिनंदी गुरुदेव ससंघ का प्रकाशित साहित्य

1. श्री रत्नत्रय आराधना
2. श्री लघु रत्नत्रय आराधना
3. श्री वृहद् रत्नत्रय विधान
4. श्री लघु रत्नत्रय विधान
5. श्री रत्नत्रय भक्ति सरिता
6. श्री रत्नत्रय संस्कार प्रवेशिका (भाग 1)
7. श्री रत्नत्रय संस्कार प्रवेशिका (भाग 2)
8. श्री वृहद गणधर वलय विधान
9. लघु गणधर वलय विधान
10. श्री वृहद नवग्रह शान्ति विधान
11. श्री सूर्यग्रह शान्ति विधान (श्री पद्मप्रभु आराधना)
12. श्री चन्द्रग्रह शान्ति विधान (श्री चन्द्रप्रभु आराधना)
13. श्री मंगलग्रह शान्ति विधान (श्री वासुपूज्य आराधना)
14. श्री बुधग्रह शान्ति विधान (श्री शांतिनाथ आराधना)
15. श्री गुरुग्रह शान्ति विधान (श्री आदिनाथ आराधना)
16. श्री शुक्रग्रह शान्ति विधान (श्री पुष्पदंत आराधना)
17. श्री शनिग्रह शान्ति विधान (श्री मुनिसुव्रतनाथ आराधना)
18. श्री राहूग्रह शान्ति विधान (श्री नेमिनाथ आराधना)
19. श्री केतुग्रह शान्ति विधान (श्री पार्श्वनाथ आराधना)
20. धर्मसूर्य श्री पद्मप्रभ-वासुपूज्य-नेमिनाथ विधान
21. श्री नवग्रह शान्ति चालीसा (बड़ी)
22. श्री नवग्रह शान्ति चालीसा (छोटी)
23. श्री पंचकल्याणक विधान
24. श्री त्रिकाल चौबीसी (लक्ष्मी प्राप्ति) रोट तीज विधान
25. श्री तीस चौबीसी (महालक्ष्मी प्राप्ति) विधान
26. श्री सर्व तीर्थंकर विधान
27. श्री विजय पताका विधान
28. श्री सम्मेद शिखर विधान
29. श्री पंच परमेष्ठी (सर्व सिद्धि) विधान
30. श्री विद्या प्राप्ति विधान
31. श्री श्रुत स्कन्ध विधान
32. श्री तत्त्वार्थ सूत्र विधान
33. श्री भक्तामर विधान
34. श्री कल्याण मंदिर विधान
35. श्री एकीभाव विधान
36. श्री विषापहार विधान
37. श्री णमोकार विधान
38. श्री जिन सहस्त्रनाम विधान
39. श्री चौबीस तीर्थंकर, लक्ष्मी प्राप्ति बाहुबली-धर्मतीर्थ एवं आचार्य गुप्तिनंदी विधान

40. श्री चन्द्रप्रभु विधान
41. श्री शान्तिनाथ विधान
42. श्री सर्व दोष प्रायश्चित्त विधान
43. श्री रविव्रत विधान
44. श्री पंचमेरु-दशलक्षण-सोलहकारण विधान
45. श्री नंदीश्वर विधान
46. श्री चन्दन षष्ठी व्रत विधान
47. आचार्य शांतिसागर विधान
48. आचार्य श्री कुन्थुसागर विधान
49. आचार्य श्री कनकनंदी विधान
50. आचार्य श्री गुप्तिनंदी विधान
51. श्री छयानवे क्षेत्रपाल विधान
52. श्री भैरव पद्मावती विधान
53. श्री धर्मतीर्थ आरती संग्रह
54. सावधान (काव्य संग्रह)
55. महासती अंजना
56. कौडियो में राज्य
57. महासती मनोरमा
58. महासती चन्दनबाला
59. विलक्षण ज्ञानी (आचार्य श्री कनकनंदी जी चरित्र कथा)
60. वात्सल्य मूर्ति (गणिनी आर्यिका राजश्री माताजी स्मारिका)
61. धर्मतीर्थ प्रवेशिका (भाग-1)

सी.डी.

1. श्री सम्मेदशिखर सिद्ध क्षेत्र पूजा (सी.डी.)
2. श्री रत्नत्रय आराधना व महाशांति धारा (डी.वी.डी.)
3. श्री नवग्रह शांति चालीसा (सी.डी.)
4. श्री बाहुबली पूजा (सी.डी.)
5. ये नवग्रह शांति विधान है (सी.डी.)
6. गुप्तिनंदी गुणगान (सी.डी.)
7. वात्सल्यमूर्ति माँ राजश्री (डी.वी.डी.)
8. मेरे पारस बाबा (डी.वी.डी,)
9. देहरे के चन्दा बाबा (एम.पी. 3)
10. श्री कुन्थु महिमा (डी.वी.डी.)
11. कनकनंदी गुरुदेव तुम्हारी जय हो (एम.पी.3)
12. गुप्तिनंदी अभिवन्दना (डी.वी.डी.)
13. जयति गुप्तिनंदी डाक्यूमेन्ट्री (डी.वी.डी.) I,II
14. श्री गुप्तिनंदी संघ हिट्स
15. श्री रत्नत्रय जिनार्चना

* * *

श्री वृहद् रत्नत्रय विधान